लेखक - परिचय

"अरमान"
1-6-1981

नाम—उदय सरन शर्मा

उपनाम—"अरमान"

जन्म स्थान—मुन्डिया राजा

निवास स्थान—क़स्बा बिलारी, ज़िला मुरादाबाद

शिक्षा—बी० ए० तक, आर० डी० एस० लन्दन,
आई० जी० डी० बाम्बे

व्यवसाय—कृषि और चिकित्सा

आयु—४९ वर्ष (७ जून, १९३२)

प्रकाशित पुस्तकें—

काव्य—राज़ोनियाज़, साज़ो आवाज़, अरमाने दिल, आइने

उपन्यास—मुसलमान का मन्दिर, आशीर्वाद

कहानी संग्रह—मानसरोवर

अप्रकाशित पुस्तकें—

काव्य—कर्मेती, छत्रपति शिवाजी, श्रीमहाभारत, ठोकरें

उपन्यास—कुआंरी माँ, डकैत, इशारा, ज़माना,
हक़परस्ती, अन्जाम, सत्कार, बेगाना, तलवार
अभागा, जलता देश झूलसती धरती।

Ky 1 69

KR1 676

मानसरोवर

(कहानी - संग्रह)

□

डा० उदय सरन 'अरमान'

SECRETARY
Kashmir Research Institute
Brein Srinagar Kashmir-19112.

□

अदीब पब्लिकेशन्स, कुन्दरकी
मुरादाबाद

प्रकाशक :
अदीब पब्लिकेशन्स
कुन्दरकी (मुरादाबाद)

[सर्वाधिकार लेखक के आधीन]

प्रथम संस्करण : १९८१

मूल्य : पन्द्रह रुपये

मुद्रक ।
प्रभायन प्रिंटर्स
गांधी नगर, मुरादाबाद

समर्पण

अपने परम स्नेही मित्र

श्री मुकुट सिंह जी

तथा

श्रीमती ज्योति जी

(३६ हेड स्टोन रोड,
हैरो एच. ए. आई. २ पी. ई., लन्दन)

को सप्रेम समर्पित ।

—'अरमान'

SECRETARY
Kashmir Research Institute
Bren Srinagar Kashmir-19112

कहानीकार और उसकी कहानियाँ : एक दृष्टि

एक तत्व, एक संवेदना, एकार्थी प्रेरणा, एक प्रयोजन, एक स्वरूप तथा एक प्रकार की सर्वत्र मनोहरता—कहानी की विशेषता है। एक सफल कहानीकार जीवन की हर छोटी घटना के भीतर से—पिंड में ब्रह्माण्ड के समान—सम्पूर्ण जीवन की सार्थकता का अनुभव करता है। पिछले दिनों लोगों ने कहानी में जीवन-सत्य तथा भाव-बोध को देखना शुरू कर दिया था। लिहाज़ा हम कहानी को 'कथानक', 'चरित्र', 'वातावरण', 'भावात्मक-प्रभाव', 'विषय-वस्तु' आदि अलग-अलग अवयवों के रूप में देखने के अभ्यस्त हो गए थे। हम यह भूल गए कि कहानी अनुभूति की एक 'इकाई' भी है। हमने कहानी के सत्य को ही नहीं, वरन् कहानी के 'कहानीपन' की समझ खो दी। कहानी के कहानीपन की सफलता का अर्थ है उसकी अर्थवत्ता या सार्थकता। नए कहानीकार कहानी की इस शक्ति से भली भाँति परिचित हैं।

डा० उदय सरन 'अरमान' ऐसे ही सफल एवम् सशक्त नए कहानीकारों में अग्रणी हैं जिन्हें न परिवेश बाँध पाया, न संस्कार; जो न तो शैली-शिल्प में जकड़े हैं, न भाषा की ज़ंजीरों में। मूलत: उर्दू के लेखक और शायर होने के कारण अभिव्यक्ति में वही रवानगी, वही नफ़ासत और वही पैनापन है जो एक सफल उर्दू लेखक में होनी चाहिए।

प्रस्तुत कहानी संग्रह उर्दू में प्रकाशित 'मानसरोवर' से अनुवादित है। यही कारण है कि कहानियों की भाषा में उर्दू वाला बाँकपन है। डा० अरमान की कहानियों की इस पुस्तक का अँग्रेजी अनुवाद भी प्रकाशन में है जिसके अनुवादक हैं श्री गुरसरन लाल जी 'अदीब' लखनवी, रिटायर्ड प्रिंसिपल, राम रतन इन्टर कालेज, बिलारी।

डा० उदयसरन 'अरमान' की अनेक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं जिनसे वे न केवल एक सफल कवि तथा उपन्यासकार के रूप में उभर कर सामने आए हैं वरन् एक सशक्त कहानीकार की सभी सम्भावनाएँ उनमें साकार हो उठी हैं।

इकहरा वदन, सौम्य सस्मित आकृति, निरुद्विग्न स्नेहिल दृष्टि, श्वेत झकाझक वेशभूषा जिसमें अधिकतर शेरवानी और चूड़ीदार पाजामा—इन सबके साथ ग़ज़ब की

फुर्ती । ऐसे हैं डा० अरमान । प्रातः सूर्योदय से लेकर सारे सारे दिन और देर रात तक, कभी कभी रात भर अपने क्लीनिक में मरीज़ों की भीड़ में सहज थिरकते, स्वास्थ्य-दान करते डा० अरमान को देखते ही आँखें शीतल हो जाती हैं । कोई आडम्बर नहीं, कोई पूर्वाग्रह नहीं, कोई व्यसन नहीं । समझ में नहीं आता कि ऐसा 'दास कबीर की चादर' सा निर्लिप्त व्यक्तित्व दिन रात की घोर व्यस्तता के बाद साहित्य-साधना किस समय कर लेता है ? साधना भी ऐसी वैसी नहीं, बल्कि बहुमुखी ।

'मानसरोवर' की कहानियों को पढ़कर लगता है कि जीवन के प्रत्येक प्रसंग में निहित अन्तर्विरोध को पकड़कर लेखक ने सार्थकता प्रदान की है। जो छोटी-छोटी बातें आम रचनाकारों के लिए महत्वहीन और अपर्याप्त हैं, उन्हीं को डा० अरमान ने पर्याप्त मान लिया है और फिर उनके भीतर से उन्होंने कहानी के कथानक की विभिन्न सिम्तों का विकास किया है । इस दिशा में डाक्टर साहब कभी कभी इतने अन्तर्गूढ़ हो जाते हैं कि आदि से अन्त तक केवल एक बात से बातें निकलती चली जाती हैं और बातों में से बात का यह निकलते जाना ही इतना मनोरंजक होता है कि एक कहानी बन जाती है । यह कौशल वही दिखा सकता है, जिसके पास बातचीत की उत्कृष्ट कला हो और साथ ही भाषा की सहजता तथा बारीकियाँ भी । डा० उदय सरन 'अरमान' ऐसी कहानियाँ देने के लिए बधाई के पात्र हैं ।

मुझे आशा है कि 'मानसरोवर' की कहानियों में अभिव्यक्त स्वस्थ सामाजिक शक्ति परिवर्तन और परिशोधन के लिए ज़ोरदार साहित्यिक शस्त्र का काम करेगी, साथ ही सुधी पाठकों का मनोरंजन तो होगा ही ।

"प्रभायन"

दिनांक : २६-६-१६८१

४१-ए, गांधी नगर, मुरादाबाद

अफ़साना निगार डा० अरमान

मुन्शी प्रेमचन्द एक सच्चे और अच्छे फ़नकार थे । उनके बाद और भी अफ़साना-नवीस आये जो बहुत मशहूर हुये । उनके बाद के ही (ग्रामीण) माहौल पर जो फ़नकार फीज़माना अपने अफ़सानों और कहानियों के ज़रिये सामाजी वेदारी (जागृति) लाना चाहते हैं उनमें डा० उदय सरन अरमान का नाम सरेफ़हरिस्त न सही लेकिन एक जाना पहचाना नाम ज़रूर है । वह एक बासलाहियत (नेक) अफ़साना निगार होने के अलावा सुलझी हुई शाइरी भी करते हैं । उर्दू के पुरआशोब (दुखी) दौरे में अपनी मुआशी मसरूफ़ियात (जीविकोर्पाजन की व्यस्तताओं) के बावजूद अच्छे अदब (साहित्य) की तख्लीक़ (खोज) करना एक अज़ीम ईसार (बलिदान) से कम नहीं । वह उर्दू हिन्दी दोनों ही भाषाओं में रचना करते हैं ।

डा० साहब के अफ़सानों और कहानियों में वाक़आत (घटनायें) और ख़यालात ऐसे चौंका देने वाले होते हैं कि क़ारी (पाठक) की दिलचस्पी अफ़सानों से बरक़रार रहती है । फ़िरक़ा वाराना तज़ाद (आपसी दुश्मनी) मुआशी बदहाली, समाजी बद-उनवानी (सामाजिक अस्तव्यस्तता) ज़िना बिलजब्र (बलात्कार) वग़ैरह ऐसे मौज़ूआत (विषय) हैं जिन पर डा० साहब ने जी खोल कर तवसरा किया है और इन समाजी इमराज़ (रोग) की तशख़ीस (निदान) फ़रमाकर अपनी नव्वाज़ी (नाड़ी परीक्षण) का सुबूत भी दिया है । इनके अफ़सानों के अफ़राद (व्यक्ति-पात्र) और किरदार (चरित्र) पाक व साफ़ हैं । इनमें किसी तरह का उलझाव व इन्तिशार (विस्तार) नहीं है । डा० साहब ने गांव की सीधी साधी ज़िन्दगी और साफ़ माहौल में परवरिश पाई है । इसलिये गांव के माहौल को मन व अन (यथार्थ) पेश करने में वह कामयाब हैं ।

जो कुछ भी वह देखते हैं सुफ़ह-ए-कुरतास (काग़ज़ के पृष्ठ) पर हक़ीक़त के लवादे में लपेट कर रख देते हैं । उनके किरदार अपने आप में बेख़ुद व सरशार होते हैं लेकिन समाज में पैदा होने वाली खराबियों की तरफ़ से ग़ाफ़िल नहीं होते हैं । उनके किरदार ख़्वाह वह “तपस्या का फल” की महतरानी पारवती हो या सुरेश बाबू । “गांव की इज़्ज़त” का ज़मीर अहमद हो या किरदार अली । “पफ़” का लंगड़ा हो या रोना या “श्रम और पूजा” का शकूरा हो या भीका-तमाम किरदार जीते जागते किरदार हैं ।

मुझे उम्मीद है कि डा० साहब का यह अफ़सानवी ‘मज्मूअः मानसरोवर’ हलक़ः ए अदब में (साहित्यक क्षेत्र) मक़बूल होकर मुमताज़ हैसियत हासिल करेगा ।

—ख़लील अन्जुम

ता० २८-३-१९८१

आर्डिनेन्स फ़ैक्ट्री, अम्बाझरी,
नागपुर (महाराष्ट्र)

दो शब्द

डा० उदय सरन अरमान के अफ़साने आजकल के बेमानी लिखने वालों से कहीं बेहतर हैं । आपने मुन्शी प्रेमचन्द की राह अख़्तियार की है और हमारे समाज के लिये आप के अफ़साने मशअले राह (रास्ते का दीप) हैं । आप के अफ़साने ज़ियादा हसीन, कारामद, मुफ़ीद और सबक़ आमोज़ (ज्ञानवर्धक) हैं ।

— विद्या प्रकाश "सरवर" तोंस्वी

ता० २५–१२–१९८०

एडीटर "शान-ए-हिन्द"
फ़्लैट नम्बर ८, अन्सारी मार्केट,
दरिया गंज, नई दिल्ली ११०००२

* * *

हज़रत-ए-अरमान ने मक़ाला, ड्रामा, नाविल, कहानी सभी कुछ लिखा है । "मानसरोवर" आप के अफ़सानों का मजमूआ है । आपकी अफ़साना निगारी ऐसी रिवायात जमा कर रही है जो अपने हमसरों (समकालीन) और बाद में आने वालों के लिये ख़िज़्र-ए-तरीक़व (पथ प्रदर्शक) मशअल-ए-राह (मार्ग दीप) साबित होगी । आपके अफ़सानों में किरदारों (पात्रों) की सरगर्मियां, जज़्बात व एहसासात और ख़यालात की पाकीज़गी (पवित्रता) क़ाबिल-ए-सताइश (प्रशंसनीय) है ।

उम्मीद है कि शाइक़ीन-ए-अदब (साहित्य प्रेमी) मुसन्निफ़ (लेखक) की सई (प्रयत्न) को मशकूर बनायेंगे ।

—"रतन" पिन्डौरवी

ता० १४–५–१९८१

ग्राम पिन्डौर, डा० घुमान,
ज़िला गुरदासपुर, (पंजाब)

* * *

अगरचे डा० उदय सरन अरमान उर्दू अफ़साना निगारों के कबीले में नोवारिद (नवागन्तुक) हैं लेकिन वह अपने तजुर्बात और मुशाहिदात (निरीक्षण) की बिना पर बिलकुल नये हरगिज़ नहीं हैं ।

उदय सरन अरमान की अफ़साना निगारी की अहमियत ज़िन्दगी के आम मसाइल और उनके फ़नकाराना बरताव में मुज़मर (समाविष्ट) है ।

—रामलाल

ता० ९–१–१९८१

११/३९ मलटी स्टोरी,
चार बाग़, लखनऊ

अनुक्रमणिका

१ तपस्या का फल ९
२ चप्पल की शरारत १५
३ शरीफ़ रज़ील २०
४ पफ़ २४
५ गाँव की इज्जत ३०
६ बदले की भावना ३७
७ इन्सान का दिल ४७
८ ऐसी रोटी ५५
९ नीम हकीम ६२
१० श्रम और पूजा ७३
११ चरित्र विक्रेता ८१
१२ पाप का परिणाम ९१
१३ मर्द की बात १७७
१४ मन का निर्णय १२४
१५ मैं तो कह दूँगी १३१
१६ मसोसा हुआ मन १४१
१७ मुँह की निकली १४६
१८ इन्सानियत का खून १५४
१९ तेल वाले १५९
२० सच्ची अदालत १६३
२१ चोट १७३

"तपस्या का फल"

"महतरानी, तुमने यह क्या भेस बना रक्खा है ? बुढ़ियों की तरह फटी, पुरानी, मैली कुचैली धोती पहने हुये हो। अभी तो तुम्हारी शादी को एक ही साल हुआ है। यही खाने पहनने के दिन हैं।" सुरेश ने आँखों में आँखें डाल कर कहा।

"बाबू जी हम लोग गरीब हैं। बन ठन कर कैसे रह सकते हैं ? ऐसे ही खैरियत से वक्त कट जाये तो बहुत है।" महतरानी ने सिर पर धोती सँभालते हुये कहा। "हमारी महतरानी इस तरह रहेगी तो हमारी बदनामी न होगी ? लो यह पचास रुपये का नोट और एक अच्छी सी धोती ख़रीद लेना।" महतरानी यह सुनकर और नोट देख कर ठिठक गई। उसने हाथ आगे नहीं बढ़ाया। इस पर सुरेश ने फिर कहा "लो बहन जी शर्माती क्यों हो ?"

'बहन जी शर्माती क्यों हो' यह वाक्य उसके दिलोदिमाग़ में गूंजा। उस सहायता के पीछे उसे ग़लत मक़सद नज़र नहीं आया और उसने नोट ले लिया। दूसरे घरों को कमाती हुई अपने घर आ गई। वह उस समय बिना कुछ कहे सुने रुपये ले तो आई परन्तु उसकी आत्मा बेचैन रही, रात भर उसके दिलोदिमाग़ पर वह नोट मनों वज़नी बना रहा। तरह तरह की बातें उसके दिमाग़ में आ रही थीं। वह जितना सोचती उतनी ही परेशान हो हो जाती। आख़िरकार उसने यह फ़ैसला किया कि उसे यह नोट नहीं लेना चाहिये था। सुबह होते ही वह सबसे पहले सुरेश के घर कमाने गई और नोट वापस करते हुये यों कहने लगी—

"बाबू जी यह लो अपनी अमानत।"

"कैसी अमानत ? मैंने तो यह नोट तुम्हें इम्दाद के तौर पर दिया था।"

"मगर मेरी सास ने इस इम्दाद को मंजूर नहीं किया। वह बोली कि अगर देना ही था तो सुरेश बाबू की माँ देतीं।"

"तुमने इतनी सी बात अपनी सास से भी कह दी ?"

"ऐसी बातें बड़े बूढ़ों को बताने ही में घर की इज्जत है।"

यह सुनते ही सुरेश चुपचाप आगे बढ़ा और सहन पार करके बाहर के दरवाज़े की कुन्डी लगा दी। दरवाज़े की कुन्डी लगाने का क्या मक़सद हो सकता है ? पार्वती ख़ूब समझ गई। मगर सुरेश तो कल बहन जी कह रहा था, तो फिर आज वह ऐसा पाप कैसे कर सकता है ? इस प्रकार के विचार पार्वती के दिमाग़ में आये। सुरेश ने आते ही उसके हाथ से नोट थामने की बजाय उसकी कलाई कस के पकड़ ली और कमरे की तरफ़ खींचना शुरू कर दिया। "यह क्या कर रहे हो बाबू जी" पार्वती ने हाथ छुड़ाते हुये तलखी से कहा।

"एक रात रखे गये रुपयों का सूद वसूल नहीं करूँगा क्या ?

"तुम तो कल बहन जी कह रहे थे और आज मेरे साथ यह.........।" दाँत पीसते और पीछे को ज़ोर लगाते हुए उस अबला ने कहा।

"वह तो ज़ुबान से कहा था, दिल से नहीं।"

"अब समझी कि मर्दों की ज़ुबान दिल से अलग होती है।" यह कह कर पार्वती पूरे ज़ोर से ख़ुद को आज़ाद कराने में लग गई। सुरेश भी समझ रहा था कि वह भाग कर दरवाज़ा खोल कर बाहर निकल जाने की कोशिश में छटपटा रही है। उसने पार्वती को दोनों हाथों से ऊपर उठा लिया और कमरे के अन्दर उसे ले ही जा रहा था कि आवाज़ आई "सुरेश दरवाज़ा खोलो" (माँ की आवाज़ है यह तो) सुरेश ने फ़ौरन भांप लिया और उसको अलग कर दिया। दरवाज़ा खुलते ही माँ अन्दर दाखिल हुई और पार्वती बिजली की सी तेज़ी से बाहर हो गई। "माँ इतनी जल्दी कैसे आ गईं ?"

"जल्दी जल्दी में पूजा का सामान यहीं रह गया था, उसे लेने आई हूँ।" माँ ने सादगी से कहा। सुरेश को क्या पता था कि उसकी माँ ने बाहर खड़े खड़े सारा तमाशा किवाड़ों की दराज़ों में से देख लिया है। माँ बिना कुछ भेद खोले और सख़्त सुस्त कहे पूजा का सामान लेकर मन्दिर चली गई। अक्सर मायें बेटे के ऐबों पर पर्दा डाल ही देती हैं।

पार्वती ने यह घटना सास को नहीं बताई थी, मगर बनावटी मुस्कान दिल की उदासी को छुपा न सकी। सास कुछ पूछे बिना ही सन्देहास्पद दृष्टि से देख रही थी। मगर उसने जब्त से काम लिया। इस घटना के तीन चार दिन बाद सास ने बहू से

पूछा "क्यों बेटी पहले तो काम करने में चार पांच घंटे लग जाते थे लेकिन अब तीन चार दिनों से तो बहुत जल्दी आ जाती है, क्या बात है ?"

'माता जी सारे ठिकाने मैंने पड़ोस की एक महतरानी को गिरवी रख दिये हैं। अब मैं केवल तीन घरों का काम करती हूँ पुरोहित, गंगू नाई और नूर मुहम्मद का।"

"तूने अच्छी आमदनी के घर गिरवीं क्यों रख दिए ? मुझ से पूंछा तक नहीं ? ये लोग समय पर हमारी सहायता करते हैं ? अब यह भी रास्ता बन्द हो गया। ब्याह में क़र्ज़ हो गया था, वह अदा नहीं हुआ है, अब कैसे होगा ?"

"माँ जी, एक रास्ता बन्द होता है तो भगवान दूसरा खोल देता है। मैं कम आमदनी में जी लूंगी मगर आबरू बेच कर अधिक रकम नहीं लूँगी।"

यह सुन कर पार्वती की सास ने बहू का हसीन चेहरा देखा, फिर उस के सुन्दर सुडौल मांसल शरीर पर नज़र डाली, वह पल भर को मुस्कराई और फिर चुप हो गई। वह सब बातें समझ गई और बहू से कहीं भी काम करने को नहीं कहा। न जाने क्या क्या सोच रही थी उसकी सास ?

"माता जी क्या सोच रही हो ?" पार्वती ने सास की ख़ामोशी पर प्रहार किया।

"बेटी कितनी ही बातें ऐसी हैं जो तुझको बताना नहीं चाहती लेकिन वह सब बातें छुपाने से भी कुछ फ़ायदा नहीं है। तुझे मालूम है कि तेरा पति शराब पीता है। बैंक की चौकीदारी में जो मिलता है वह सब फूँक देता है। अब तक तो कोई बात नहीं थी, अकेला था; अब शादी हो गई है। अगर यह ढंग अब भी चलता रहा तो लुटिया डूब जायेगी।"

"माता जी तुम चिन्ता मत करो ? मैं उनकी शराब छुड़ा कर रहूँगी, वक्त आने दो। मेरे बाप ने जो खुद भी शराबी है, शराबी लड़का ढूँढ कर मेरी शादी की थी ताकि उनको भी शराब पीने को मिलती रहे। लेकिन उनकी यह आरज़ू पूरी नहीं होने दूँगी। मेरी मां मेरे बाप की शराब न छुड़ा सकी और जीवन भर रोती रही। मगर मैं अपने पति की शराब छुड़ा कर रहूँगी और अपने घर को स्वर्ग बना कर ही दम लूँगी।"

"पार्वती !" किसी ने दरवाजे पर आवाज़ लगाई।

"कौन है" पार्वती ज़ोर से बोली।

"क्या बाप को भी नहीं पहिचानती पार्वती" पार्वती के बाप ने ज़रा ऊँची आवाज़ में बोलते हुए कहा।

"तुम फ़ौरन चले जाओ। यह दरवाज़ा तुम्हारे लिए हमेशा को बन्द हो गया है। तुम जैसा बाप भगवान किसी को भी न दे" बिना दरवाज़ा खोले पार्वती पीछे लौट

आई और कमरे में आकर खिड़की से सड़क की तरफ़ देखने लगी जहाँ से अस्पताल का पिछवाड़ा ख़ूब नज़र आता था। उसकी नज़र सामने के कूड़ेदान पर गई जिसमें हर रोज़ सुबह से शाम तक कटे प्लास्टरों की रुई लाकर डाल दी जाती थी। डाक्टर लोग ज़ख्मों वगैरा में कितनी बढ़िया रुई ख़राब करके बाहर फेंक देते हैं जिसका कोई इस्तेमाल नहीं होता, यों सोचते हुए वह उसके प्रयोग का तरीक़ा सोच रही थी। सास बाहर बैठी बैठी दरवाज़े की टोह ले रही थी कि समधी हैं या चले गए। कई बार सास के दिमाग़ में आया कि समधी को दरवाज़ा खोल कर अन्दर बुला ले मगर उसने बहू को नाख़ुश करना नहीं चाहा और मन मार कर रह गई। अब तो समधी चले भी गए थे शायद, क्यों कि दरवाज़े पर कोई आहट नहीं थी। सास उठ कर अन्दर आकर अपना लिहाफ़ ओढ़ कर लेट गई जो लगभग दस साल पुराना था और जिसकी रुई टूट कर लिहाफ़ के अन्दर गेंदों की तरह लुढ़क रही थी। पार्वती भी अपनी चारपाई पर लिहाफ़ ओढ़ कर सो गई।

दिन निकला, पार्वती ने सारा ज़ेवर बाँधा और एक दुकान पर जाकर बेच आई। इस रक़म से उसने पाँच किलो दूध देने वाली गाय ख़रीद ली। जब गाय घर आई तो बुढ़िया चौंकी।

“बेटी गाय कहां से ले आई?”

“ठिकाने गिरवी रखने पर जो रुपये आये थे उन से।”

“मगर इतना दूध तो हमारे यहाँ खर्च भी नहीं होगा।”

“एक गिलास तुमको दूँगी, एक गिलास मैं पिऊँगी, बाकी दूध दुकान पर बेच आया करूँगी।”

“बेटी हम लोग अछूत हैं, हमारे यहां का दूध हलवाई नहीं लेगा।”

“माता जी मैं अच्छे कपड़े पहन कर जाया करूँगी। कोई पहचान नहीं पायेगा मुझे और फिर यहाँ के लिए तो नई हूँ, कौन जाने कि मैं कौन हूँ? थोड़ी देर के लिए धींवरी बन जाऊँगी और दूसरे मौहल्ले के घर जाकर बेचूंगी। गाय के गोबर के उपले जलाने के काम आया करेंगे और जो बच जाया करेंगे वह बेच दिया करूँगी।”

“मगर गाय के खाने का ख़र्चा भी तो होगा” सास ने पूँछा।

“उपले बेच कर भूसा ले लिया करूँगी और अस्पताल में रोज़ सुबह जा कर मरीजों का बासी, बुसा, सूखा खाना ले आया करूँगी। उसको पानी में भिगो कर, उसकी सानी कर दिया करूँगी। खर्च कुछ भी नहीं होगा।” वह कुछ रुक कर बोली “इस तरह दूध से दस रुपये रोज कमा लिया करूँगी।”

“हां बेटी, शेखचिल्ली भी ऐसे ही मनसूबे बनाया करते थे।”

"माता जी, मुझ में और शेखचिल्ली में बहुत अन्तर है" यह कह कर पार्वती उठी और वाज़ार चली गई। वह वहां से दो चर्खे ले आई। सुबह को वह अस्पताल के कूड़ादान से अच्छी अच्छी रुई चुनकर ले आती। सब से पहले तो उसने सास का लिहाफ़ साफ़ करके भरवाया, फिर पति का लिहाफ़ वनवाया, फिर दो लिहाफ़ और दो गद्दे आने जाने वालों के लिये तैयार कराये। फिर सूत कातना शुरू किया। सुबह से शाम तक दोनों मिल कर इतना सूत कात लेती थीं कि दस वारह रुपये का विक जाता था। इस प्रकार छः सात सौ रुपये मासिक घर में आने लगे। एक दिन पार्वती जब कमाने गई तो उसके पीछे सास एक पड़ोसी से खत लिखवाने चली गई। लौट कर आने पर पार्वती ने सास को घर न देखकर इधर उधर ढूंढना शुरू कर दिया। दो घरों के बीच में बनी दीवार के सूराख से झांक कर देखा तो पड़ोस वाले घर में वह खत लिखवा कर पढ़वा रही थी। पार्वती ने ग़ौर से सुनना शुरू किया। पूरा ख़त सुनकर वह हँसी और चुपचाप पीछे हट गई। अपने चर्खे पर आ वैठी, फिर सास भी आ गई। दोनों कातने लगीं लेकिन न ही सास ने भेद खोला और न ही पार्वती ने पूछा कि वह कहां गई थी? कुछ देर वाद पार्वती ने कहा 'माता जी तीन महीने हो गये हैं 'उन्होंने' कोई पैसा नहीं भेजा है अगर हम ये जुगत नहीं करते तो कैसे गुज़र होती?"

"तू चिन्ता मत कर वेटी जव अच्छे दिन आने को होते हैं तो सव काम अच्छे ही होते चले जाते हैं। तेरे क़दम जिस दिन से इस घर में आये हैं मिट्टी भी सोना बनने लगी है। भगवान ने चाहा तो तेरी प्रतिज्ञा पूरी हो जायेगी।"

"कौन सी प्रतिज्ञा?"

"वही एक शरावी की शराव छुड़ाने वाली।" यह सुन कर पार्वती खिलखिला कर हँसी मगर उस हँसी का कारण सास नहीं समझ सकी। वह वेचारी क्या जानती थी कि पड़ौसी से बैंक मेनेजर और लड़के को लिखवाये गये पत्र उसने सुन लिये थे। सास भी इस हँसी में शरीक हो गई। इतने में एक पड़ोसन वोली 'वहन वडे आदमियों में बड़ी वेशर्माई होती है।"

"कैसे?" वहू ने पूछा।

"दुर्गा दास तिवारी की वहू सुसर के सामने मुँह उघाड़े वैठी थी, वहीं उसकी सास और ननद भी थीं।"

'यह तो नई सभ्यता की देन है मगर इसमें वुराई कुछ नहीं है। जिन के मन में पाप होता है वह घूंघट काढ़ कर भी क्या कुछ नहीं कर लेतीं?"

"यह तो विल्कुल सही वात है" सास ने कहा, "सुमेरा मर गया तो दो साल वाद उसकी विधवा के एक बच्चा नहीं हुआ था? वह उसके सुसर ही का तो था। इससे तो पुनर्विवाह कर लेना ही अच्छा है। इस पाप से तो वच जाती।"

"मगर पुनर्विवाह को बुरा समझा जाता है।"

"समाज की मूर्खता है ।" सास ने कहा "कैसे आना हुआ गनेसी की बहू ?"

"एक कूकरी (सूत की पिंदिया) लेने आई हूँ ।"

"क्या करेगी ". कूकरी देते हुये सास ने पूँछा ।

"लड़के के ख़सरा निकल रही हैं, कच्चे सूत की डोरी बना कर गले में डालूँगी" पिंदिया लेते हुये बोली और चली गई ।

"ख़सरा में डोरी से कुछ फ़ायदा हो जाता है ?" पार्वती ने पूँछा ।

"भगवान जाने" सास बोली । शाम हो गई थी । चर्ख़ा बन्द हुआ और सास खाना बनाने में लग गई, बहू दूध दुहने चली गई । कई दिन बीत गये । डाकिया ख़त लाया 'किस का है' मन ही मन कहती हुई बहू द्वार की तरफ बढ़ी । ख़त लिया । पढ़ा ।

"किस का है ? क्या लिखा है ? ज़ोर से पढ़ कर तो सुना ।" चर्ख़ा बन्द करते हुये सास ने कहा ।

"तुम्हारे बेटे ने लिखा है कि माता जी ने बैंक मैनेजर को ख़त लिखा था कि लड़का शराबी है । उस का वेतन उस की बजाय उस की बहू को दिया जाया करे, जिसे मैनेजर ने मंजूर कर लिया । अब वेतन मुझे मिला करेगा और लिखते हैं कि 'बहू के घर चलाने के जो ढंग लिखे हैं उस से मैं बिल्कुल बदल गया हूँ और शराब कभी न पीने की क़सम खा चुका हूँ । मैंने सचमुच एक देवी को पाया है ! वेतन सचमुच मुझे नहीं मेरी बहू को मिलना चाहिये । मैं तो शराबी हूँ मेरी बहू ने मेरी ज़िन्दगी को बदल दिया, मेरे घर को बदल दिया, भगवान करे ऐसी ही बहू हर शरावी को मिले ।"

बहू ने ख़त पढ़ कर चूमा और सीने से लगा लिया और मुस्कुराती हुई चर्ख़े पर आ बैठी "माता जी, तुम ने उन्हें ख़ूब बदला ।"

"नही बेटी, यह सब तेरी तपस्या का फल है ।"

◆

"चप्पल की शरारत"

"वहीद, बरसात में चप्पल पहन कर बाहर मत जाया करो" माँ ने वहीद को स्कूल जाते हुये समझाया।

"क्यों ?" वहीद ने बस्ता कन्धे पर संभालते हुये माँ से पूँछा।

"बेटा रास्ते की गन्दगी चप्पलों से उछल उछल कर कपड़े खराब कर देती है। समझे।"

"तुम्हारी तो यही बातें रहती हैं अम्मां जी, दुनिया चप्पल पहन कर बाहर निकलती है" वहीद यह कहते हुये घर से निकल कर बाहर खड़े हुये सहपाठियों के साथ स्कूल चला गया लेकिन जब वह स्कूल से वापिस आया और बस्ता रख कर कपड़े बदलने लगा तो माँ ने कहा —

"कपड़े बदलने से पेश्तर मेरे पास आओ। समझे।"

"अभी आया अम्मां जी।" उछलता हुआ वहीद माँ के पास आया और पूँछने लगा "क्या बात है ?"

"तुम पायजामा बदल कर आओ।"

"अभी लीजिये" वहीद ने कमरबन्द खोलना शुरू कर दिया। लेकिन बारिश की वजह से भीगा होने के कारण उसकी गाँठ उस के कोमल पोरों से खुल नहीं पा रही थी। माँ उसकी परेशानी को ताड़ गई और उसने वहीद के कमरबन्द की उलझी हुई गांठ खोल दी, तो वहीद ने पायजामा उतारा। तब उस का पिछला हिस्सा दिखाते हुए माँ ने वहीद से कहा—

'बरसात में चप्पल पहन कर बाहर इसलिये नहीं जाते हैं, समझे। हो गया न तुम्हारा पायजामा गन्दा !"

वहीद पायजामे पर मिट्टी की बेशुमार छींटें देख कर झेंप गया और अपनी ग़लती को महसूस करने लगा "अम्मां जी आप ठीक कहती थीं। मैं अब कभी चप्पल पहनकर बाहर नहीं जाऊँगा, लेकिन अम्मां जी एक बात बताओ, बहुत सारे बच्चे स्कूल में ऐसे आते हैं जो चप्पल पहने होते हैं, क्या उनके माँ बाप उन्हें तुम्हारी तरह नहीं समझाते ?"

"हो सकता है वह ग़रीब हों, उनके पास जूते न हों या फिर वह बच्चे तुम्हारी तरह अपनी माओं का कहना नहीं मानते हों।"

माँ की बात सुन कर वहीद को फिर शर्म सी महसूस हुई क्यों कि यह बात भी उसके गाल पर एक तमाचा ही तो थी। वहीद अन्दर चला गया और मां उसके भोलेपन पर ग़ौर कर रही थी और मन ही मन में खुश हो रही थी। कुछ क्षणों के पश्चात वहीद कमरे से बाहर आया और बोला—

"अम्माँ जी एक बात तो बताओ, साँप आदमी को काट लेता है तो आदमी मर जाता है और साँप खुद क्यों नहीं मरता जब कि वही ज़हर हर समय उसके मुँह में भरा रहता है।"

"बेटा अगर एक साँप दूसरे साँप को डस ले तो......"

अभी वहीद की माँ बात पूरी भी न कर पाई थी कि पड़ोसी रामचन्द्र के घर में से गुस्से भरी आवाज़ सुनाई दी—

"नुसरत की यह हिम्मत कैसे हुई कि उसने मेरी बहन के पानी से भरे मटके में पीछे से कंकड़ मारा।"

इसके बाद दूसरे भाई ने कहा—"हम तो पांच भाई हैं और वह कुल दो ही हैं। चलो उसकी हड्डी हड्डी तोड़ दें। हिन्दुओं के गांव में एक मुसलमान की यह हिम्मत ?"

इस पर तीसरे भाई ने कुट्टी काटने वाली गँडासी को हाथ में लेते हुये कहा "चलो आज इस छेड़खानी का मज़ा चखा दें।"

"दोनों भाई बाहर हैं उन्हें आ जाने दो तब चलेंगे, फिर पिता जी भी तो यहाँ नहीं हैं, ज़रा और ठहर जाओ" एक भाई ने कहा। यह प्राकृतिक बात है कि बुरा काम करने से पहले हर व्यक्ति का दिल धड़कता है, और वह उससे बचने के लिये कोई बहाना भी तलाश करता है।

"क्या हम तीनों कायर हैं जो उनके बिना कुछ कर ही नहीं सकते, नुसरत तो कुल दो भाई हैं और हम तीन हैं। उससे अब भी अधिक हैं फिर डर किस बात का? अगर बहन के साथ इस से भी बड़ी घटना हो जाती तब भी क्या हम उनका इन्तज़ार

करते'' दूसरे ने उत्तर दिया। इस उत्तर ने सबके गाल पर तमाचे का काम किया और तीनों घर से बाहर निकल पड़े।

''आज ख़ैरियत नहीं है। नुसरत ने बुरा किया है लेकिन आप इस मुसीबत को टालने की कोशिश कीजिये वरना ग़ज़ब हो जायेगा।'' वहीद की मां ने अपने शौहर से कहा। हमीद ने फ़ौरन मौक़े की नज़ाकत को पहचान लिया और बाहर निकल गये। इधर उधर देखा वह तीनों गली में कुछ कानाफूसी कर रहे थे।

''अरे बेटे राधे क्या चेमेगोइयाँ हो रही हैं, कुछ मेरे लायक सेवा हो तो बताओ।''

''ताऊ जी सलाम'' तीनों ने सलाम किया।

''जीते रहो बेटों। बड़ी उमर हो। कोई ख़ास बात है क्या ?'' कहते कहते हमीद उनके पास पहुँच गये। तीनों के हाथों में घातक हथियार थे। हमीद ने समझ लिया कि सचमुच आज ख़ैर नहीं है। उन्होंने बड़ी सन्जीदगी और समझदारी से काम लिया और उन हथियारों की तरफ़ नज़रों से इशारा करते हुये कहने लगे ''क्या आज किसी दुश्मन पर चढ़ाई का इरादा है।''

''ताऊ जी नुसरत ने हमारी बहन के पानी से भरे मटके में पीछे से कंकड़ मारा है। हम उसको जीवित नहीं छोड़ेंगे'' एक भाई ने कहा।

''बिल्कुल ऐसा ही होना चाहिये। इस बदतमीज़ी का जवाब ठीक यही है जो तुम देने जा रहे हो। बस्ती की लड़की चाहे किसी भी क़ौम की हो, सारे बस्तीवालों की बेटी होती है। इस कमीने को इस की सज़ा मिलनी ही चाहिये ताकि किसी दूसरे को आइन्दा इस क़िस्म की हरकत करने की हिम्मत न हो सके''—'मगर–अगर मेरी एक सलाह लो तो अर्ज़ करूँ ?''

तीनों भाई एक ज़ुबान होकर कहने लगे ''ताऊ जी आप हुक्म तो करें, हम आप का कहना कैसे टाल सकते हैं ?'' हमारे मुहल्ले में आप ही एक ऐसे बड़े हैं जिस का कहना टाला नहीं जा सकता।'' बड़े भाई ने कहा।

''अगर तुमने इस नालाइक़ का क़त्ल कर दिया तो पुलिस तुम तीनों को गिरफ्तार कर लेगी। सारे घर पर मुसीबत आ जायेगी। वह तो जान से जायेगा ही मगर तुम को अज़ाब में डाल जायेगा। उल्टे मुजरिम बनने से क्या फ़ायदा ? उस को सज़ा मिले और तुम बिलकुल बेदाग़ रहो। यानी साँप भी मर जाये और लाठी भी न टूटे। मैं उसको चार आदमियों के सामने बुलाता हूँ और बात की तह तक पहुंचने की कोशिश की जायेगी। गाँव के अच्छे मुअज़्ज़िम और समझदार लोग वहां मौजूद होंगे। जो वह

फ़ैसला देंगे वही किया जायेगा। ठीक है न ?" हमीद ने प्यार से समझाते हुये तीनों भाइयों से कहा।

"ठीक है ताऊ जी" सब ने कहा, और गर्मी की दोपहर में मुर्झाये सब्ज़े की तरह तीनों नतमस्तक हुये घर को चले गये। हमीद ने बस्ती के कुछ सम्मानित व्यक्तियों को बुलाया और नुसरत को भी बुलाया गया। सब के सामने यह समस्या रक्खी गई। जिसने भी सुना नुसरत को थू थू करते हुये बुरा भला कहने लगा। नुसरत जो एक मुल्ज़िम की तरह एक तरफ़ खड़ा था झुँझला कर बोला—

"तुम लोगों ने मिल कर यह किस ख़ता की सज़ा दे कर मुझसे बदला लेने की ठानी है। एक लड़की की ग़लत बात को सही मान लिया और मुझे ग़लत ठहराया जा रहा है। यह कैसा इन्साफ़ है ?"

"क्या तुमने इसके मटके पर कंकड़ नहीं फेंकी ?" हमीद ने पूछा।

"बिल्कुल नहीं।" नुसरत ने दृढ़ता से कहा।

"कोई मुजरिम अपने जुर्म का इक़बाल थोड़े ही करता है।" लक्ष्मी के पिता राम चन्द्र ने खिन्नता से कहा।

"बिल्कुल सही है, हर आदमी अपने ऐब को छुपाने के लिये क्या कुछ नहीं करता।" हाजी ग़फ़्फ़ार हुसेन ने कहा।

"मैं कुरान शरीफ़ की क़सम खाकर कहता हूँ कि मैंने इस लड़की के मटके को कंकड़ नहीं मारा था। मैं तो सिर्फ़ अपने दरवाज़े पर खड़ा था और इसकी दोनों लम्बी चोटियों को देखते हुये यह सोच रहा था कि हिन्दुस्तान की औरतें इन चोटियों को बनाने में टनों सूत बेकार कर देती हैं, अगर सभी औरतें इन्दिरा गांधी की तरह बाब कट बाल रखने लगें तो लाखों लोगों के तन ढक सकते हैं। इसी दौरान लक्ष्मी ने मेरी तरफ़ देखा तो मुझे अचानक अपने इस खयाल पर हँसी आ गई और वह आगे बढ़ गई। बस मुझे क्या पता था, कि क़ौम की भलाई के लिये सोचना यह मुसीबत नाज़िल कर देगा।"

यह बात सुन कर मुसलमानों की पीठ कुछ भारी हुई और इकतरफ़ा शरारत का पहलू उभरना शुरू हुआ। लक्ष्मी चुपचाप खड़ी थी। हमीद ने उससे पूँछा —

'बेटी तुमको यह कैसे यक़ीन है कि कंकड़ नुसरत ही ने मारा था ?"

'ताऊ जी उस वक्त यही बाहर खड़ा था, और कुँए के आस पास दूर तक कानी चिड़िया भी नहीं थी। कंकड़ पीछे से लगा था और यह मुस्करा रहा था। ऐसी हालत

क़सम खाने का मुआमला तो क़सम खाई ही इसलिए जाती है कि दूसरे धोखे में आ जायें ।" लक्ष्मी निडरता से यह कह कर और नज़रें झुका कर चुप हो गई। कुछ देर सब लोग ऐसे चुप बैठें रहे जैसे किसी की मातमपुर्सी में आये हों । सब अपनी अपनी में आप खुद समझ सकते हैं कि यह हरकत नुसरत की ही हो सकती है या नहीं ? रहा जगह समस्या को सुलझाने की तरकीबें सोच रहे थे, मगर वहीद को यह खामोशी अच्छी नहीं लगी, और उसने बड़े विश्वास के साथ कहा, "लक्ष्मी बहन तुम कुयें पर चप्पल पहन कर गई थीं या जूते ?"

"चप्पल ।"

"बहन ज़रा इधर तो आना ।" लक्ष्मी अपने बाप से आज्ञा लेकर वहीद के पास गई । सब लोगों ने सोचना छोड़ कर दोनों की तरफ़ देखना शुरू कर दिया । "देखो अब्बा जी, लक्ष्मी बहन चप्पल पहन कर पानी भरने गई थी । चप्पलों ने इतनी गन्दगी उछाली है कि इसकी साड़ी कमर तक ख़राब हो गई है । हो सकता है कि कीचड़ से लिपटा कंकड़ का कोई टुकड़ा इसकी चप्पल के साथ उछल कर इसके मटके पर जा लगा हो और यह ग़लतफ़हमी का शिकार हो गई हो ?"

यों कह कर वहीद सबका मुँह देखने लगा जैसे कि वह अपनी नई तहक़ीक की दाद चाहता हो । सब लोग मुस्कराये, लक्ष्मी भी सिर झुकाये एक तरफ़ खड़ी हो गई । सब लोगों को अब यह उम्मीद दिखाई देने लगी कि यह समस्या हल हुई ही चाहती है ।

नुसरत ने खड़े होकर कहा "हमीद चाचा बिल्कुल ऐसा ही हुआ है । उस की चप्पल से कोई छोटा सा कंकड़ उछल कर मटके पर जा लगा जिसे यह समझती है कि मैंने फेंका होगा । यह तो सभी लोग जानते हैं कि चलते वक़्त चप्पलों का तलुआ एड़ियों से पटापट लगता हुआ चलता है और चप्पल की पिछली नोक पर जो चीज आ जाती है वह गुलेल की तरह उस को ऊपर उछाल कर फेंक देती है । लिहाजा उस की चप्पलों को सज़ा दी जानी चाहिये । हमेशा अपना ही अपने का बुरा करता, है ग़ैर नहीं । उसकी चप्पलों ने उसके साथ शरारत की है ।"

"मेरी तो पहले भी बहन की तरह थी, और आइन्दा भी बहन की तरह रहेगी । अब की सलूनों पर मैं उससे राखी बँधवा लूँगा, ठीक है न लक्ष्मी बहन ।" नुसरत ने लक्ष्मी की तरफ़ मुतवज्जा हो कर कहा । लक्ष्मी यह सुन कर मुस्कुराती हुई चली गई । उस को असल बात का अन्दाज़ा हो गया था और वह समझ गई थीं कि नुसरत बेकुसूर है ।" राम चन्द्र तुम इस बात से मुतमईन हो गये या नहीं ?" हाज़ी गफ़्फ़ार हुसेन ने पूँछा ।"हाजी जी सही बात यही है कि नुसरत की कोई ख़ता नहीं है । चप्पल ही से कोई कंकड़ी उछली होगी, जो मटके में लग गई । अगर नुसरत वहाँ न होता तो यह मुल्ज़िम ही न बनता । लक्ष्मी का शक सही नहीं है ।" राम चन्द्र ने कहा ।

SECRETARY
Kashmir Research Institute
Brein Srinagar Kashmir-191121

"शरीफ़ रज़ील"

"साहू साहब, आपको दरोग़ा जी ने याद किया है" सिपाही ने सावधान खड़े होकर कहा ।

"इस वक़्त ?" शराव का प्याला एक तरफ रखते हुये साहू साहब ने उस सिपाही से पूछा ।

"जी इसी वक़्त, गुस्ताख़ी मुआफ़ हो ।"

"अच्छा चलता हूँ । ख़ैरियत तो है ?

"ख़ैरियत क्यों नहीं होगी साहब ।" सिपाही ने कमीज का कालर ठीक करते हुये जवाब दिया । साहू साहब उठे और सिपाही को साथ लेकर कार से रवाना हुये । दरोगा जी थाने में उनका इन्तज़ार कर ही रहे थे । देखते ही उनका स्वागत किया और खड़े हो गये । हाथ मिलाया और कुर्सी पर बैठने का इशारा किया ।

"बेवक़्त तक़लीफ़ देने की मुआफ़ी चाहता हूँ साहू साहब" दरोग़ा जी ने नर्मी से कहा । 'नहीं नहीं साहब, ऐसी भी क्या बात है । जब काम आ पड़े तो वक़्त बेवक़्त ही क्या, हुक्म फ़रमाइये, क्या काम है मेरे लाइक ।"

"यह चार डकैत आपके चूना पकाने के भट्ट पर कहीं डकैती डालने का प्रोग्राम बनाते हुये पकड़े गये । मैंने सुना है कि ऐसा कई वार हुआ है क्योंकि वहाँ जंगल है । क्या आपको इसका पता नहीं ?"

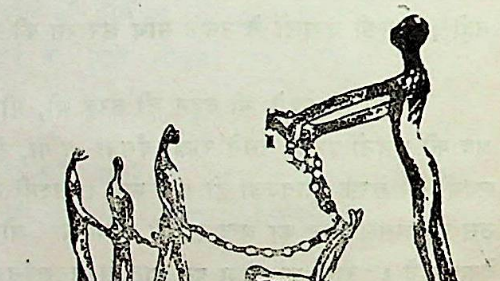

"आपने सुना होगा मगर मैंने कभी नहीं सुना । भट्टे पर रहने वाले मेरे नौकर ने भी कभी इस किस्म की बात मुझसे नहीं कही, क्या यह डकैत हैं ? चारों

गिरफ़्तार लोगों की तरफ़ देखते हुए साहू साहब बोले।

"जी हाँ चारों डकैत हैं। एक तमन्चा इनके पास से बरामद हुआ है। इनके जो साथी भाग गये उनके पास और भी ख़तरनाक हथियार हो सकते हैं।" जनरल न्याजी की तरह तकव्बुराना अन्दाज में बोले। साहू साहब सर्दी की अधिकता में ओवरकोट का कालर संभालते रहे और कुछ सोचते रहे। एक नजर उन चारों पर फिर डाली। सब अर्धनग्न, निर्बल, दुबले-पतले, सिकुड़े-मुकड़े एक तरफ बैठे थे। अन्दाज भिखारियों जैसा था, मगर यह सब पुलिस की नज़र में डकैत थे। साहू साहब ने पल भर के बाद उनसे पूछा -

"क्यों भई तुम लोगों को दरोग़ा जी ने हमारे भट्टे पर से पकड़ा है?"

"हाँ सरकार यह सच है।"

"और यह तमन्चा भी तुम्हारा ही है?"

"जी।"

"और जो तुम्हारे कुछ साथी भाग गये हैं।"

"जी" काँपते हुए एक ने कहा। वास्तविकता के विरुद्ध बोलने पर इसी प्रकार कंपकंपी आ जाती है।

"ठीक है दरोगा जी, जब मुजरिम ख़ुद इकरार कर रहा है तो उससे बड़ा उसके मुजरिम होने का और सुबूत क्या हो सकता है? जो भी मुनासिब कार्रवाई समझो करो। मैं चला।" साहू साहब वहाँ से सीधे घर को जाने के इरादे से उठे थे लेकिन रास्ते में ख़याल बदल गया और भट्टे पर जा पहुंचे।

"पंडित जी" ऽऽऽ ज़ोर से आवाज़ लगाई।

"आया सरकार" मालिक की आवाज़ पहिचान कर पंडित जी ने भट्टे पर से उत्तर दिया। पास आये, नमस्कार किया और फिर बोले 'कैसे कष्ट किया सरकार, कुशल तो है?"

"हाँ ऽऽ" रहंकते हुये स्वर में बोले और आगे संभल कर कहना शुरू किया- "क्या दरोग़ा जी यहाँ से चार डकैत पकड़ कर ले गये हैं?"

"जी हाँ चार आदमियों को पकड़ कर तो जरूर ले गये हैं लेकिन वह डकैत नहीं भिखारी हैं। बहुत दिनों से रात को यहाँ आकर सो जाते थे, दिन भर भीख मांगते थे।"

"भिखारियों के पास तमन्चे का क्या काम?"

"सरकार तमन्चे की बात कर रहे हैं, जब मेरे सामने पकड़े गये थे तो उनके पास

से लोहे की कील भी बरामद नहीं हुई थी। थपथपा के कस्टम अधिकारी की तरह सारा शरीर देख लिया था दरोगा जी ने। एक लंगड़े भिखारी के पास जरूर एक अमरूद की लकड़ी थी। वह तो सच-मुच भिखारी हैं। पुलिस वाले तो उनके पास राइफल भी दिखा सकते हैं। अगर यह लोग सही मुजरिमों को पकड़ने लगें तो देश में शान्ति न हो जाय। यह तो केस बनाते हैं, ड्रामे रचते हैं।"

"वह भिखारी ही हैं तुम्हारे पास इसका क्या सुबूत है ?"

'सरकार एक बार मैंने उनकी बात चीत छुप कर सुनी थी। वह कह रहे थे कि एक तरफ वे लोग हैं कि जिनके पालतू कुत्ते जानवर तक लिहाफों में सोते हैं। एक तरफ हम लोग हैं कि इन्सान होकर भी न तन को है न पेट को है। एक ने कहा—भाई यह तो नसीब की बात है। हमारे नसीब में भगवान ने यही लिखा है कि दर दर की फटकारें खायें, भीख माँगे और रोते रोते मर जायें। तीसरा बोला, भीख माँगने वालों की तो सरकार भी विरोधी है। एक जगह स्टेशन पर लिखा था कि भीख माँगने वालों को भीख देकर उनकी हिम्मत न बढ़ाइये। मगर सरकार ने भीख माँगने वालों के लिए काम कोई न दिया, जिससे वह भीख माँगना छोड़ दें। चौथा बोला—अरे गधे, इस सरकार के पास अच्छे खासों के लिए तो काम है नहीं, कितने एम० ए०, बी० ए० बेकार फिरते है, तुम्हें कहाँ से काम देगी ? तुमसे तो करतार ही रूठ गया है, सरकार की क्या आस करते हो ?

मैंने इतनी बातें सुनी और चला गया अपना सा मुँह लेकर, कुछ भी भेद हाथ न लगा। मैं भी सोच रहा था कि यह लोग खतरनाक न हों, लेकिन उस रोज़ से मैंने उन पर शक करना छोड़ दिया। बेचारे इस भट्टे की आग से ताप ताप कर रात काट देते हैं और आलू, शकरकन्द भून-भून कर खाते रहते हैं। मुझे तो यह देखकर तरस आता था और मैं उन्हें यहाँ खुशी से रहने देता था।"

"ठीक है।" साहू साहब ने यह बातें सुनकर कुछ फैसला किया। इधर उधर देखा किसी चीज़ के जलने की बू महसूस हो रही थी। वह भट्टे की तरफ़ बढ़े और भूभल को बेंत से कुरेदने लगे। उसमें दबे सिंगाड़े और आलू अब जल कर क़रीब क़रीब कोयला हो चुके थे। साहू साहब कुछ सोच रहे थे। पण्डित जी सन्जीदगी से बोले— "आज बेचारे भूखे ही रह गये।"

"पण्डित जी तुम ठीक कहते हो यह लोग भिखारी हैं। पुलिस वाले अपनी कार करदगी दिखाने के लिए शरीफ़ों को रज़ील बना रहे हैं। चलो ज़रा मेरे साथ चलो।" पण्डित जी और साहू साहब दोनों कार में बैठ कर एक बार से फिर थाने में पहुँचे। "दरोगा जी अगर आपको एतराज न हो तो मैं एक बार मुल्ज़िमान से मिलना चाहता हूँ" साहू साहब ने इजाज़त माँगी। "आप खुशी से मिल सकते हैं" दरोग़ा जी ने इजाज़त दे दी और इशारे से एक सिपाही भी भेज दिया ताकि उनकी बातें सुन सकें।

"क्यों भई तुममें से तमन्चा किस के पास था ?"

चारों ने एक दूसरे का मुँह देखा फिर एक ने कहा "तमन्चा मेरे पास था।"

"देखो भिखारी भी भगवान को मानते हैं। उनका भी ईमान होता है। सच-सच बताना। झूठ बोलने की जरूरत नहीं है."

"सच सच बता रहा हूँ सरकार" फटे दामन को नंगी टांगों पर सरकाते हुए भिखारी बोला।

"अगर सच सच बोल रहे हो तो फ़ौरन जवाब क्यों नहीं दिया ? एक दूसरे की तरफ़ क्यों देखते रहे ?"

"सरकार हक़ीकत तल्ख होती है। सच बोलने पर जान जाती है। इसलिए सच बोलने से पहले हिम्मत से काम लेना पड़ता है।"

"इसका मतलब है कि तुम भिखारी के रूप में बदमाश हो।"

"अब इसमें शक की गुन्जाइश ही क्या रह गई सरकार ?"

यह सुनकर पण्डित जी बोले "तुम लोग झूठ बोलते हो। जब मेरे सामने पुलिस ने तुम्हारी तलाशी ली थी तो तुम्हारे पास कुछ भी नहीं था फिर यह तमन्चा कहाँ से आ गया ? खाओ क़सम गीता और रामायण की कि यह तमन्चा तुम्हारा है। हिन्दू धर्म को मानते हो, उठाओ काशी की तरफ़ हाथ" यह सुनते ही चारों सहम गये और गम्भीर बादलों की तरह ज़मीन को घूरने लगे। "बोलते क्यों नहीं" साहू साहब ने कहा।

"साहू साहब निर्धन धर्म को भी मानता है और भगवान को भी मानता है। अपने सुख के लिए हम कुछ भी कहें मगर यह कसम नहीं खा सकते। भिखमंगे समाज में गिरे अवश्य होते हैं। सच-मुच हम झूठ बोल रहे हैं, हमें बदमाश साबित करने के लिए पुलिस ने तमन्चा हम से बरामद हुआ दिखाया है। मगर सच यह है कि पुलिस ने यह तमन्चा अपने पास से रखा है। कुछ बयान हमें सिखाये हैं कि यों कहना, हमने इन बयानों को खुशी से मान लिया और तमन्चा भी खुशी से अपना लिया। इस झूठ को अपनाने ही में हमारा भला है।"

"क्या ?"

शरीफ़ से रज़ील बन कर खाना भी मिला, कपड़े भी ओढ़ने बिछाने को मिले। जब तक शरीफ भिखारी बने रहे हर तरह दुखी रहे। हवालात में बड़े सुखी हैं और यह दुआ करते हैं कि जेल से सारी ज़िन्दगी रिहा न हों। यहाँ कुछ काम तो मिलेगा। ज़िन्दगी की सारी जरूरी चीजें यहाँ मिलेंगी तो बाहर जाकर क्या करेंगे ? आप हमें छुड़ाने की कोशिश में परेशान हैं लेकिन यह कोशिश हमारे हक़ में बुरी साबित होगी। दरोगा जी का जुल्म भला साबित होगा। हम शरीफ़ से रज़ील अच्छे। साहू साहब और पण्डित जी खड़े खड़े न जाने क्या सोच रहे थे ?

"पफ़"

"मैं अपनी आँखों की जाँच कराने के लिए डा० यू० के० मुखर्जी की क्लीनिक पर गया तो उस के खुलने में लगभग एक घन्टा था। मैं बाहर ही एक वैंच पर बैठ गया क्योंकि मैं जिन्दल फैक्ट्री कलकत्ता में मुलाजिम हूँ। पहले नम्वर लग जाता तो ड्यूटी पर जल्दी चला जाता। उसी समय एक अन्धा दस ग्यारह साल के लड़के के कन्धे पर हाथ रखे हुए रिक्शे से आया और क्लीनिक के सामने उतरा। रिक्शे वाले ने पूछा—

"वावा जल्दी वापस चलो तो रुकूँ ?"

"क्या पता डाक्टर कितनी देर में आये और मुझे कितनी देर में छुट्टी दे, अन्धे ने उत्तर दिया और मेरे पास ही वैंच पर बैठ गया। लड़का सामने खम्वे से लगा खड़ा रहा। मैंने लड़के की सूरत में और उस अन्धे की सूरत में वहुत सी अलामतें मिलती जुलती देखीं। वे दोनों बाप वेटे से लग रहे थे। मैंने पूछा— "वावा यह लड़का आपका कौन है ?"

"पोता।"

"कितने वेटे वेटियाँ हैं आपके ?"

"दो बेटे हैं जोय और विजोय, एक लड़की थी रोना" अन्धे को इतना कह कर रोना आ गया। मैंने समझा कि लड़की बहुत होनहार और हसीन होगी, अब वह चल वसी है इसीलिये इस का दिल भर आया है। मैंने उसका मूड वदलने के खयाल से दूसरा सवाल किया—

"बाबा क्या तुम्हें बिलकुल दिखाई नहीं देता ?" यह सुनकर पहले तो वह मेरी बात पर हँसा, जैसे मेरा सवाल मूर्खतापूर्ण हो। मैंने ऐसा महसूस करते हुए मन ही मन में सोचा कि मेरे इस सवाल में कोई न कोई त्रुटि अवश्य है। अभी मैं यही सोच रहा था कि वह बोला —

"बेटा, अगर मैं अन्धा होता तो यहाँ इलाज कराने क्यों आता ? यह सुनते ही मैं उसके हँसने का कारण समझ गया और अपनी झेंप मिटाते हुए मैंने उसकी बात बड़ी कर दी 'सही कहते हो बाबा ! तुम्हें कितना दिखाई देता है ?" एक घन्टे का समय बिताना था ही, यों ही गप-शप सही। वह बोला —

"बेटा एक आँख में मोतिया बिन्द का पानी आ चुका है और बिलकुल दिखाई नहीं देता। दूसरी कुछ ठीक थी सो उसमें भी पानी आना शुरू हो गया है। अब तो काम चलाने लायक ही दिखाई देता है। देखो वह लँगड़ा आता दिखाई दे रहा है। उसके कपड़े सफेद हैं। एक पैर में जूता है। दूसरी टांग घुटने तक कटी हुई है। बग़लों में बैशाखी भी लगी हुई है। एक बग़ल में झोला लटक रहा है मगर चेहरा पहचान में नहीं आ रहा कि वह कौन है ?" इतना कहकर वह अन्धा चुप हो गया और आँखें फाड़ फाड़ कर लँगड़े को देखता रहा। अब लँगड़ा हमारे पास ही आ चुका था। मैंने उसे सिर से पैर तक देखा। वह थका हुआ सा लग रहा था। हो सकता है बैसाखी बग़ल में चुभती हो और वह इसीलिए कुछ सुस्ताने के लिये खड़ा हो गया हो। मैंने कुछ कहा नहीं। वह चुपचाप खड़ा था और हम तीनों की तरफ़ बारी बारी से देख लेता था। इस अन्दाज़ से मैंने यही समझा कि वह कुछ चाहता है और मांग नहीं रहा है, इसलिए मैंने चार आने निकाल कर उसकी तरफ़ बढ़ा दिये। उसने लेने से इन्कार करते हुये पीछे को हठ कर कहा—

'कोई मैं भिखारी हूँ ?"

"क्षमा कीजिएगा भाई साहब" मैंने बड़ी नर्मी से कहा।

"क्या अंग भंग भीख ही माँग सकते हैं क्या अँगहीनता भीख माँगने को बाध्य करती है, कुछ और नहीं किया जा सकता ? भीख माँगना तो बुरी बात है। इससे मनुष्य के स्वाभिमान पर आँच आती है।"

यह सुनकर मुझे हार्दिक हर्ष हुआ और अब मुझे अंधे से लंगड़ा अधिक मार्मिक जंचने लगा और मैंने उससे बातें करनी शुरू कर दीं।

"तुम्हारे खानदान में कितने आदमी हैं ?"

"केवल दो। एक मैं दूसरा भगवान।"

‘‘इसका यह मतलब हुआ कि तुम्हारा कोई नहीं है ।’’

‘‘मैंने तो यह नहीं कहा कि मेरा कोई नहीं है ।’’ लँगड़े की इस बात ने मुझे फिर मात दे दी । मैं खूब सोच कर बोला ‘‘तुम क्या काम करते हो ?’’ यह सुनते ही उसने उत्तर दिये बिना कन्धे पर पड़ी झोली मेरी तरफ फैलाई । मैंने उसमें झाँका तो देखा वह धान की खीलों से भरी हुई थी और तराजू भी साथ ही रखी थी लेकिन बाट कहीं नजर नहीं आ रहे थे । ‘‘यह तो खीलें हैं मैंने कहा ।

मैं कब कह रहा हूँ बतासे हैं’’ उसने कहा । मुझे उसकी इस बात पर अन्दर ही अन्दर खिन्नता हुई । वह चिड़चिड़ी आदत का प्रतीत हुआ परन्तु मैंने स्वयं पर काबू किया और विनम्र भाव से पूछा—

‘‘मुझे क्या कहना चाहिए था ?

‘‘आप कहते देख लिया ।’’ यह कह कर वह मुस्कराया और फिर बोला ‘‘पुम एक काबिल आदमी मालूम पड़ते हो ।’’ मैं इस पर इतना खुश नहीं हुआ जितना चकित हुआ । मेरे मन में यह जिज्ञासा जागी कि उसने किस बात पर मुझे काबिल बताया है । मैं काबिल था या नहीं यह तो रही अलग बान । मुझे वह अच्छा शिक्षित लग रहा था । मैंने बड़ी शिष्टता से उससे पूँछा ‘‘भाई साहब आप ने मेरे इस वाक्य पर मुझे योग्य होने की सनद कैसे देदी, क्या बताने का कष्ट करेंगे ?’’

‘‘आप अपनी बात कहने पर नाख़ुश नही हुये और कमी को जानने के इच्छुक बने रहे, वह भी विनम्र भाव से । यही योग्यता प्राप्ति की सीढ़ी है ।’’ लंगड़े ने कहा । उस की बात अक्षरशः सत्य थी और अब मैं ने एकलव्य की तरह उसको मन ही मन में अपना गुरु मान लिया था । उसने गला साफ़ किया जैसे लम्बी बातचीत शुरू करने वाला हो । वह बोला ‘‘बाबू जी मैं गाँव गाँव घूमता हूं और औरतों के सिर के उन बालों के गुच्छों को जो कंघी करते वक़्त झड़ते हैं, खीलों के बराबर तोल कर इकट्ठा कर लेता हूँ और उनसे तरह तरह के पफ़ बनाता हूँ ।’’

‘‘हाथों से या मशीन से ?’’

‘‘जी शुरू शुरू में तो हाथों ही से बनाता था अब बैंक से पफ़ बनाने की मशीन लोन में मिल गई है ।’’

‘‘तुम्हारी शिक्षा क्या है ?’’

‘‘बी० ए० पास हूँ ।’’

‘‘एक ग्रेजुएट होते हुये ऐसे काम की निस्बत तो आप अगर दस पांच ट्यूशन कर लेते तो बहतर कमा लेते और उसके साथ साथ इज़्ज़त भी होती ।’’ यह सुनकर लँगड़ा अजीबोग़रीब मुस्कुराहट होटों पर लिये कहने लगा—

"मुझे पफ़ बनाने में जो मज़ा आता है वह दुनिया के किसी भी धन्धे में नहीं आ सकता। मैं रुपया तो कई तरीक़ों से कमा सकता हूँ मगर वह दौलत आत्मशान्ति नहीं दे सकती। मन की शान्ति तो उद्देश्य पूर्ति में होती है दौलत जपा करने से नहीं।" यह कह कर उसने बीड़ी सुलगाई और इतनी ज़ोर से दम लगाया जैसे कि वह उसको साबुत ही निगल जाने की कोशिश कर रहा हो। अन्धे से लँगड़ा अधिक सादा और दिलचस्प मालूम हुआ। मैंने वार्तालाप जारी रखते हुए पूँछा—

"भाई साहब आप की टाँग कैसे कटी है ?"

"कहानी लम्बी है, ज़रा तसल्ली से बैठ कर सुनाऊँगा" यह कहते हुये वह अन्धे को थोड़ा सा खिसका कर मेरे पास बैठ गया और बोला "आज से लगभग दो साल पहले जब मैं बी० ए० कर चुका था और एम० ए० में प्रवेश लेने वाला था उसी वक़्त की बात है" कहते कहते वह कुछ रुका और उसकी आँखों में आंसू छलक आये। उस ने दामन से आँसू पूँछे और सन्जीदगी के साथ कहने लगा—"रोना नाम की एक लड़की थी जो कि चितरन्जन दास डिगरी कालेज में पढ़ती थी," यह सुनते ही अन्धा भी ज़रा सरक कर बैठ गया और बड़े ग़ौर से सुनने लगा। "मुझे उससे प्यार हो गया था, मगर यह कोई बड़ी बात न थी, बड़ी बात तो यह थी कि उसे भी मुझसे प्यार हो गया था। मगर मुसीबत का पहाड़ उस वक़्त टूटा जब उसके मां बाप को यह मालूम हुआ कि मैं चट्टोपाध्याय हूँ (वह चटर्जी और मैं चट्टोपाध्याय यह केवल गोत्र की बात है, होते दोनों ही ब्राह्मण हैं) लड़की के पिता पुराने ख़याल के थे इसलिये लड़की पर मुझे भूल जाने के लिये ज़ोर देने लगे। मगर प्यार अगर सच्चा हो तो वह ऐसी बातों की परवाह नहीं करता।

अतः उस लड़की ने मुझ ही से शादी करने की दृढ़ इच्छा प्रकट की। बात इतनी बढ़ी कि घर में निरन्तर लड़ाई रहने लगी। उस बेचारी से कोई सीधे मुँह बात नहीं करता था। कड़े पहरे रहने लगे। पढ़ाई रोक दी गई जिससे वह मुझे पाने से निराश सी हो गई। घर वाले बड़ी तेजी से किसी दूसरे लड़के की खोज में लग गये। नतीजा यह हुआ कि वह अवसर पाते ही आत्म हत्या करने रेल की पटरी पर पहुँच गई। सन्जोग की बात कि मैं भी रुकमनी स्टेशन पर अपनी माँ को लेने गया हुआ था जो अपने मायके सिलपाईगुड़ी से एक शादी में सम्मिलित होकर वापिस लौट रही थीं। सामने से आती हुई रेलगाड़ी ने सीटी दी। मैंने प्लेटफार्म पर आगे झाँक कर देखा कि गाड़ी स्टेशन से कितनी दूर है तो एक लड़की रेलवे लाइन के बीचो बीच स्टेशन की तरफ़ को पीठ करके खड़ी हुई दिखाई दी। मैं फ़ौरन समझ गया कि यह कोई ख़ुदकुशी के इरादे से खड़ी है।

मैं रेलगाड़ी की तरफ़ से उसे बचाने भागा। प्लेटफ़ार्म पर सभी मुसाफ़िर उधर

ही देख रहे थे और अपनी अपनी जगह कुछ न कुछ सोच रहे होंगे। जैसे ही उससे कुछ फ़ासले पर पहुँचा तो मैंने देखा कि वह रोना थी। मैं और ज़ोर से भागा, अपने शरीर की पूरी ताकत का इस्तेमाल किया और आवाज़ दी "रोना गाड़ी पास आ चुकी है। हट जा वरना मर जायेगी।" वह नहीं हटी मैंने फिर कहा "तू नहीं हटेगी तो मैं भी कट के मर जाऊँगा" अब की बार उसने मुझे पीछे मुड़ के देखा और फिर मुँह फेर लिया, मगर हटी नहीं। मैं पूरी ताकत से भागता हुआ उसके पास पहुँच गया। गाड़ी के आते आते मैंने रोना को गोद में उठा लिया और लाइन से बाहर ले चला। गाड़ी सिर पर आ चुकी थी। उसकी भयानक आवाज़ मेरे कानों को फाड़े दे रही थी। बस मेरा एक पैर लाइन में रह गया था बाक़ी पूरा जिस्म बाहर था। फिश प्लेट से मैं टकरा गया और बैल बोटम एक बोल्ट से उलझ गई। मैं रोना को लिये हुये लाइन से बाहर गिर पड़ा। मेरी एक टाँग कट गई। मैंने उस हालत में भी रोना को नहीं छोड़ा, मुझे ख़ौफ़ था कि वह कहीं कृष्ण जी के चक्र की तरह घूमते हुये पहियों के नीचे न कूद पड़े। मेरी टांग को काटते हुये गाड़ी कायर क़ातिल की तरह स्टेशन की तरफ़ भाग गई। रोना उठ कर खड़ी हो गई। मैं केवल बैठ ही सका, क्योंकि मेरी टांग जिस्म से अलग कटी पड़ी थी, ख़ून बह रहा था। कुछ देर तो यह सब कुछ रोना देखती रही। मगर बहुत देर तक उस दर्दनाक सीन की ताब न ला सकी और नीचे गिर गई। उसको ग़श आ गया था। अब मैं उसकी मदद करने से विवश था। मुझे कुछ होने सा लगा था। मैंने दोनों हाथ सीने पर रखे और सीना सहलाया तो बटन में उलझा हुआ रोना का पफ़ मेरे हाथ में आ गया। मैंने उस को संभाल कर निकाला, चूमा और रख लिया। रोना कुछ कह तो नहीं रही थी लेकिन अफ़ीमची की तरह आँखें टिमटिमा देती थी। मैंने उससे कहा—

"रोना जीवन संघर्ष से हसीन बनता है जैसे ज़ंग लगा लोहा रगड़ने से चमक जाता है। तुम घबरा कर आत्म हत्या पर उतर आईं। आत्म हत्या ही प्रेम के लिये सब से बड़ी कुर्बानी नहीं होती है।" वह चुपचाप सुनती रही और टुकुर टुकुर देखती रही।

मुझे रेलवे पुलिस उठा कर ले गई और उसे भी कोई न कोई ले ही गया होगा। अगले दिन वह मुझे देखने अस्पताल पहुँची और अपने तपते हुये गाल मेरे होठों पर रख दिए और बोली 'मैं तो यह समझ रही थी कि अब अन्त हो जायगा। मगर तुमने मुझे बचा लिया। अब मैं समाज के बेजान उसूलों और निर्बल बन्धनों से नहीं डरूँगी और तुम्हारी होकर रहूँगी।"

उसकी यह बातें सुन कर मेरा आधा दुःख घट गया। मैंने उससे पूँछा—"क्या तुम घर वालों का मुक़ाबला कर सकोगी?"

“तुम्हारी क़ुर्बानी मुझ से सब कुछ करा सकती है” यह कहते हुए मेरे सीने से चिपट गई और रोती रही। उसी समय एक नर्स आ गई और मैंने रोना को सीधा बिठा दिया। उसका मुझ से अलग होना ऐसा लगा जैसे कोई दो जुड़े हुए शरीरों को चीर कर अलग कर दे। वह बैठी बैठी रोती रही। कुछ देर बाद वह न चाहते हुए भी मजबूरन घर चली गई। उसके जाने से मुझे ऐसा लगा जेसे मेरी जान निकल गई। मेरा बाज़ू भी फड़का, मेरी आंख भी लहकी। उसके बाद फिर वह मुझे आज तक नहीं मिली। उसका पफ़ उसकी आखिरी निशानी के रूप में मेरे पास अब तक सुरक्षित है।”

मैंने पूछा “वह कहाँ गई?”

“भगवान को प्यारी हो गई।”

“कैसे?”

“उसने विषपान कर लिया। क्योंकि घर वालों के ताने, लानत मलामत, गालियां उसको बरदाश्त न हो सकीं। इसके अलावा और चारा ही क्या था? मेरे अलावा वह किसी दूसरे से शादी नहीं कर सकती थी। कुन्बा उसके खिलाफ़ था।”

यह कह कर वह लँगड़ा ज़ार ज़ार रोने लगा और फिर हिचकी बँधी आवाज़ में कहने लगा “यही उसकी आख़िरी देन है। पफ़ के बालों की तरह मैं भी इस धन्धे के तुफ़ैल उसकी याद में उलझा रहता हूँ।” अन्धा मेरे पास से यों कहता उठा “भगवान मैं बिल्कुल ही अन्धा हो जाऊँ तो अच्छा रहे।”

“क्यों बाबा?” मैंने विस्मय से पूछा।

“ताकि ठोकरें खाता फिरूँ। मैंने भी तो किसी को ठोकरें खिलाई हैं, मुझे किसी का दिल दुखाने का नतीजा मिलना ही चाहिए।” यह कह कर वह चला गया। आई क्लीनिक के खुलने की बाट भी नहीं जोही। लँगड़ा सिर झुकाये कुछ सोच रहा था, मगर मैं इस राज़ को न समझ सका और न ही मैंने उस अन्धे से कुछ और पूछा।

■

“गाँव की इज़्ज़त”

नरौरा पावर हाउस के चीफ़ इन्जीनियर मिस्टर ब्रज मोहन पाँडे मय पत्नी और दो बच्चों के दिल्ली से एक बारात में शिरक़त फ़र्मा कर वापस लौट रहे थे। मथुरा रोड पर दौड़ती हुई कार अचानक ही मिसिंग करने लगी । ड्रायवर ने यह समझाते हुये कि पैट्रोल ट्यूब में कचरा फँस गया होगा, कुछ ध्यान न दिया । घड़ी की बात कि कार का मिसिंग स्वयं ही ठीक हो गया । सब की उदासी जाती रही । ड्रायवर गम्भीरता से कार चलाता रहा, मगर छः सात किलोमीटर के बाद ही कार में फिर वही हरकत हुई और फिर गाड़ी ऐसी रुकी कि टस से मस न हुई । गर्मी का समय था, ड्रायवर ने बहुत कोशिश की मगर बात समझ में नहीं आई । प्लक, प्लन्जर, कटाउट, पाइन्ट सभी कुछ देख डाले । वह अपने ज्ञान और अनुभव के अनुसार प्रकाम प्रयत्न कर चुका था । उसने माथे का पसीना पोंछा और सड़क पर दूर तक किसी आने जाने वाली गाड़ी को ताकने लगा कि किसी दूसरे ड्रायवर से अपनी परेशानी का हल निकाले ।

उसे एक लोडिड ट्रक आता हुआ दिखाई दिया, उसने फ़ौरन पेचकस बोनट पर रख कर उसको हाथ दिया । ट्रक बराबर आकर रुक गया । ट्रक ड्रायवर ने बाहर झाँका—

“कि गल ए ?”

“कार मिसिंग करके अचानक रुक गई, बहुत कोशिश करने पर भी बात समझ में नहीं आ रही है” कार ड्रायवर बोला ।

“चंगा जी” कह कर लम्बे चौड़े सरदार जी बाहर आये और उन्होंने ज़रूरी ज़रूरी बातों पर ध्यान दिया “पाई जी त्वाडा क्वाल फेल

ए, बिल्कुल जल गया ए" उन्होंने मोछों को सँभाला, कार की सवारियों पर नज़र डाली और बोले "मेरे नाल दिल्ली चलो होर ल्या के लगा लो, इस दे अलावा होर कोई चारा नहीं ए।" यह सुनकर ड्रायवर कुछ सुस्त हो गया और सोचने लगा। पाँडे जी ने नर्मी से कहा—

'सोचने का वक़्त नहीं है लो दो सौ रुपया और फ़ौरन जाओ, शाम हो रही है।" ड्रायवर सरदार जी के साथ चला गया। पाँडे जी ने घड़ी पर नज़र डाली फिर मील के पत्थर को देखा जिसके नसीब में जंगल में अकेले ही चुपचार खड़े रहना लिखा था और माथे पर अंकित था "दिल्ली ४१।" वह बड़बड़ाये और मन ही मन कहने लगे "दो घंटे तो आने जाने में लग जायेंगे और मार्केट में घूमना फिरना, सामान देखना भालना, ख़रीदना, कुल मिला कर चार घंटे अवश्य लग जायेंगे, यानी रात के दस बजे तक इस जंगल में सड़क के किनारे भूखे प्यासे बच्चों को लिये खड़ा रहना खतरे से ख़ाली नहीं है। मगर जायें तो जायें कहाँ?" पाँडे जी सोच रहे थे और उनकी पत्नी बच्चों से कह रही थीं—

"अगर तुम लोगों को प्यास लग रही हो तो उस रहट पर पानी पी आओ।"

"मम्मी जी वह मुसलमान है। देखो उसकी कितनी लम्बी दाढ़ी है, कहीं हम को मार कर कुँए में न डाल दे।"

"बेटी मुरादाबाद की घटनायें याद आ गई क्या? यह बातें शहरों ही में होती हैं, गाँव में नहीं होतीं। गाँव के लोग बड़े मेल जोल से रहते हैं। तुमने कभी किसी गाँव में करफ़्यू लगते सुना है?"

"नही सुना।"

"बस, तो जाओ। पानी पी आओ। देखो उन बड़े मियाँ से कहना बाबा सलाम, हम पानी पीना चाहते हैं क्या आज्ञा देंगे? अगर हाँ कर दें तो पानी पीना।"

"और अगर नहीं पीने दें तो प्यासे ही चले आयें?"

"बेटे वह तुम्हें पानी पीने से रोकेंगे नहीं, यह तो शिष्टाचार की बात है जो तुम को सिखा रही हूँ।" यह सुनते ही बच्चे उछलते कूदते पानी पीने चले गये। माँ उनको प्यार से देखती रही।

"मीना अब क्या होगा?" पीछे से कन्धे पर हाथ रखते हुये पाँडे जी ने पूछा।

"क्या बताऊँ क्या होगा? कार बड़े बेवक्त खराब हुई है। कोई बस्ती पास नहीं है। ऊपर से रात पंख पसारे चली आ रही है।"

"बाबू जी सलाम" दोनों की बातों के बीच में किसी ने पीछे से सलाम किया और उनको अपनी तरफ़ आकर्षित किया।

"सलाम भाई" उत्तर देते हुए पाँडे जी ने उसे ऊपर से नीचे तक देखा और ध्यान पूर्वक देखते रहे।

"बाबू जी कार ख़राब हो गई क्या ?"

"जी हाँ।"

"ड्रायवर कहाँ गया ?"

"दिल्ली से क्वाल लेने गया है।"

"बाबू जी वह तो काफ़ी रात गये लौट कर आयेगा तब तक आप मय बच्चों के यहीं जंगल में खड़े रहेंगे ? ज़माना ठीक नहीं है। सारे मुल्क की फ़िज़ा बिगड़ रही है। दिन दहाड़े पुलिस के सामने तो आदमी मादमी को मार देता है। कुछ दूर गाँव में मेरा घर है। आप इस रात मेरे महमान रहिए। दिन निकले अपने घर तशरीफ़ ले जाइये, तब तक ड्रायवर कार की ख़राबी दूर कर लेगा, आप आराम करें।'

यह सुन कर पांडे जी कुछ सोचने लगे। बच्चे पानी पी कर आ चुके थे। रहट चलाने वाला किसान इस तरफ़ मुंह उठाये देख रहा था। उसने रहट रोक दी और इधर चल पड़ा था।

"क्या कह रहे हो किरदार अली ?"

"ज़मीर अहमद मैं तो कुछ भी नहीं कह रहा हूँ।" किरदार अली ज़मीर अहमद को देखते ही कुछ घबरा सा गया और उससे बात न बन पड़ी।

"बाबू जी क्या कह रहा था यह लड़का ?" ज़मीर अहमद ने पाँडे जी से पूछा। पांडे जी ने उसके शब्द दुहरा दिए। "किरदार अली मैं गाँव का प्रधान हूँ, मेरे होते हुये यह ज़हमत तुम मत उठाओ। यह लोग मेरे घर महमान रहेंगे, तुम्हारे घर नहीं।" कहते हुये ज़मीर अहमद ने अपने घर चलने की दावत दी। पाँडे जी ने पत्नी की तरफ़ देखा। वह बोलीं—

'वास्तव में समय ख़राब है। यहाँ रहना ख़तरे से ख़ाली नहीं है। ऐसे समय में किसी को अपना बनाना ही अच्छा है। आगे ईश्वर को जो करना है करेगा और फिर यह तो किसान हैं।"

"क्या मतलब ?" पाँडे जी ने सवाल किया।

"किसान और मजदूर मक्कार नहीं होते, चालाक नहीं होते। इनसे किसी को नुकसान नहीं पहुँचता" वह बोली।

"बाबू जी अन्धेरा हो रहा है। जल्दी चलो" ज़मीर अहमद ने कहा "अगर आप यहाँ रहते हैं और कोई बात ग़लत हो जाती है तो मेरे गाँव की इज़्ज़त ख़ाक में मिल जायेगी क्यों कि आपकी कार मेरे गाँव की सीमा में ख़राब हुई है। आपने शहर तो देखे ही हैं आज गाँव भी देख लीजिये" बाबू जी की अटेची और बैलों की जोट संभालते हुए प्रधान जी ने कहा। इनकी समझ में आ गई और चल पड़े। ज़मीर अहमद तरह तरह की बातें करता चला जा रहा था। गांव आ गया। घर पहुँचे तो लड़कों ने बैल खूँटे से बाँध दिये। किरदार अली जमीर अहमद के इस रवैये पर नाख़ुश हो कर चला गया। बाबू जी तो उसको समझ न सके मगर ज़मीर अहमद ने इस हक़ीक़त को ताड़ लिया।

"फ़हीम और नईम !"

"जी अब्बा जान !" दोनों ने पास आकर अदब से कहा।

"देखो भई यह लोग आज रात तुम्हारे घर महमान हैं और तुम जानते हो कि मुसलमान को महमान के साथ कैसा सलूक करना चाहिए ?"

"जी हम ख़ूब जानते है।'

"बस तो बैठक खोल दो। इतनी ख़ातिर तवाज़े हो कि मेरे ख़ानदान और मेरे गाँव कीं इज़्ज़त पर हर्फ़ न आये। देखो उनसे पूँछ कर सारी ज़रूरत की चीज़ें अन्दर रख दो–चाय, चीनी, बरतन, नमक, चावल, दाल, तेल, पानी, दियासलाई और स्टोव। और देखो, जब तक यह लोग खाने पकाने से फ़ारिग़ न हो जायें बन्दूक लिये यहीं खड़े रहना, और जब यह सब तरह से निबट जायें तो आगे से जन्ज़ीर डाल कर ताला लगा देना और सड़क पर अपने रहट के पास उन की कार खड़ी है, उसकी रखवाली करना। रात भर जागते रहना है, जैसे अपनी बहन की शादी में रात भर जागे थे।" धीरे से कह कर ज़मीर अहमद अन्दर चला गया। "बहुत अच्छा अब्बा जान" उनके मुँह से निकला। वे सुनते तो सब कुछ रहे मगर पूछने की इच्छा होते हुये भी डर के मारे कुछ न पूछ सके कि महमान को ताले में बन्द करने का क्या मतलब है ?

अन्दर जाकर ज़मीर अहमद बच्चों से ईंटों के टुकड़ों का ढेर छत पर लगवाने लगे। दोनों भाई बाहर खड़े खड़े यह सब देख रहे थे। आपस में कानाफ़ूसी भी करते रहे मगर किसी नतीजे पर नहीं पहुँचे।

श्रीमती पाँडे ने खिचड़ी बनाली। प्रधान जी घी की भरी कनस्तरी और अचार का डब्बा ले आये।

"प्रधान जी यह क्या कर रहे हैं आप ?"

"बाबू जी भागवान महमान के हाथ से छूने पर चीज़ों में बरक्कत हो जाती है। जो कुछ बचेगा अन्दर चला जायेगा। मेरा तो ऐसा ख़याल है बाबू जी कि जिस दिन कोई महमान नहीं आता अपनी बदनसीबी समझता हूँ।"

"प्रधान जी आप जैसे सभी आदमी दुनियाँ में हो जायें तो दुनिया रश्के जन्नत बन जाये।"

"ज़र्रानवाज़ी का शुक्रिया। बाबू जी आज की रात आप किसी भी ज़रूरत से बाहर नहीं निकलेंगे, जब कोई हाजत हो तो अन्दर चले जाइये। बैठक से मिला हुआ गुस्लख़ाना भी है पाइख़ाना भी।"

"जब बाहर से ताला लगा होगा तो हम बाहर जाही कैसे सकते हैं।" बहू जी ने मुस्कुराते हुये कहा।

"बेटी तुमने सुन लिया था क्या जो मैं अपने बेटों को समझा रहा था। कहा तो बहुत धीरे से था। ख़ैर आज तुम सभी लोग मेरी बातों पर अमल करोगे। आदाब अर्ज़ हैं। फ़ीअमानिल्लाह।" कहते हुये ज़मीर अहतद भाला लेकर बैठक की छत पर जा बैठे और वहीं कुत्ते को बाँध लिया, पास में एक गुलेल और झोले में पके हुए मिट्टी के गुल्ले थे।

पाँडे जी और उनकी पत्नी इसी ऊहा पोह में रात भर सो नहीं सके। तरह तरह की बातें सोचते रहे। दोनों लड़के कार की रखवाली को सड़क पर जा चुके थे और दोनों अलग अलग पेड़ों पर चढ़कर बैठ गये थे। बाप की सख़्त ताकीद के मुताबिक़ रात भर चुप्पी के साथ जागते रहे।

इधर एक बजे के करीब गाँव में एक तरफ़ ज़ोर की रोशनी हुई। शोर मचा 'आग लग गई। आग लग गई" यह सुन कर बच्चे चोंके। उन्होंने सख़्ती के साथ बैठक की छत पर से कहा 'तुम्हारे मकान पक्के हैं। यहाँ तक आग नहीं आयेगी। सब अन्दर रहो बाहर निकलने की ज़रूरत नहीं है।" "चाहे जल कर मर जाओ।" छोटी बेगम ने धीरे से खिड़की पर मुँह रख कर कहा। ज़मीर अहमद के कान में यह भनक पड़ गई और उन्होंने फिर कहा "चाहे जल कर मर जाओ मगर बाहर नहीं निकलना है। हर एक अपने हाथों में कोई न कोई हथियार ले ले और मुस्तैदी से बैठा रहे।"

यों कह कर ज़मीर अहमद ने कुत्ते की जंज़ीर हाथ में ले ली और इधर से उधर घूमने लगे। औरतें अन्दर ही आपस में बातें करती रहीं कि हो सकता है हिन्दू लोग मारने को गाँव पर चढ़ आये होंगे और उन्होंने आग लगाई हो। वह तरह तरह की बातें सोचती रहीं।

पाँडे जी अपनी पत्नी से बोले "यह प्रधान पागल तो नहीं है कि गाँव में आग लगी है और कहता है कि घर से बाहर नहीं निकलना है। चाहे अन्दर ही जल कर मर जाओ। जब अपने घर वालों को निकलने की आज्ञा नहीं दे रहा है तो हमें बाहर क्यों

निकलने देगा। हमारा तो आगे से ताला लगा हुआ है। जो होगा देखा जायेगा, अब तो तक़दीर के हवाले कर दो। दिन बुरे न होते तो कार खराब न होती, वह भी शाम को और बयावान जंगल में।"

इस तरह दोनों सोच विचार रहे थे और परेशान हो रहे थे। अचानक ज़मीर अहमद की आवाज़ आई। "अलहम्दुलिल्लाह रब्बुल आलमीन, गाँव वालों ने आग पर क़ाबू पा लिया है और वह बुझ गई है।"

यह सुन कर सब के दम में दम आया। इस तरह रात के तीन बज गये और बेफ़िक्र होकर जैसे ही सबको नींद आने को हुई कि धाँये धाँये चार पाँच फ़ायरों की आवाज़ आई। सभी लोग फिर उठ कर बैठ गये।

"हाय अल्लाह मैं तो मर गया।" रात का सन्नाटा चीरती हुई तेज़ आवाज़ तमाम फ़िज़ा में फैल गई।

"किसी हिन्दू ने किसी मुसलमान को मार दिया।" हरेक के दिमाग़ में यही एक बात घूम रही थी, लेकिन ज़मीर अहमद के दिमाग़ में दूसरी ही बात थी। वह छत पर घूमते रहे और हालात का जाइज़ा लेते रहे। उन का कलेजा धक धक कर रहा था।

"आज फ़हीम या नईम में से किसी एक की जान ज़रूर गई है।" प्रधान जी के दिमाग़ में यही ख़याल रह रह कर आ रहा था। मगर उन्होंने कई तरह दिल को समझा रखा था। ढाढस बाँधे हुए इधर से उधर घूमते रहे। फ़ायरों के खौफ़ से तमाम गाँव के लोग सो नहीं पा रहे थे। चिड़ियाँ चहचहाने लगीं। सूरज निकलने के आसार नज़र आने लगे। ज़मीर अहमद छत से नीचे उतरे और बैठक का ताला खोला, पाँडे जी को सलाम किया और बाहर निकाला।

"दिन निकल रहा है साहब ज़रूरियात से फ़ारिग़ हो चुके हों तो नाश्ता कर लीजिये मैं दूध और बिस्कुट ले आया हूँ." उदासी पर काबू पाते हुये बोले।

"प्रधान जी आपने इतनी जल्दी यह तकलीफ़ क्यों की? इतने सवेरे तो हम लोग घर पर भी नाश्ता नहीं करते हैं। अब तो चलने ही दीजिये। नाश्ते के समय तो हम लोग आगरे पहुँच जायेंगे।"

यह सुन कर प्रधान जी मुस्कुराये और चुप हो गये। घर के छोटे छोटे बच्चे आस पास खड़े थे। "तुम लोग अन्दर जाओ" उन्होंने बच्चों से कहा और खुद सामान उठा कर पाँडे जी को कार के पास लाये। ड्रायवर कार के पास खड़ा मालिक का इन्तज़ार कर रहा था और बहुत ही घबराया हुआ था। फ़हीम और नईम भी उसी के पास खड़े थे। दोनों को सकुशल देख कर प्रधान जी की जान में जान आई और जो

ग़म तड़के से सता रहा था काफ़ूर हो गया। "फिर कौन मरा था रात में" पल भर को मन ही मन ज़मीर अहमद ने सोचा। "अरे यह क्या" कार के पास पहुँच कर डिक्की के पीछे पड़ी लाश को देखते ही उन के मुँह से निकला—

"यह तो वही आदमी है जो कल मुझे अपने घर महमान बनाना चाहता था। शायद किरदार अली नाम बताया था इस ने" पाँडे जी ने आगे झाँक कर देखते हुये कहा।

"जी हाँ यह वही किरदार अली है बदमाश कहीं का। ज़ालिम, बदचलन, बदकार।" होंठ बिचूरते हुए प्रधान जी ने आगे फिर कहा "इसको आप से बातें करते देख कर ही तो मैं कल शाम आपके पास आया था। मुझे सूझ रही थी कि यह ज़रूर आपको धोखा देकर आपको अपना महमान बना लेगा, फिर इज़्ज़त भी लेगा, जान भी लेगा और माल भी लेगा। इस रात के अँधेरे में आप का सब कुछ लुट जाता इसी लिये तो मैंने आपको अपने साथ ले जाने की ठानी थी।"

"हमें अन्दर बन्द क्यों किया था आप ने ?"

"मैं जानता था कि यह इस रात ज़रूर कोई साज़िश करेगा और वही किया भी। मकान के चारों तरफ़ इस के आदमी लगे रहे हैं। इसने गाँव में एक छप्पर में आग लगाई थी ताकि सब लोग बाहर निकल आयें और उसके छुपे हुये आदमी आपको उड़ा ले जायें और अपनी मज़मूम (नीच निकृष्ट) ख्वाहिश पूरी कर लें। लेकिन अल्लाह-ताला शैतान की तमन्ना पूरी नहीं होने देता। मैंने उन तमाम बातों को सोचते हुये ही यह इन्तिक़ाम किया था जिसका मतलब आप समझे नहीं होंगे। छोड़िये उसे और आप लोग कार में बैठिये और रूख़सत हो जाइये वरना कोई नई मुसीबत आ सकती है" जेब में हाथ डालते हुये ज़मीर अहमद ने कहा। सब लोग कार में बखुशी बैठ गये। ज़मीर अहमद ने इक्कीस रुपये निकाल कर श्रीमती पाँडे की तरफ़ बढ़ाये।

"यह क्या प्रधान जी ?" मीना ने पूछा।

"बेटी तुम नहीं जानतीं, हम लोगों के यहाँ से जब कभी बेटी विदा होती है तो खाली हाथ नहीं जाती है। लो रक्खो इन्हें फ़ी अमानिल्लाह।" मुस्कुराते हुये ज़मीर अहमद ने कहा। मीना ने वह रुपये माथे से लगा कर संभाल कर रख लिये। कार स्टार्ट हो गई, उसका धुँआ किरदार अली का मुँह काला कर के ऊपर उठ गया। ज़मीर अहमद ने नईम और फ़हीम को इशारा किया कि उस लाश को सड़क के किनारे गढ़े में खदेड़ कर डाल दें।

"बदले की भावना"

चारों तरफ़ घनघोर घटाओं के छा जाने से सूरज समय से पूर्व ही अस्त हुआ मालूम होता था। कभी कभार बादलों से वेवा के आँसुओं की तरह कोई कोई बूंद टपक जाती थी। नेक सिंह की बहू ने दरवाज़ा बन्द कर लिया था और खाना बनाने रसोई में चली गई थी। नेक सिंह अपने कमरे में बैठा दुकान का हिसाब किताब कर रहा था।

गोकुल फ़्लश से बाहर निकला जैसे कुरुक्षेत्र के मैदान में जयद्रथ-वध की शाम को बादलों से छुपा हुआ सूरज। उस ने आते ही नेक सिंह की आगे की कुन्डी लगा दी। बेचारा नेक सिंह चीखता चिल्लाता रहा "अरे भई मैं अन्दर हूँ। दुकान का हिसाब किताब कर रहा हूँ। मज़ाक क्यों करते हो? किवाड़ें तो खोलो। किशोरी देख तो यह कौन शख्स है जिस ने मेरे कमरे की बाहर से किवाड़ें बन्द कर दीं।

"अभी आई" किशोरी ने धुयें से लाल आँखें मलते हुये कहा। ज्यों ही वह सहन में बाहर आई उसने गोकुल के हाथों में चमचमाता हुआ लम्बा खुला चाकू देखा। वह ठिठक गई।

'ज़रा होठ हिलाये तो मूली की तरह गला काट दूंगा।" दाँत चबाते हुये गोकुल ने कहा।

"चाकू का भय मुझे चुप नहीं कर सकता गोकुल। तूने यहाँ भी मेरा पीछा न छोड़ा। आख़िर तू चाहता क्या है?" मुट्ठियों को भींचती हुई किशोरी गरजी। यह बातें कमरे में बन्द नेक सिंह भी सुन रहा था। गोकुल अपनी दृढ़ कामुक बाहों में ज़बरदस्ती किशोरी को जकड़ते हुये कमरे में ले गया और पलंग पर पटक दिया।

"तुम दोनों बादशाह की चिड़िया की भाँति मेरी मुट्ठी में कैद हो। तनिक भी हरकत की तो दोनों का काम तमाम करके चला जाऊँगा।"

इस तरह कहकर उस ने किशोरी को भी बन्द कर दिया और फिर वह नेक सिंह के दरवाज़े के सामने पहुंचा।

"नेक सिंह चुपचाप कमरे में पड़े रहो, अगर शोर मचाया तो दोनों की खैर नहीं है। शोर मचाने से होगा कुछ नहीं। इस समय कोई घर से बाहर नहीं निकलेगा, बिजली चमक रही है। बादल कड़क रहे हैं। हवा सनसना रही है।" गोकुल के यह शब्द नेक सिंह के कानों में ज़हरीले तीरों की तरह घुसते चले गये। उसने हालात की नज़ाकत का अन्दाज़ा लगा लिया था। वह कमरे के अन्दर इधर से उधर हथेलियाँ मसलता हुआ चक्कर काट रहा था। तरह तरह के ख़याल उसके दिलोदिमाग़ को परेशान किये हुये थे।

गोकुल लौट कर किशोरी के कमरे के दरवाज़े पर आ गया, किवाड़ें खोलीं, अन्दर दाख़िल हुआ, एक नजर में कमरे का जायज़ा लिया और फिर किशोरी के दहकते हुए बदन पर एक नज़र ग़लत डालते हुए बोला—

"बड़ा तड़पाया है तुमने, आज तो प्यास बुझा कर ही जाऊँगा। मायके में नहीं सुसराल में तो क़ाबू आ गईं। अब कहाँ जाओगी मुझ से बच कर" गोकुल विजेताओं के स्वर में बोला।

"गोकुल तू इतना नीच बन जायेगा मुझे उम्मीद न थी। तू तो मायके में मुझे बहन कहा करता था और यहाँ यह रूप धार कर आया है। तू मेरी इज़्ज़त से खेलना चाहता है कमीने। अब तो मेरा जिस के साथ ब्याह हो गया उसी की हूँ तेरी तो बहन ही हूँ। अभी कुछ नहीं बिगड़ा है वरना रावण की सी गत होगी। जा यहाँ से" किशोरी ने हिम्मत से कहा।

"किशोरी यह नसीहत मुझ पर बेअसर है। मैं ऐसी बातों का क़ाइल नहीं हूँ। यह तो दुनिया को दिखाये जाने वाले रिश्ते हैं। दिल से उनका दूर का भी सम्बन्ध नहीं होता। वक़्त की क़द्र करो। यह फ़िज़ा, यह हवा, यह घटा, और यह अदा" कहते कहते गोकुल ने किशोरी के दोनों हाथ पकड़ लिये।

"गोकुल देख तेरे भी दो हाथ हैं और मेरे भी। तू चाक़ू से मेरी जान ले सकता है मैं जानती हूँ मगर तुझे भी मालूम होना चाहिये कि मैं भी तेरी जान लेने के लिये एक घातक हथियार रखती हूँ। तेरी तो क्या तेरे खानदान तक की जान ले सकती हूँ" हाथों को छुड़ाने की नाकाम कोशिश करते हुये किशोरी बोली। दूसरे कमरे में बन्द नेक सिंह

को भी भनक पड़ रही थी मगर वह वेवस था, कसमसा कसमसा कर रह जाता था।

"वह कौन सा हथियार है ज़रा मैं भी देखूं" गोकुल हाथ छोड़ते हुये बोला।

"बद दुआ।" हाँफते हुये किशोरी ने कहा।

"अरे वाह ! मान गये तुम्हारे हथियार को। हारे हुओं का यही एक हथियार होता है किशोरी" यों कहते हुये उसने फिर उस को वाँहों में भींच लिया और कपोलों के चुम्बन को होंठ वढ़ाये। किशोरी ने अपना मुँह उस से बचा लिया और कई बार इस तरह उसकी कोशिश वेकार गई। वह चुम्वन न ले सका। एक वार फिर उसने हाथ छोड़ दिये और पलंग पर वैठ गया। किशोरी मैं तुमको खुद राज़ी हो जाने के ख़याल से आज़ाद कर हार मानकर वैठ गया हूँ। वरना जानती हो तुम अपने यह लाल फल से गाल ख़ुद मेरे होठों पर रख दोगी। औरत आदमी के मुक़ावले की ताक़त ही कहाँ रखती है ?" इस प्रकार कहकर गोकुल ने चाक़ू चमकाया।

"गोकुल तू इस चाक़ू से मुझ को जीत नहीं सकता। मुझे जीतने के लिये तुझ में हिम्मत ही नहीं है।" होंठ विचूर कर किशोरी ने कहा। नेक सिंह के कानों में यह स्वाभिमान के मदिरामय शव्द पहुँचे तो उसे किशोरी पर गर्व हुआ। पल भर को नेक सिंह के वाज़ू तने, मुट्ठियाँ कठोर हुईं मगर किवाड़ें वन्द थीं। वह वहीं सहम गया और दरवाज़े की दराज़ों से बातें सुनता रहा।

"तुझे जीतने का कौन सा हरवा मेरे पास नहीं है ?" अपने दमखम पर अकड़ते हुये गोकुल ने कहा।

"प्यार" वह वोली।

"प्यार ? अरे यह तो छोटी सी वात है। औरत मर्द के जिस्म में ताक़त और जेव में दौलत चाहती है, यही दोनों उस को हराते हैं।"

"कुत्ते; यह औरत नहीं रण्डी की विशेषता है। अगर तुझ पर प्यार का हथियार होता तो मेरी शादी तेरी साथ होती लेकिन तूने मेरे साथ शादी करने के लिये मेरे पिता जी पर गुन्डों का असर डलवाया जिससे तेरा वना वनाया काम विगड़ गया। अगर तू प्यार से मेरे बाप को प्रभावित करता तो वह मेरी शादी तेरे साथ करने में तनिक भी संकोच नहीं करते।" किशोरी की साँस फूल रही थी। माथे पर पसीना छलक रहा था। दूसरे कमरे में नेक सिंह भी यह बातें ध्यान से सुन रहा था और वह वास्तविकता का अनुमान लगा रहा था। अब वह सव कुछ जान गया था। यह सव कुछ क्या है और क्यों है ?

"अच्छा किशोरी तुम ने मुझे कुत्ता तो कहा है मैं भी तुम को कुतिया बना कर छोड़ूगा।" कहते हुये उसने चाकू की नोक पलंग के पाये में गाढ़ दी और दोनों हाथ उस के मांसल वक्षस्थल की ओर बढ़ाये। किशोरी ने सिर को झुका कर उसके दोनों कान कस के पकड़ लिये।

"अच्छा यह बात है मगर इनसे क़ीमती चीज़ तो मेरे हाथों में हैं।"

"तेरे हाथ मिट्टी की काया पर टिके हैं और मेरे हाथों में तेरी आवरू है नीच।" कहकर पल भर को किशोरी ढीली हो गई। उसने कुछ सोचा जैसे सरकार कुछ भी करने से पूर्व योजना बनाती है। गोकुल हालात अपने अनुकूल समझ कर उसके सीने से अलग हो गया और झटका मारकर कान छुड़ा लिये।

"किशोरी ज़ुबान की बहुत तेज हो" पेड़ू की तरफ हाथ बढ़ाते हुये उसने कहा। किशोरी ने सारी शक्ति बटोर कर दोनों टांगें समेटीं। गोकुल को इस अन्दाज़ में कोई ख़ुशी का पहलू उभरता नज़र आया और वह अपने हिसाब से सोचता रहा मगर किशोरी ने दोनों लातें कसकर उसके नाज़ुक हिस्सों पर दे मारीं और वह ग़ुलेल के गुल्ले की भाँति नीचे जा गिरा। किशोरी ने पाये में गड़ा हुंआ चाक़ू निकालने की कोशिश की परन्तु वह इस प्रयत्न में असफल रही। इतनी ही देर में उस दुष्ट ने सँभाला ले लिया और पलंग पर चढ़ गया और चाक़ू अपने हाथ में लेते हुये बोला "तुम भी जीत के लिये इस हथियार का सहारा लेने लगीं यह तो हमारी जीत का साधन है। तुम्हारी जीत का हथियार तो बददुआ है। करो बददुआ का इस्तेमाल प्यारी" कहते उसने साड़ी खींचना शुरू कर दी। किशोरी साड़ी पकड़े हुये थी मगर उसका दम फूल रहा था और अपनी कोशिश में असफल होती चली जा रही थी। उसके केश उसके पूरे चेहरे पर बिखरे हुये थे। उन्हें संभालने का समय भी नहीं था।

"मर्द के फ़ौलादी हाथों का मुकाबला औरत के नाज़ुक हाथ कभी नहीं कर सकते।" गर्व के साथ शरीर से साड़ी अलग करके ज़मीन पर एक तरफ फेंकते हुये उसने आगे कहा "अभी क्या है, यह पेटीकोट यह ब्लाउज़ सभी कुछ जिस्म से अलग कर दूँगा। मैं औरत के जिस्म की कुदरती ख़ूबसूरती देखना चाहता हूँ। रूप और नजर के बीच में कपड़ों की दीवार मुझे गवारा नहीं है। बहुंत दिनों से तड़प रहा हूँ तुझ जैसी आज की द्रोपदी के लिये। कृष्ण आकर तेरी मदद करने से रहे, आज तो जो मैं चाहूँगा वही होगा किशोरी" गर्वित शब्दों में वह बोला।

"वह सब की मदद करता है कमीने! मेरी भी मदद करेगा। वह हर जगह है। सब पर नजर है उसकी।"

"अच्छा देख लेंगे तेरे कृष्ण महाराज को भी" और जोश में आकर गोकुल ने

पेटीकोट के कमरबन्द की तरफ़ हाथ बढ़ाया। किशोरी की आँखों में खून उतर रहा था। वह दुर्गा बनी हुई थी नागिन की तरह फनफना रही थी। मुट्ठियाँ भींच रही थी और सोच रही थी। प्राणों का मोह छोड़कर जब कोई आन की रक्षार्थ कदम बढ़ाता है तो उसमें अद्वितियी बल और पुरुषार्थ आ जाता है। वह कमरबन्द की गाँठ खोलने में लीन था। उसने पेट तनाया जिससे गाँठ खोलने में बाधा उत्पन्न हुई। उसने गोकुल का तमतमाता हुआ चेहरा देखा और क्रोध बढ़ा और वह और से और हो गई। उसने गोकुल के गालों पर दोनों हाथों से कस कस के घूँसे थप्पड़ मारने शुरु कर दिए। उस की कलाई की चूड़ियाँ भी खामोश नहीं रहीं। एक चूड़ी टूट कर उसके गाल के आर पार हो गई। मजबूरन उसने कमरबन्द छोड़ दिया और गाल में फंसी चूड़ी को निकालने लगा। किशोरी को अपना अन्जाम दिखाई दे रहा था। इसलिए उसने लातों और घूंसों के वार कम नहीं किए। अब गोकुल पर चोटें तो हो ही रही थीं आबरू पर भी आँच आनी शुरु हो गई थी। उसके अहम ने उसके विचारों को नया मोड़ दिया। वह दाँत किटकिटाके उसके गालों पर झुका। किशोरी ने बुरी तरह उसके मुँह पर थूक दिया।

गोकुल घिन्निया के उसे पोंछने लगा। बदले की भावना ने ज़ोर पकड़ा और तैश में आकर उसने अपना चाक़ू उसके पेड़ू में घुसेड़ दिया। फटी हुई खाल से आंतें धीरे-धीरे बिल से बाहर निकल रहे साँप की तरह सरकने लगीं।

"क्यों कुत्ते तेरा चाक़ू तेरी हार का कारण बना कि नहीं ? जीत मेरी हुई। देख कृष्ण जी ने कैसे मेरी मदद की। तेरी कोशिश बेकार गई और मे...र...ी......" कहते कहते उस की ज़ुबान लड़खड़ा गई और वह निढाल हो गई। गोकुल को ऐसा महसूस हुआ जैसे किशोरी दूसरी बार उसके मुँह पर थूक रही है। उसने चाक़ू पर नफ़रत की नज़र डाली और बिना कुछ सोचे विचारे फ़र्श पर पटक दिया जैसे कि उसकी चन्चल आत्मा ने किशोरी के अन्तिम शब्दों को स्वीकारा हो। चाक़ू के फ़र्श पर पटकने की आवाज़ से नेक सिंह चौंका। इससे पहले उसको कोई आवाज़ साफ़ सुनाई नहीं दी थी। फिर किवाड़ें खुलने की आवाज़ उसके कानों में पड़ी फिर सदर की किवाड़ें खुलने की आवाज आई। अब नेक सिंह को यह महसूस हो गया था कि गोकुल बाहर चला गया है।

"किशोरी ! किशोरी !! ओ किशोरी !!!" नेक सिंह ने चीख़ कर पुकारा मगर कोई आवाज़ नहीं आई। किशोरी मालूम होता है कि तू वीरता के साथ ज़ालिम से आबरू बचाने में सफल हो गई मगर मुझे अकेला छोड़कर चली गई है। तूने जान दे दी और आबरू न दी। हर आदमी मँहगी चीज़ की तरफ भागता है। जान से मँहगी चीज़ आबरू होती हैं। तू ने ठीक किया।" नेक सिंह बुदबुदाता रहा। इतने में ही टोमी

पालतू कुत्ता अन्दर दाख़िल हुआ जो शाम को किवाड़ें बन्द होते समय धोखे से बाहर ही रह गया था। घड़ी भर में उसने सारे कमरे का चक्कर लगाया। कुत्ते के भोंकने की आवाज़ सुनकर नेक सिंह ने कहा ‘‘नमक हराम अब आया है। वक़्त पर तू ने भी पीठ दिखा दी, जिस मालकिन ने तुझे बेटे की तरह पाला था उसके दुख में पल भर को शरीक न हो सका।" यह सुनकर कुत्ता वाहर ख़ड़ा खड़ा पन्जों से किवाड़ों को खुरचता रहा जैसे कि वह अपनी मजबूरी और हमदर्दी की सफ़ाई पेश कर रहा हो कि तुमने मामूल के मुताबिक उसको आवाज़ देकर अन्दर बुला कर किवाड़ें बन्द क्यों नहीं की थीं ?

दिन निकले मीटर रीडर आया तव नेक सिंह के कमरे की किवाड़ें खुलीं। सारा घर सुनसान था। टोमी जो मालकिन की लाश के पास बैठा बैठा रो रहा था, नेक सिंह की टाँग से आकर चिपट गया। ‘हट यहाँ से" लात मारते हुये नेकसिंह ने कहा। वह सहम गया। नेक सिंह अपनी प्यारी के पलंग के पास गये। कुत्ता भी वहीं जाकर बैठ गया। उसने मालकिन के ख़ून से ज़ुबान तक भी नहीं लगाई थी। ख़ून फ़र्श पर फैला पड़ा था। आंतें मरे हुये सांप की तरह फूल गई थीं। नेक सिंह को उसके मरने का एहसास तो हो गया था लेकिन इस तरह शहीद हुई है, इस का पता न था। इस दुर्गत को देख कर उसे बहुत दुख हुआ। वह किशोरी के सिर पर बड़े ज़ब्त के साथ हाथ फेरते हुये वोला—

‘‘आबरू के लिये जान पर खेलने वाली वीरांगना तुझे शावाश है। तूने जीवन के अस्ल मन्शे को प्राप्त कर लिया और मायके वालों, सुसराल वालों, अपनी और मेरी नाक ऊँची कर दी। धन्य है तू" यह कहते कहते नेक सिंह आठ आठ आसू रोने लगा।

कुत्ता दुम हिला रहा था। उसने मालकिन के पैरों के तलुये चाटने शुरु कर दिये। आँसुओं से पूर्ण नेत्रों से नेक सिंह ने उसे देखा और देखता ही रहा। वह सोच रहा था कि कैसा अजीब जानवर है, गोश्त खोर होते हुये ख़ून की एक बूंद भी नहीं चाट रहा है।

उसने किशोरी के शरीर को एक बार फिर देखा और काँपते होंठों को दाँतों में कर बड़े ज़ब्त के साथ खड़ा हुआ और उसके चहरे पर नज़र जमाये हुये कहने लगा—

‘‘क़िशोरी तेरे प्यार की क़सम खाकर कहता हूँ कि मैं भी इस ख़ून का वदला ज़रूर लूँगा।"

पुलिस को रिपोर्ट हुई, तमाम मुहल्ले वाले आ आ कर जमा हो गये। जो होना था हुआ। इस घटना के तीन दिन वाद नेक सिंह की वेक़रारी और दिमाग की हालत ग़ैर होने लगी। घर काट खाने को दौड़ता था। हर चीज़ में छुरे ही छुरे नज़र आते

थे। दिन तो घूम फिर कर कट ही लेता था, रात मुसीबत से कटती थी। रात भर नेक सिंह कभी किशोरी की चूड़ियाँ और गहने घन्टों चूमता रहता था। पहरों उसकी साड़ियों में मुँह लपेटे रोता रहता था। जिस पलंग पर उसने सुहाग रात मनाई थी उसी पर उसका फ़ोटो रखकर पाइंत की तरफ़ ज़मीन पर बैठ जाता था। कब कब की बातें याद आती थी उसे, आँसूओं से भरी आँखें भी कुछ याद करके मुस्करा देती थीं। वह उसकी चप्पलों को हाथों में पहन लेता था। कई बार तो उसने किशोरी की चोटियों को गले में लपेट कर आत्म हत्या करने की सोची थी मगर कोई ताक़त उस को यह समझा कर रोक देती थी कि किशोरी ने तो आन की ख़ातिर जान दे दी। तू किस लिए जान खोता है ? और वह रुक जाता था। उसको मौत का बदला लेना था। आत्म हत्या यह समस्या हल थोड़े ही कर सकती है ?

नेक सिंह आधा पागल सा हो गया था। इस दुख को उस का दिमाग़ बरदाश्त नहीं कर सका था। लोग उसके दिमाग़ की हालत का अनुमान इसी बात से लगाने लगे थे कि वह श्मशान में जाकर घन्टों उसके हरिद्वार को ले जाने के लिये रखे हुए फूलों (जली हुई हड्डियों) से बातें करता था और चूमता रहता था। बेजान चीजों से सिया वियोग में राम की तरह बातें करना उसके पागलपन ही का सुबूत था। जो भी उसकी हालत देखता दुखी होता था मगर कोई भी उसके लिए कुछ नहीं कर सकता था। सिर पर रखा भार हो तो कोई उतार ले। एक रात ग्यारह बजे चाकू लेकर नेकसिंह सुसराल जा पहुँचा और गोकुल का घर मालूम कर के दरवाज़ा जा खटखटाया।

'कौन है ?" अन्दर से आवाज़ आई। आवाज़ ज़नानी थी। शायद उसकी बीवी बोल रही थी। गोकुल घर नहीं था, कहीं डकैती को गया होगा।

"खोलो तो सही।" धीरे से नेक सिंह ने कहा। बीवी बच्चे को सुला रही थी। वह उठी और सोचती हुई दरवाज़े की तरफ़ बढ़ी कि गोकुल का कोई संगी साथी आया होगा किसी ख़ास काम से जैसा कि पहले होता आया है। उसने किवाड़ें खोलीं "क्या काम है ? कहाँ से आना हुआ ?"

"गोकुल मेरा मित्र है वहीं से आया हूँ।'

"घर नहीं है। बाहर गये हैं। वहीं से कहाँ से आये हो ?"

"अन्दर दाखिल तो होने दो फिर सारी बातें समझा दूँगा।"

"आइये" वह हैरत के मूड में बोली।

"आपसे मिलने आया हूँ" होश सँभालते हुये नेक सिंह बोला।

"मुझसे मिलने और अभी अभी तो गोकुल से मिलने को कह रहे थे।"

"वह तो एक बहाना था, मिलना आप ही से है।"

"भाई साहब आदमी आदमी से मिलता है। औरत औरत से मिलती है। आपकी दोस्ती गोकुल से है कमला से नहीं।"

"तुम ठीक कहती हो, लेकिन गोकुल ने मुझे यही सिखाया है कि लोगों के घरों में घुस जाओ और उनकी औरतों की आबरू ले लो और फिर उन की जान भी ले लो। बस हो जाओ तैयार।" चाकू खोल कर और मजबूती से पकड़ कर चाकू को चमचमाते हुये कहा। यह देखते ही कमला का कमल सा चहरा मुर्झा गया। उसके पैरों तले से ज़मीन निकल गई। वह कुछ समझ न पाई।

"तुम चाहते क्या हो, तुम मेरी जाँच लेने आये हों या जान लेने ?"

'फ़ौरन साड़ी उतार दो। देर का मौक़ा नहीं है। ज़रा भी आनाकानी की तो इस बच्चे को पैरों तले कुचल दूँगा और यह चाक़ू तुम्हारे गले के पार कर दूँगा।" यों सख्ती से कहा कि कमला सहम गई। एक नज़र बच्चे पर डाली और एक नज़र ज़ालिमाना रूप धरे नेकसिंह पर और साड़ी उतार कर रख दी। इसके अलावा कोई चारा ही नज़र नहीं आता था।

"ब्लाउज़ भी उतार दो" उसने इस की तामील की। अब पेटीकोट और अँगिया ने उसका पर्दा रख लिया था। 'पेटीकोट उतारो" नेकसिंह ने सख्ती से कहा। वह इस वार ठिठकी और हाथ कमरबन्द की गाँठ पर आकर ठहर गया जैसे साहिल पर प्रवाहित कमल के फूल। उँगलियाँ कांप रहीं थीं जैसे कमरबन्द एक नाग था।

"ए कुतिया रुक क्यों गई ? क्या सोच रही है ? अच्छा तो यह मैं खुद ही करता हूँ।" चाक़ू हाथ में लिये नेकसिंह उसकी तरफ़ बढ़ा। यह देखते ही उसकी उँगलियाँ गांठ खोलने जैसा सांग करने लगीं। "ठहरो" नेकसिंह ने कहा। वह कोई सुनहरी आस लिये तत्काल रुक गई मगर उसका शरीर कांप रहा था। नेक सिंह ने उसके शरीर को नीचे से ऊपर तक देखा फिर दूसरी तरफ़ गुटरगूँ गुटरगूँ करता हुआ बच्चा देखा, "अगर यह चाक़ू तुम्हारे गले के पार हो जाये तो क्या होगा ?"

"जान निकल जायेगी" कमला ने कहा। उस वक़्त वह पसीना पसीना थी। "और उसके ऊपर चढ़ कर खड़ा हो जाऊँ तो ?" बच्चे की तरफ़ इशारा करते हुये नेक सिंह ने कहा। कमला ने आँखों पर हाथ रख लिये और कुछ बड़बड़ाई जो समझ में नहीं आया। "सुनो" नेक सिंह ने कहा। कमला के यह शब्द थप्पड़ सा लगा उस ने देखा "तुम मुझ से अपनी आबरू बचा सकती हो ?"

"नहीं।"

"मैं जो चाहूँ कर सकता हूँ?"

"हाँ" कुछ रुक कर वह फिर बोली "लाखों में कोई औरत ऐसी निकलती है जो मर्द का मुकाविला कर सकती है और आबरू बचा सकती है मगर मुझ में वह ताकत नहीं है।"

"बताओ तुम क्या चाहती हो ?"

"आवरू और ज़िन्दगी।" हाथ जोड़े हुये कमला गिड़गड़ाई।

"मगर तुम्हारे शौहर ने ऐसी दया करनी सिखाई नहीं इसलिये मैं सब कुछ करूँगा। आवरू भी लूँगा और जान भी" कहते हुए नेक सिंह आक्रोश और आवेश में चाक़ू लेकर कमला की तरफ़ बढ़ा। वह ख़ामोश खड़ी थी जैसे कि उसमें जान ही नहीं थी। नेकसिंह ने कमला को दोनों बाजुओं में ऐसे ले लिया जैसे मुद्दत के बाद भाई बहन से मिलता है। कमला ने कुछ विरोध नहीं किया। वह अलग हो गया।

'मैं हथियार की जीत पर विश्वास नहीं करता। मैं तेरी ख्वाहिश मन्ज़ूर करता हूँ। न जान लूँगा न आवरू। तेरा ही शौहर यह काम कर सकता है, मैं नहीं।" कहते कहते नेक सिंह ने चाक़ू ज़मीन पर पटक दिया और बाहर को चल दिया। कमला के ज़िस्म में ऐसे जान आ गई जैसे ठण्ड से सिकुड़े हुये सांप को धूप की तपिश लगने पर आती है। 'ऐ नेक इन्सान तेरा नाम क्या है ?" कमला ने पीछे से पूछा।

"अपने वाक्य में खोज ले" कहता हुआ नेक सिंह रात के अँधेरे में चला गया। कमला किवाड़ें वन्द करके अन्दर चली आई। वह रह रह कर सोच रही थी कि अवश्य बदले की भावना से प्रेरित होकर यह किया गया था। उसके शौहर से जरूर कहीं कुछ जुल्म हुआ है। यों सोचते सोचते उसने साड़ी उठाई, पहनी फिर चाक़ू उठाया— "अरे यह चाक़ू उसके पास कैसे पहुँचा ? यह तो वही चाक़ू हैं जो रामलीला के मेले में गोकुल ने ख़रीदा था और अपना नाम खुदवाया था" चाक़ू को घुमा फिरा कर देखती जाती थी और सोचती जाती थी। इसी बीच में किसी ने फिर किवाड़ खटखटाई लेकिन वह इतनी डरी हुई थी कि वह बोली ही नहीं। उसकी ख़ामोशी पर फिर कोई बोला—

"कमला सुनती नहीं है क्या !" कमला गोकुल की आवाज़ पहचान कर उठी और किवाड़ें खोल दीं।

"यह क्या ?" कमला के हाथ में अपना चाक़ू देख कर अचरज से गोकुल बोला क्यों कि वह इसको तो नेक सिंह के फ़र्श पर फेंक आया था "यह तो मेरा चाक़ू है।"

"जी हाँ बिलकुल आपका चाक़ू है और इस पर आपका नाम भी लिखा हुआ है" उस की तरफ़ बढ़ाते हुये कमला बोली।

"यहाँ कैसे आया ?" गोकुल ने घबराये हुये स्वर में कहा। कमला ने जवाब में सारी कहानी दुहरा दी। वह यह सुन कर रोने लगा। कमला उसके रोने का कारण न समझ पाई। गोकुल का मन खुद उसे फटकार रहा था।

इधर नेक सिंह पर किशोरी की मौत का सदमा और ग़म बराबर बढ़ता चला जा रहा था और वह मस्तिष्क का सन्तुलन खो बैठा था। जंगल जंगल मारा फिरता था। अब उसकी यह हालत थी कि कोई भी लाल चीज देख लेता था तो फ़ौरन "खून खून" कह उठता था।

एक दिन गोकुल अपनी बीवी और बच्चों के साथ रिक्शा में सिनेमा देखने जा रहा था। नेक सिंह पुलिया की आड़ में बैठा नीची नजर किये दूब घास के तिनके चबा रहा था। रिक्शे की खड़खड़ाहट से वह चौंका, सुर्ख साड़ी देखते ही वह चिल्लाने लगा "खून खून।"

उन लोगों ने उधर देखा "यही था उस रोज़" कमला के मुँह से अचानक निकला—"यह वही है।"

गोकुल ने भी नीची नज़रों से और रिक्शा वाले ने पीछे मुड़ कर देखा। पागल खून खून चिल्लाये जा रहा था। उसी वक़्त एक ईंट रिक्शे के पहिये के नीचे आई और उसका सन्तुलन बिगड़ गया। पहिये का रिम अचानक टेढ़ा हो गया और तेज रफ़्तार रिक्शा उलट गया। पीछे चला आ रहा तेज़ रफ्तार ट्रक सड़क पर पड़े माँ बेटे को कुचलता चला गया।

पागल फिर चिल्लाया "खून खून"। किसी ने भी उसकी आवाज़ नहीं सुनी थी मगर वह बराबर चिल्लाये जाता था।

"बाबू जी मेरी तो कोई खता नहीं है" दोनों लाशों को गौर से देखते हुये रिक्शे वाले ने गिड़गिड़ा कर कहा।

"वाक़ई तेरी कोई खता नहीं है" गोकुल बोला। रिक्शे वाला एक तरफ़ घबराया हुआ खड़ा था। रहागीरों का झुंड लग गया। सब की नज़रें माँ बेटे की लाश पर थीं और गोकुल देख रहा था पागल की तरफ़। गोकुल को किशोरी की बददुआ याद आ रही थी और वह सोच रहा था कि नये दौर की द्रौपदी की बददुआ भी असर रखती है।

■

“इन्सान का दिल”

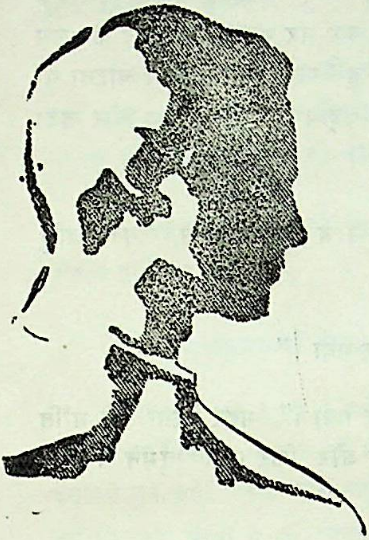

सेन्ट ईव डब्लू ट्लेल्व नम्बर थ्री वैस्ट लन्डन में स्थित जोसेफ़ विला के मालिक और सेंट मेरी चर्च के मालदार पादरी का इकलौता लड़का विसकान्सन यूनिवर्सिटी, यू०एस० ए० का ग्रेजुऐट और हिन्दी में एम० ए० मिस्टर जान ग्लोरी ब्लाइद हिन्दी में डाक्ट्रेट की डिग्री लेना चाहता था। अपने वाप से आज्ञा लेकर वह भारत आया। यह काम इंग्लेण्ड में भी हो सकता था लेकिन भारत में रह कर हिन्दी में डाक्ट्रेट की डिग्री हासिल करने की वात ही दूसरी है।

भारत आते ही वह सवसे पहले डाक्टर त्रिभुवन चन्द्र शर्मा हेड आफ दि हिन्दी डिपार्टमेंट देहली यूनीवर्सिटी देहली से मिले। डाक्टर शर्मा से उनकी भेंट लन्दन ही में पहले हो चुकी थी जब कि मुस्लिम कान्फ्रेंस में सम्मिलित होने के लिये डा० इकबाल भी लन्दन में थे। डा० शर्मा डा० इकबाल को लेकर उसके पिता जोसेफ़ से मिलने जोसेफ़ विला गये थे। उस के बाद डा० शर्मा कई वार वहाँ आये गये थे। जोसेफ़ पं० जवाहर लाल नेहरु के साथ हैरो स्कूल में पढ़ चुके थे।

मिस्टर ब्लाइद इस परिचय की विना पर एक लम्बे समय तक उनके मकान पर रहे। मिस्टर ब्लाइद ने हिन्दी में थीसिस लिखने के लिये विषय चुनने से पहले यहां के प्रसिद्ध धार्मिक और ऐतिहासिक स्थानों की सैर करने की ठानी। दिल्ली से आगरा और मथुरा पास पड़ते थे। सवसे पहले उन्होंने इन्हीं स्थानों का दौरा किया। कार ले ही रखी थी जिस पर एक भारतीय ड्रायवर रख लिया था। मथुरा से आगरा और आगरा से फ़तेहपुर सीकरी को रवाना हो गए। कार बलन्द दरवाजे पर जाकर रुक गई। मिस्टर ब्लाइद जैसे ही कार से वाहर निकले कि एक सात आठ साल का लड़का एक छ: सात मास की लड़की को गोद में लिये उनकी तरफ़ बढ़ा।

“क्या है ? अलग हट।” भारतीय ड्रायवर ने कठोर स्वर में उसको डांटा। मिस्टर ब्लाइद को नफ़रत का यह अन्दाज़ पसन्द नहीं आया और उन्होंने आगे वढ़ कर

प्यार से उस लड़के को अपनी तरफ़ बुलाया। लड़का पास आया। उसके दिये से हाथ मांगने के लिये अभी तक फैले थे।

"तुम भीख मांगते हो। तुम्हारे माँ बाप नहीं हैं ? मिस्टर ब्लाइद ने उसके सिर पर हाथ फेरते हुये सवाल किया।

"मेरी माँ मुझे पांच साल का छोड़ कर मर गई थी। पिता पिछले साल एक सेठ की कोठी पर ईंटें लेकर चढ़ते हुए नीचे गिर कर मर गए" इतना कह कर उस लड़के की आँखों में आँसू आ गये और होठ हिलते रह गए। वह बोलना चाहता था मगर आगे कुछ न कह सका। गला रुँध गया। ड्रायवर निन्दित एक ओर खड़ा देख रहा था।

"तुम्हारा कोई भाई नहीं है ?" मिस्टर ब्लाइद ने अपने रूमाल से उसके आँसू पोंछते हुये पूछा।

"मेरा कोई भाई नहीं है। मेरा भगवान भी मर गया।"

"तुम्हारा कोई नहीं है, तुम्हारा भगवान भी मर गया।" मदर टेरेसा की भाँति विनम्र भाव से उन्होंने उस के शब्द दुहराये, कुछ ठहरे और फिर पूछा "तुमने भगवान को देखा है ?"

"हाँ देखा है, मैं पिटता रहा और वह देखता रहा और जबकि मैं देखता था तब भी उसने मेरे साथ इन्साफ़ नहीं किया।" वह सुबक सुबक कर बोला। बच्चे की बातें बलन्द दरवाज़े से भी बलन्द मालूम हो रही थीं। मिस्टर ब्लाइद पसीज गये और उसको अपनी सीट के पास बिठा कर बातचीत करने लगे। ड्रायवर भी बातों में रस ले रहा था।

"तुम कहाँ पिटते रहे और भगवान कहाँ देखता रहा ?"

"बाबू जी, जब मैं पांच साल का था तब मेरी माँ ने एक लड़की को जन्म दिया था, वह पैदा होते ही मर गई। यह बात मैं अब जानता हूँ। उस समय मैं मरने जीने की बात समझता ही न था। मेरी माँ और मेरे पिता ने मुझे समझाने के ख़याल से मुझ को बताया कि लड़की को शंकर भगवान के चरणों में छोड़ आये हैं उन्होंने मांगी थी। अब उसको बड़े होने तक वही पालेंगे। मेरी उम्र कम थी। कुछ कच्ची अक़्ल थी, मान गया, लेकिन दिल में अनेकों शक जन्म लेते रहे। शंकर भगवान ने मेरी बहन क्यों मांगी है ? वह बड़े होने तक उसको क्यों पालेंगे ? क्या वह हमें उसे देखने भी नहीं देंगे ? इस तरह की अनेकों बातें मैं सोचता रहा और जब मेरे माँ बाप दोनों ही सो गये तो मैं

चुपके से उठा और घर से बाहर निकल गया। इस मौक़े की तलाश में मैं बहुत देर से जाग रहा था। सीकरी से बाहर सड़क के किनारे एक छोटा सा मन्दिर था जिस को शंकर भगवान का मन्दिर कहते थे। मैं अन्धेरे की छाती चीरता वहां जा पहुँचा और बहिन को ढूँढने लगा। मुझे मेरी नन्हीं सी सुन्दर बहिन कहीं भी नज़र नहीं आई, वहां कोई भी आदमी नहीं था। मैंने हिम्मत से काम लिया और भगवान शंकर के पीछे उचक कर देखने के लिये शंकर जी के सिर पर हाथ रखा ही था कि पीछे से पुजारी आ गया और कड़क कर बोला —

"उल्लू के पट्ठे मूर्ति की चोरी करने आया है। ज़रा सा बालक है और इतना बड़ा साखा करता है। खूब सिखाया है तेरे गिरोह के मालिक ने। पकड़ा जाये तो बालक कहलाए और नहीं तो माल साफ़ कर जाये।"

यों कहते कहते वह मेरे सिर पर ही आ गया और खूब पिटाई की। क्या में बेखता तहीं था ?"

"हाँ तुम बेखता थे" मिस्टर ब्लाइद ने तस्दीक करते हुये कहा।

"तो फिर वह चुपचाप क्यों देखता रहा" अपने सवाल का जवाब सुने बग़ैर ही वह लड़का जिस के भाव ज्वार भाटे की भांति उमड़ रहे थे फिर बोला। 'पुजारी ने घसीटते हुये कहा "चल थाने वहां तेरे गिरोह का पता भी चल जायेगा।" बाहर सड़क पर एक पति पत्नी ने, जो पिक्चर देख कर आ रहे थे, पुजारी को समझा बुझा कर मुझे छुड़वाया। मैं घर आकर लेट गया। बिस्तर ठन्डा हो गया था, मैं पछता पछता कर रोने लगा, खूब रोया। माँ बाप दोनों ही सोये हुये थे। एक बार मेरे तेज़ रोने की आवाज़ से पिता जी चोंक पड़े, हालांकि मैं यही समझ रहा था कि मेरी आवाज़ तेज नहीं होगी क्योंकि ग़रीब और दुखी की आवाज़ कमज़ोर होती है। उन के मुँह से निकला—

"क्यों बेटा ? क्या बात है ? क्यों रो रहा है ?"

मैंने कुछ नहीं कहा बस रोता ही रहा। वह उठ कर बैठ गये और वही बात फिर दुहराने लगे। मैं अभी तक चुप था और सुबक सुबक कर रो रहा था, और मैं इस परेशानी में था कि कहूँ तो क्या कहूँ। सही बात कह देता तो भी मुसीबत आ जाती। वह पुजारी जी को जा पीटते या फिर मुझे मारने लगते कि तू बिना पूछे घर से बाहर रात में अकेला क्यों गया था ? वह मेरी खमोशी पर आग बबूला हो गये और मेरी पिटाई करने लगे। अब माँ भी जाग गई थी। उसने उनको डांटा।

"क्यों रात में पीट रहे हो, अरे बच्चा है, कोई डरावना सपना देखा होगा, चुप हो जायेगा। बेचारे को सुलाने से तो गये, उल्टी पिटाई करनी चालू कर दी। मुझ से

पूछो कितनी तकलीफ़ उठाती हूँ और फूल की एक सन्टी तक नहीं मारती। खबरदार जो मेरे लाल को मारा।"

माँ के यह शब्द सुन कर बाप ने पिटाई बन्द कर दी तो माँ ने मुझे पास बुला कर अपने पास सुला लिया और मेरी कमर तथा सिर के बाल धीरे धीरे इस प्रकार सहलाती रही कि बाबू जी मेरी दोनों पिटाईयों की तकलीफ़ समाप्त हो गई। मेरा शरीर बिल्कुल हल्का हो गया। पता ही नहीं चला कि मैं कब सो गया। मगर बाबू जी, मेरी माँ का यह प्यार मेरे लिए आखिरी था। उसको सुबह को बुख़ार आया। दोपहर को दौरे पड़ने शुरू हो गए और शाम तक वह चल बसी।" लड़के की गोद में छोटी बच्ची रोने लगी. उसने एक काग़ज़ में से हलुआ सा निकाला और उसको चटा दिया। वह मुँह चलाने लगी और चुप हो गई। इसे देख कर मिस्टर ब्लाइद ने पूछा—

"यह तुमने क्या खिलाया?"

"मैंने आलू उबाल कर पीस कर उसमें चीनी मिला रखी है। यही खिला खिला कर इसको पाल रहा हूँ।"

"यह बच्चा किसका है?"

"म्यूनिसिपेलिटी के सामने सीढ़ियों पर यह लड़की पड़ी थी। रो रही थी। मैंने इस को उठा लिया। कुछ देर तो मैं हिला हिला कर चुप कराने की कोशिश करता रहा, मगर इसकी माँ नहीं लौटी। कई घन्टे बीत गये, कोई नहीं आया तो इस का बराबर रोना मुझ से देखा न गया। इसे अपने साथ ले लिया और अब तक पाल रहा हूँ। यहाँ आने वाले अमीरों से माँगता हूँ और इसको पालता हूँ।" कहते हुये उसने बच्ची पर प्यार से हाथ फेरा।

"कितने दिनों की है?"

"लगभग सात मास की है बाबू जी।"

"तुम जितने चाहो रुपये ले लो और इसे मुझे दे दो।"

"बाबू जी मैं इसको बहुत दिनों से पाल रहा हूँ। मुझे यह अपनी बहिन सी मालूम होती है। इस के सहारे मेरे रात दिन कट जाते हैं। बहिन बेची नहीं जाती है, दान दी जाती है। मुझे तो ऐसा मालूम होता है कि जिस दिन यह मुझ से जुदा हो जायेगी उसी दिन मैं भी मर जाऊँगा" यों कहते हुए उसने आलू की मीठी चटनी और चटाई।

"तुम्हारा क्या नाम है ?" खुश होकर मिस्टर ब्लाइद ने पूछा।

"परसोतम।"

"परसोतम का क्या अर्थ हुआ ?" मिस्टर ब्लाइद ने ड्रायवर से पूछा।

"सर यह पुरुषोत्तम का बिगड़ा हुआ रूप है। यानी पुरुषों में उत्तम।"

"वेरी गुड। सचमुच यह किसी दिन बड़ा आदमी बनेगा" वह फिर बोले "बेटे तुम्हारा घर कहाँ है, दिखाओगे ?"

"जरूर दिखाऊँगा मगर मैं वहाँ रहता नहीं हूँ और न ही कभी जाता हूँ।"

"ऐसा क्यों ?"

"घर में जाते डर लगता है साब, बिल्कुल सूना सूना है। मैं स्टेशन की बेंच पर पड़े पड़े रात काट देता हूँ।" चलती कार में सँभल कर बैठते हुए पुरुषोत्तम ने कहा। "बाँये को चलिये साब। वह मन्दिर जो दिखाई दे रहा है उसी के पीछे पिलखन का पेड़ है। वह मेरे ही घर के सामने है।" ड्रायवर ने सब बातें समझ लीं और कार को गन्तव्य स्थान पर जा खड़ा किया। मिस्टर ब्लाइद कार से उतर कर पिलखन के पेड़ के नीचे चबूतरे पर बैठे हुक्का पीते लोगों से पूछने लगे—

"क्या यह घर इसी लड़के का है ?"

"हाँ साब इसी लड़के का है" सभी ने ज़ोर से कहा फिर एक दूसरे का मुँह देखते हुये कानाफूँसी करने लगे—"आज किसी अंग्रेज का सामान पार कर दिया मालूम होता है।"

"तुम लोगों के होते हुये यह भीख क्यों मांगता है ? क्या तुम पड़ौसी मिल कर इसकी कोई सहायता नहीं कर सकते ? कुछ काम नहीं दे सकते ? अगर तुमने इसकी मदद की होती तो यह भीख नहीं मांगता। भीख मांगना अच्छी बात नहीं है।"

"अभी यह किसी काम लायक ही कहाँ है सरकार ? जब बड़ा हो जायेगा तो कोई काम भी दे देंगे" सब ने मिल कर कहा।

"तुम लोग जब छोटे की मदद नहीं कर सकते तो बड़े की क्या मदद करोगे ? बड़ा तो खुद अपनी मदद कर लेता है। मदद तो छोटे की की जाती है। जब बड़ा होगा तो यह तुम्हारी मदद करेगा।" कहते हुये मिस्टर ब्लाइद ने उसे कार में बैठने का इशारा किया और सीकरी के बाज़ार में आये जहाँ से उसके लिये कपड़ों का प्रबन्ध किया और उसके बाद किला देखा और दिल्ली को रवाना हो गये।

"अब तुम हमारे साथ रहा करोगे " पुरुषोत्तम से मिस्टर ब्लाइद ने कहा और उन्होंने लड़की को पुरुषोत्तम की गोद से अपने हाथों पर ले लिया। गौर से देखना शुरू किया। उसके नाक नक़्श सुन्दर थे, ठोड़ी पर छोटा सा काला तिल बहुत अच्छा लग रहा था। गले पर भी एक लाल तिल था। एक हाथ में छः उँगलियाँ थीं कनिष्टिका के पास लटकती हुई छठी उँगली देख कर मिस्टर ब्लाइद को हँसी आ गई। ड्रायवर ने सामने शीशे में कनखियों से उन्हें मुस्कुराते देखा। वह समझा कि वह उस की किसी ग़लती पर मुस्कुरा रहे हैं। वह सीट पर संभल कर बैठ गया और स्टेयरिंग सँभालते हुए और भी एहतियात से कार चलाने लगा। मिस्टर ब्लाइद खुश खुश डा० शर्मा के मकान पर आ गये।

"यह दो बच्चे किस के हैं ?" डा० शर्मा ने पूछा।

"मेरे ही समझ लीजिये" सन्जीदगी के साथ मिस्टर ब्लाइद ने उत्तर दिया। मिस्टर ब्लाइद ने सूरदास के काव्य में अद्‌भुत मनोवैज्ञानिक व्यंजना पर थीसिस लिखनी शुरू कर दी। लड़की के लिए एक आया रख दी और पुरुषोत्तम को जे० डी० टाइटलर स्कूल, क़रौल बाग़ दिल्ली में भर्ती करा दिया गया। समय का पन्छी बराबर उड़ान भरता रहा और वह लड़की जिसको छः मास की लाये थे अब पन्द्रह साल की चन्द्रिका हो गई थी और बी० ए० में पढ़ती थी। पुरुषोत्तम ने एम० ए० कर लिया था और बाईस साल का था। दोनों एक दूसरे से सगे भाई बहन का सा बरतावा करते थे।

एक दिन तीनों लखनऊ का म्यूज़ियम कार से देखने गये। किसी होटल में रात को ठहरे। इस समय होटल का नाम याद नहीं आ रहा है। एक हसीन औरत मीनू (खाने की लिस्ट) लेकर सामने आई।

"यह सब आपके साथ हैं ?" मीनू सामने रखते हुये उसने मिस्टर ब्लाइद से पूछा। अंग्रेज के साथ एक जवान लड़की और एक जवान लड़का वह भी हिन्दुस्तानी, देख कर कुछ अचरज हुआ। पुरुषोत्तम पर उसकी नज़र जम गई। एक शक्ल के बहुत से आदमी होते हैं। पल भर को उसके दिमाग़ में आया। मगर दिल न माना और पूछ ही बैठी "तुम्हारा नाम पुरुषोत्तम है ?"

"जी हां ! मगर तुम मुझे कैसे जानती हो ? मैंने तो तुमको कभी देखा नहीं।" पुरुषोत्तम तअज्जुब के साथ उसकी तरफ़ देखता रहा।

"तुमने मुझे देखा है मगर तुम मुझे भूल गये हो" पुरुषोत्तम के पास सरकते हुये यह तीस साला हसीना बोली। पुरुषोत्तम ने उसके सजीले मांसल शरीर को नीचे से ऊपर तक देखा। उसके हर अंग से जवानी टपक रही थी। आयु का सही अनुमान ही नहीं हो पा रहा था।

"कहाँ देखा है ?" चकित पुरुषोत्तम के मुँह से निकला।

"मैं बालमुकुन्द माली की लड़की हूँ जो गाँधी स्मारक दिल्ली में काम करता है। मेरा नाम चन्दा है। जब मैं कुँआरी थी तो भगवान ने मुझे एक लड़की दे दी, मैं उस को सीकरी म्यूनिसिपल कमेटी के दफ़्तर की सीढ़ियों पर डाल आई थी। उस पाप को छुपाने की मैंने काफ़ी कोशिश की मगर वह छुप न सका और मैं सब में बदनाम हो गई। सब की नज़र से गिर गई। मेरा भाई मुझ पर मिट्टी का तेल छिड़क कर जला डालने की तरकीब सोच रहा था। जिस रात में यह होने वाला था उससे एक दिन पहले ही सूरज निकलने से पूर्व मैं घर से निकल भागी। एक नौजवान कार से बलन्द दरवाज़ा देख कर कहीं जा रहा था। मैं उसकी कार के आगे आ गई। काफ़ी हार्न बजाये मगर में टस से मस न हुई। मैंने भी सोच लिया था कि या तो मिट गई या बन गई। कार रुक गई।

"क्या ज़िन्दगी से बेज़ार है ?" नौजवान ने मुँह बाहर निकाल कर कहा।

"जी हाँ" मैंने फ़ुर्ती से कहा।

"क्यों ?" वह स्टेयरिंग पर गाल टेक कर फिर बोला।

"मेरा कोई नहीं है। सारा खानदान मर गया। मेरी जवानी मेरी शत्रु बन रही है। मेरा रूप और लावण्य मेरा जान लेवा बन रहा है। जिधर जाती हूँ लोग भूँखे भेड़ियों की तरह टूट पड़ते हैं। इसी लिए मर जाना चाहती हूँ, मुझे कोई सीने से नहीं लगायेगा। इस लिये मर जाना ही ठीक है बाबू जी" मैंने बात बनाई। लखनऊ जाने वाला सुन्दर युवक मुझ पर बरस पड़ा और कार का दरवाज़ा खोल दिया। मैं उसके पास ही अगली सीट पर उस से सट कर मीठी मीठी बातें करती रही। मैं शुरू से कुछ चन्चल तो थी ही।

लखनऊ आ गया। मैं बहुत ख़ुश थी कि अब ज़िन्दगी बन गई। मगर जिस होटल में आप बैठे हैं इसी होटल में वह मेरे साथ पूरी रात रहा। दिन निकलने लगा पर वह दिशा मैंदान से निबटने के बहाने ऐसा गया कि आज तक मुँह देखने को नहीं मिला। उस का इन्तिज़ार ही करती रही। आठ बजे के करीब एक आदमी आया और बोला—

"हसीना तुम इसी होटल में उम्र भर रहोगी। कोई दुख नहीं होगा। कोई परेशानी नहीं होगी। हमारे मालिक ने तुम को उस लड़के से दो हज़ार में खरीद लिया है तुमको क्या काम करना है आओ मेरे साथ मालिक से पूछ लो।" यों कह कर वह मुझे साथ ले गया। मैंने कोई विरोध नही किया क्यों कि मैं जानती थी कि यहाँ से भाग निकलने की कोशिश बेकार साबित होगी और अगर कारामद भी हो गई तो मेरा कहीं

ठौर ठिकाना भी तो नहीं था। कहाँ जाती ? इस लिये हालात से समझौता करके, सिर झुका लिया और जिस तरह नसीब ने ज़िन्दा रखा, रह रही हूँ।"

"क्या तुम यहाँ अपने आप को खुश समझ रही हो" मिस्टर ब्लाइद ने पूछा।

"क्या बताऊँ मजबूरी सब कुछ करा लेती है।" यों कहते हुये चन्दा कुछ देर को चुप हो गई और चन्द्रिका के चेहरे को ध्यान से देखने लगी, ठोड़ी पर काला तिल और गर्दन पर लाल तिल देख कर उसके दिल में शक ने जन्म लिया, वह आगे झुकी और चन्द्रिका का दायाँ हाथ खींच कर देखते हुये बोली—

"क्या तुम्हारे इस हाथ में छः उँगलियाँ थीं ?"

"जी हाँ थीं, मगर अँकल ने दिल्ली में किसी डाक्टर से एक कटवा दी थी, लेकिन तुमको इसका पता कैसे हुआ" चन्द्रिका बोली।

"तुम को यह म्यूनिस्पेलिटी के दफ़्तर की सीढ़ियों पर मिली थी ?" चन्दा ने पुरुषोत्तम से पूछा।

"जी हाँ" पुरुषोत्तम ने सच का इक़रार किया।

"मेरी बेटी" कहते हुऐ चन्दा चन्द्रिका की तरफ़ लपकी "मैं तेरी माँ हूँ मगर मैंने माँ होने का कोई फ़र्ज़ तेरे साथ पूरा नहीं किया, जैसे कुन्ती ने कर्ण के साथ। मैं कितनी बदनसीब हूँ। समाज का डर भी कैसा अजीब होता है कि इन्सान को इन्सान के दिल के साथ भी जीने नहीं देता" कहते कहते चन्दा रोने लगी—

"तुम गनपत के लड़के हो ?" आँसू पोंछते हुए उसने पुरुषोत्तम से पूछा।
"जी हाँ।"

"वेरी गुड चन्दा, वेरी नाइस। एक बात बताओ। तुम मेरे साथ चलना चाहती हो तो मैं तुमको यहाँ से आज़ाद कराने के लिए मैनेजर से बात करूँ। हम तुम सब एक साथ रहेंगे, शायद इसी दिन के लिए मैं भारत में बस गया था इंग्लेण्ड नहीं गया था। दिल्ली में मेरा जूतों का कारखाना है। अपनी कोठी है। तुम्हारे वहाँ पहुँचने से हम तीनों की ख़ुशियाँ और बढ़ जायेंगी" कहते कहते मिस्टर ब्लाइद ने उसका पाणिग्रहण कर लिया और सीने से लगा लिया। चन्द्रिका और पुरुषोत्तम दूसरी तरफ़ दीवार पर टंगी लेनिन और सुभाष की तस्वीरें देखते रहे।

◆

"ऐसी रोटी"

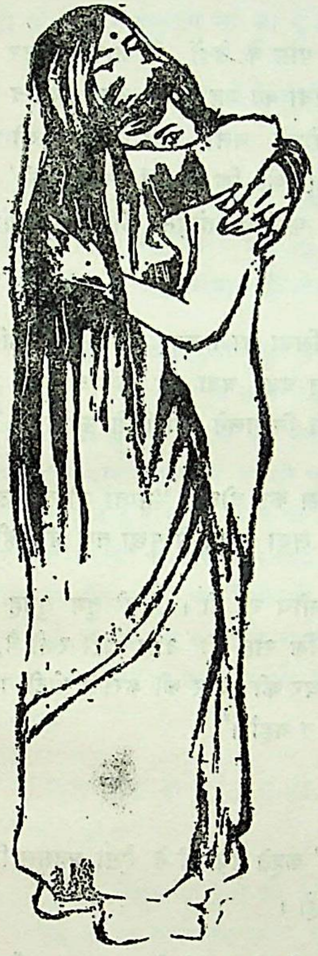

"माती जी नमस्ते।" सेवा ने अपनी माँ को नमस्कार किया।

"जीते रहो बेटा। तुम आज ही चले आये साहू साहब के घर से?" माँ ने सवाल पूरा भी नहीं किया था कि सेवा की बहन फुलिया आ गई, कहीं बाहर खेलने गई थी।

"भैया तुम तो कहते थे कि साहू साहब के व्याह से जब लौटोगे तो खूब पूड़ी कचौड़ी लाओगे। अब लाओ क्या लाये हो। मुझे तो बड़ी भूख लगी है।"

"जा बाहर जा। जो लाया होगा मिल जायेगा।" माँ ने उसे डाँटते हुये कहा और बोली "सेवा तू उदास क्यों है? हाथ तो खाली है ही, पेट भी खाली है क्या?" ममता से सिर पर हाथ फेरते हुये पूछा। बहिन बाहर खेलने जा चुकी थी।

"हाँ माता जी मैं भूखा हूँ।"

"तूने वहाँ कुछ नहीं खाया?"

"कोई खिलाता तभी तो खाता।"

"किसी ने नहीं खिलाया तो मांग कर खा लेता। शादी के घर वाले भूल भी जाते हैं।"

माती जी मैंने एक बार मालकिन से कहा भी था मगर उन्होंने जवाब दिया, "अभी तो महमानों ने भी नहीं खाया है, तुझे पहले ही खिला दूँ, क्या घर से भूखा ही

आया है ?" मैंने यह सुन कर कुछ नहीं कहा और शाम तक पेट पर कपड़ा बाँधे, कान दबाये काम करता रहा। इससे आगे कुछ कहता तो शायद मार खाता और नौकरी से हाथ धोता। मैंने नौकरी की सलामती के लिये सब कुछ गवारा कर लिया। एक दिन खाना न मिलने पर मर थोड़े ही जाता। कुछ हो तो लाओ माता जी मुझे बड़ी भूख लगी है।" सेवा ने बेतकल्लुफ़ी से कहा। जब कोई सुनने वाला होता है तो दुखी के दुख का एहसास भी बढ़ जाता है, और जब कोई सुनने वाला नहीं होता तो ज़ब्त का माद्दा बढ़ जाता है, यह एक कुदरती बात है।

"बेटे तुझे भूख लगी है तो एक काम कर, तू पास के खेतों में जाकर मंटर की फलियाँ तोड़ ला, उन्हें भून भून कर खा लेना।" सेवा को यह बात बहुत पसन्द आई और वह फ़ौरन किसी किसान के खेत में फलियां तोड़ने चला गया। भूख की इस अधिकता में उसने माँ की इस राय पर बहस भी नहीं की कि जो माँ चोरी को बुरा बताती थी आज किसी के मटर के खेत में जाकर फलियाँ तोड़ने की राय क्यों दे रही है?

माँ ने शीरे का शरबत घोल कर तैयार कर लिया था। तब तक सेवा फलियाँ तोड़ लाया। वह भून लीं और शरबत के साथ साबुत चबा चबा कर खाने लगा। बड़ी मीठी स्वादिष्ट लग रहीं थीं। भूख की तेज़ी में दाने निकालने की किसे फ़ुर्सत थी?

माँ कुछ सोच रही थी। वह उसकी सुस्ती देख कर बोला "माता जी तुम उदास क्यों बैठी हो? शायद इस लिए कि मैं अकेला खाने लगा। तुम से पूछा तक भी नहीं।"

"नहीं बेटा मैं यह नहीं सोच रही हूँ जो तुम सोच रहे हो। देखो तुम सुबह को जब साहू साहब के घर जा रहे थे तो मैंने कहा था कि रात की दाल रोटी रखी है, खा जाओ। मगर तुमने वहाँ की पूड़ियों के लालच में घर की ज्वार की करारी रोटी न खा कर दिन भर का फ़ाक़ा कर लिया। न यहाँ खाया न वहाँ।"

"क्या वह अब रखी है?"

"वह तो मैंने और तेरी बहन ने खाली बेटा" कहते हुये माँ ने ऐसा महसूस किया जैसे वह दाल रोटी खा कर उसने कोई पाप किया हो।

"यह तो अच्छा किया माता जी। भूख तो सभी को लगती है। माता जी मुझे क्या पता था कि यह रईस लोग इतने पत्थर दिल होते हैं।" इतने में फुलिया भी आ गई।

"अच्छा शादी से लाये हुए माल को अपने लाड़ले को चुपचाप खिला रही है।

मुझे खेलने को भेज दिया। क्या मुझे भूख नहीं लगती है?" कहते हुये फुलिया ने भैया के आगे झांका 'अरे मटर की फलियाँ और शरबत" वह ज़ोर से बोली।

"कमबख़्त धीरे से बोल कोई सुन न ले हमारे कौन सा मटर का खेत है।"

"माता जी शादी से लाई हुई पूड़ियाँ और कचौड़ियाँ कहाँ गई?" फलियां चबाते हुये फुलिया ने पूछा।

"बेटी उन्हें कुत्ता उठा कर ले गया" अपनी भूख पर काबू पाते हुये माँ ने बात सांटी और सेवा चुपचाप माँ का मुँह टुकुर टुकुर देखता रहा।

"तुम झूँठ बोलती हो। अपने लाड़ले को खिला दीं और खुद खा लीं मेरे लिये कुत्ता ले गया।"

"मेरी नन्ही सी बहिन तू सच मान ले ऐसा ही हुआ है। मेरे साथ फलियाँ खाले वरना यह भी न मिलेंगी। अगर तू मुझ से रूठ रही है तो मैं तुझ से रूठ जाऊँगा। तेरे साथ भी बैठ कर खाना नहीं खाऊँगा और न तुझ से कभी बोलूँगा।"

फुलिया को भैया की बातों पर यक़ीन न आया। वह रोती ही रही और रोते ही रोते सो गई। जब रात के तीन बजे तो सेवा को एक तगड़ी सी उलटी और दस्त आया। माँ ने पेट की खराबी समझ कर उस पर कुछ ध्यान न दिया। थोड़ी देर बाद फिर उलटी और दस्त आया तो उसको चुनाव में हारे हुये नेता की तरह अपनी ग़लती का ध्यान आया और हरिद्वार से लाया हुआ मिचियागन्ध औटा कर उसका पानी पिलाया, मगर कुछ नतीजा न निकला। दस्त पर दस्त आते गये। आखिर में उस ने डाक्टर बुलाने की सोची मगर घर में कानी कौड़ी भी न थी। उसका खर्चा कैसे बरदाश्त करती? अचानक उस का हाथ कानों में पड़ी चांदी की बालियों पर गया जो सेवा के बाप की मौत के बाद उसके कानों में बाकी रह गई थीं। उन्हीं को लेकर साहू साहब के घर पहुँची।

"तुम कौन हो?" घूँघट काढ़े हुये सेवा की माँ से साहू साहब के लड़के ने पूछा।

"कुँवर साहब मैं सेवा की माँ हूँ जो तुम्हारा सेवक है।"
"मगर वह अभी तक आया क्यों नहीं? सिर से ऊँचा काम है।"
"पूत यह तो मैं जानती हूँ मगर क्या करूँ वह बीमार है।"

"इसका मतलब हुआ कि तुम उसके लिये इस बहाने से छुट्टी मांगने आई हो। छुट्टी के लिये इससे अच्छा कोई बहाना हो ही नहीं सकता" अपने हाथों में पड़े शादी के कंगन को संभालते हुये दूल्हे ने कहा।

"बेटा कोई माँ अपने अच्छे खासे बेटे को बीमार नहीं बता सकती" कानों की वालियां हाथों में उलट पुलट करते हुये माँ ने फिर कहा "मैं इन्हें रखने आई हूँ क्यों कि दवा दारू को पैसे नहीं हैं। आज का काम चला दो। बड़ा पुण्य कमाओगे" रिरयाते हुये उसने विनम्रता से कहा।

बालियाँ लेकर वह दूल्हा अपने पिता के पास गया, अब उसको यह महसूस हो गया था कि वास्तव में उसका लड़का बीमार है। उसने उस की विवशता का हवाला देते हुए अपने पिता से कहा "पिता जी इस पर इसे कुछ दे दो।"

"यह शादी का दिन है आज दुकानदारी का कोई काम नहीं होगा।"

"मगर पिता जी इस का तो लड़का बीमार है। जैसे भी हो इस का काम तो करना ही पड़ेगा।" एक नज़र सेवा की माँ कीं तरफ़ डालते हुये दूल्हा बोला।

"तेरी जानने वाली होती है ?" चश्मा उतारते साहू साहब बोले।

"आपके सेवक सेवा की माँ है पिता जी।"

"अरी कल तो अच्छा भला था। दिन भर शादी का काम करता रहा था। अब रात ही रात में इतना बीमार पड़ गया।" साहू साहब हाथों में बालियाँ उछालते हुये तराजू की तरफ़ बढ़े "ले कोई और होती तो मना ही कर देता तू सेवा की माँ है। तेरा काम तो करना ही पड़ेगा। उसको तकलीफ़ अधिक तो नहीं है ?"

"सरकार हैजा हो गया है ?" यह कह कर वह सुबकने लगी।

"अरी यह शादी का घर है रोना अपने घर जाकर, यहाँ रोकर असगुन मत कर। यह सुनते ही किसी अकथनीय भय से वह चुप हो गई। "ले नौ मिल सकते है।"

"सरकार बीस कर दो नौ से काम नहीं चलेगा।"

"गिरवी रखने आई है या कर्ज़ लेने, कठोरता से साहू साहब बोले।

"ग्यारह रुपये को क़र्ज़ में शुमार कर लीजिए। यह एक प्रकार की इम्दाद है, साहू साहब जब सेवा अच्छा हो जायेगा तो उसके वेतन से मुजरा कर लीजिएगा। काम तो आप ही के घर करता है।"

'और मर गया तो ?" यह बात सुनते ही उसके तन में आग सी लग गई, लेकिन स्थिति नाज़ुक थी परिस्थिति शोचनीय थी। लुओं में तपते हुये फूलों की भांति खामोशी से तकलीफ़ को बरदाश्त कर गई और नौ रुपेयों के लिये ही हाथ बढ़ा दिये। अब उस

की जेब गर्म थी, वह डाक्टर के पास गई। डा० चलने को राज़ी हो गया। वह घर पहुंची।

"माता जी तुम ने मुझसे चलती बार कहा था कि भैया को पानी मत देना, हैज़े में पानी नहीं देते हैं, सो इसने खुद एक लोटा पानी डकडका कर पी लिया। मेरे मना करने पर भी नहीं माना।" माँ फुलिया की इस शिकायत पर भी कुछ न बोली और चुपचाप खड़ी रही। इस ख़ामोशी पर फुलिया मन ही मन बहुत झुंझलाई, मगर चुप रही और सोचती रही कि कुछ नहीं कहना था तो मुझ ही को पानी देने से रोक कर भैया की नज़रों से बुरा क्यों ठहराया?

माँ सेवा के पिचके हुये गाल, अन्दर धँसी हुई आँखें खड़ी खड़ी देख रही थी।

"माता जी मैं चाहे मरूँ चाहे जिऊँ तुम मेरे पास से पल भर को भी कहीं मत जाओ। तुम्हारे पास रहने से मेरा दुख कम हो जाता है। मेरा सिर अपनी गोद में रखे बैठी रहो। ग़रीब दुनिया में इसी तरह जीते हैं कि जीवन में रोटी न मिले, मरें तो पानी न मिले" प्यास से सुखे होटों पर जुबान फिराते हुये सेवा ने कहा।

"बेटा मैं तुम्हारे लिये डाक्टर को बुलाने गई थी वह तुमको आते ही ठीक कर देगा।"

"उसके लिये रुपये कहाँ से आयेंगे माँ।" सेवा ने दबी आवाज़ में पूछा।

"बेटा मेरे पास यह देख नौ रुपये हैं उसको देने को।"

"अरे यह तुम्हारे पास कहाँ से आ गये?"

"बहुत पहले के रखे हैं।" कानों को धोती में छुपाने हुये कहा।

"माता जी यह रुपये अगर तुम पर पहले से थे तो तुमने कल आटा क्यों नहीं लिया। अगर मैंने रोटी खाई होती थी तो हैजा नहीं होता। तुम और बहिन भी भूखी नहीं रहतीं। तुम ने रुपया बचाया और हमको भूखों मारा। रुपये होते काहे के लिये हैं। साहू साहब के यहाँ शादी में नौ सौ रुपये तो केवल रोशनी ही रोशनी में खर्च हो रहे हैं, तुम नौ रुपये खाने में भी नहीं लगा सकीं?

डा० साहब भी आ पहुँचे। माँ सेवा की बातें सुन सुन कर रो रही थी जिसका कारण सेवा तो क्या कोई भी नहीं समझ सका था। डा० साहब ने उसके रोने का दूसरा ही अर्थ लगाया और जल्दी से देख भाल शुरू कर दी। सुई लगाई, गोली निगलवाई। "दस रुपये दो जल्दी जाना है। दूसरे मरीज़ इन्तिज़ार करते होंगे" डा० साहब ने बटुआ बग़ल में और स्टेथस्कोप गले में लटकाते हुये कहा।

"डा० साहब यह नौ ले लो एक शाम को भिजवा दूँगी।" डा० ने पहले तो कुछ कहना चाहा मगर हालत देख कर नौ ही लेकर चुपचाप बाहर चला गया। लोगों ने हाल चाल पूछा तो "बचने की कोई उम्मीद नहीं है।" जवाब मिला।

"क्यों बेटे मुँह क्यों सिकोड़ा" माँ ने सेवा से कहा। वह कराह रहा था।

'माँ कपड़ों में बहुत बड़ी टट्टी आ गई है। जान सी निकल रही है। पैरों की नसें खिचती चली जा रही हैं। माता जी अब मैं बचूँगा नहीं, तुम्हारे वह नौ रुपये भी बेकार गये।" माँ ने यह सुन कर उसके मुँह पर हाथ रख दिया जैसे घोसन हन्डिया का मुँह चप्पन से ढक देती है। माँ उस के मुँह से ऐसी हृदय-विदारक बातें सुनना नहीं चाहती थी। वह हाथ हटाते ही फिर बोला—

"माँ आखिरी बार बोल लेने दो। यह बोलती तो खुद ही बन्द हो जायेगी, तुम्हारे हाथ रखने की जरूरत भी नहीं रहेगी। देखो फुलिया को बता देना कि भैया पुलिस में भर्ती हो गया है। पाँच साल बाद लौटेगा तो तेरे लिये खिलौने, मीठा और अच्छे अच्छे कपड़ लायेगा। मेरे मरने के बाद मेरी प्यारी बहिन बहुत ही रोयेगी। तुम इसी तरह बहला दिया करना। मैं अपनी बहिन के लिये कुछ भी न कर सका।" वह कहता रहा और अब की बार उसकी माँ ने उसको चुपाने की कोशिश नहीं की। उसका हर शब्द उसके दिल के टूक टूक करता रहा और वह मौन बैठी देखती रही, जैसे बहादुरशाह जफर अपने शीशमहल को अंग्रेजों की गोलियों से टुकड़े टुकड़े होते देखते रहे और चुप रहे।

माँ भगवान से उसके अच्छे होने की कामना कर रही थी और रो रही थी, सिर पर हाथ फेर रही थी। सेवा चुप था। उसके चेहरे पर मुर्दानी छाती चली जा रही थी। जैसे ही उसका बोलना बन्द हुआ उसकी गर्दन माँ के घुटने पर लुढ़क गई। वह सोच रही थी कि बच्चे को डा० की दवा से चैन पड़ा है और नींद आ गई है। अक्सर सांस निकल जाने के बाद भी प्रियजनों को मुर्दे में जान प्रतीत होती रहती है।

"सेवा" माँ ने सन्देह के सांप को भगाने के लिये कहते हुये उसका सिर हिलाया। उसमें कुछ दमदरूद होता तो वह बोलता। डा० की सारी बातें झूठ साबित हुई। वह चीख पड़ी। "सेवा, सेवा, मेरे पूत तुम चल बसे।"

माँ की सारी शंकाओं का जवाब सेवा की खामोशी ने दे दिया था। वह हाहाकार कर रही थी। पड़ोसनें भी धीरे धीरे मातम में शरीक हो गई। फुलिया को कोई पड़ोसन जब तक उसका दाह संस्कार न हो जाये, बहलाने के लिये अपने घर ले गई।

घर का चिराग़ गुल हो गया। शाख़ पर एक ही फूल था वह भी गुलचीं (फूल तोड़ने वाला यानि मृत्यु) ने तोड़ लिया। शाम को पड़ोसी रस्मो रिवाज के अनुसार अपने अपने घरों से रोटियाँ लाये। फुलिया हुमक हुमक कर अन्दर रखती रही। “आओ माता जी खूब मज़े से पेट भर कर रोटी खालो। भैया भी पुलिस में भर्ती न हुआ होता तो खूब खाता।” फुलिया ने हँसते हुये माँ के गले में हाथ डालते हुये कहा।

“ऐसी रोटी भगवान किसी को भी न खिलाये”, माँ ने छाती पर पत्थर रख कर कहा।

फुलिया “ऐसी रोटी भगवान किसी को भी त खिलाये” कई वार मन ही मन दुहराती रही मगर चुप रही। उसकी समझ में कुछ नहीं आया कि माँ भूखे ही रहने को अच्छा क्यों समझती है? अच्छी ख़ासी रोटी मिली तो उससे नफ़रत क्यों कर रही है?

"नीम हकीम"

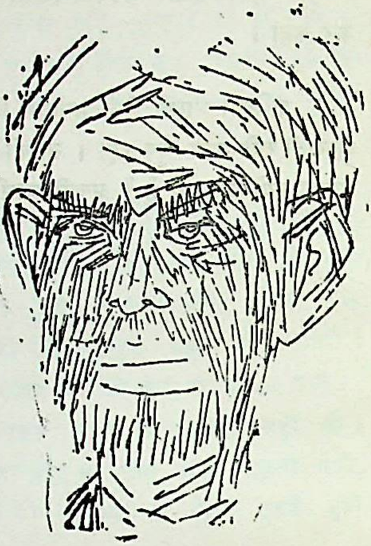

"खट खट खट खट।" किवाड़ें खट खटाने की आवाज़ आई और जुबैदा ने दरवाज़ा खोलते हुये कहा "आइये।"

"किवाड़ें मैं बन्द किए देता हूँ तुम अन्दर चलो" करीम अपनी बीवी से बोला।

"आप थके हारे आये हैं, क्या मैं किवाड़ें भी बन्द नहीं कर सकती?"

"थकान तो तुम्हारी सूरत देखते ही खत्म हो जाती है।" किवाड़ें बन्द करते हुये करीम ने कहा।

"मेरी सूरत विक्स की डिबिया है क्या?"

"मेरे लिये तो ऐसा ही है" कहता हुआ करीम ज़ुबैदा के पीछे पीछे आया और सहन में पड़ी खाट पर "या अल्लाह तू है" कहते हुआ लेट गया। जुबैदा एक बात तो बताओ" माथे का पसीना पोंछते हुये क़रीम ने कहा।

"पूछिये" ज़ुबैदा ने पास आकर कहा।

"मैंने जैसे ही कुन्डी खटखटाई तो तुमने किवाड़ें खोल दीं। पूछा भी नहीं कि कौन हो। अगर कोई ग़ैर आदमी होता तो?

"ग़ैर आदमी हो ही कैसे सकता था" करीम का कन्धा मसोसते हुये जुबैदा ने विश्वसनीय ढंग से कहा।

"तुम्हारा दरवाज़ा राष्ट्रपति भवन का गेट थोड़े ही है।"

"आप भी बड़े भोले बनते है। आपके ड्यूटी से आने का वक़्त है। इस वक़्त

ग़ैर किवाड़ें खुलवा कर अपनी चाँद को जूतों से सहलाने की दावत देगा क्या ? बुरी नीयत से आने वाले लोग सौ बातें सोचते हैं ।"

"बिलकुल ठीक कहती हो । मान गया तुम्हारी बात को ।" आँखों में आँखें डाल के उसने फिर कहा "ज़ुबैदा बहुत देर से तुम लालटेन के पास बैठी बैठी क्या सोच रहीं थीं ?"

"इसका मतलब यह हुआ कि आप किवाड़ों की दराज़ से मुझे देख रहे थे। इस तरह लुक छुप के देखने से क्या मिलता है ? इतने साल शादी को हो गये, देखने से मन नहीं भरा ?"

"सवाल पेचीदा है, जवाब ज़ुबान के बस का नहीं, आँखें दे सकती हैं । मुस्कुराते हुए एक आँख मींच कर करीम ने कहा । वह कुछ रुक कर फिर बोला "तुम मुझको बातों में मत उलझाओ, अपनी ख़मोशी का सबब बताओ। मैं यह पूछ कर ही मानूँगा ।"

"जब कोई बात ही नहीं है तो बताऊँ ही क्या ?"

"यह एक क़ुदरती बात है कि आदमी कभी ख़ामोश नहीं रह सकता, कभी दुनिया से बात करता है, कभी अपने दिल से बात करता है । जब कोई बात सोची जा सकती है तो बताई भी जा सकती है ।"

"ठीक है पहले खाना खा लीजिये फिर बताऊँगी ।"

"और किसी को भूख ही न लग रही हो तो ?"

"क्या कहीं दावत खा के आ रहे हो जो भूख नहीं लग रही है ।" कमर से लगा हुआ करीम का पेट दबाते हुए ज़ुबैदा ने कहा ।

"अरी ज़ुबैदा ! दावत तो उसको खिलाई जाती है जिस से चार काम निकलते हैं । हम लोग किस खेत की मूली हैं ? जल्दी बताओ क्या सोच रही थीं ?"

"आप हर बात में ज़िद किया करते हैं । एक औरत अपनी घर गृहस्थी के अलावा और क्या सोच सकती है ? नेज़ा (एक मेला) आने में कुल पांच रोज़ बाक़ी हैं । कब बच्चों के कपड़े आयेंगे ? कब सिलेंगे ? हमारी तो कुछ नहीं है, पुराने धुराने ही साफ़ करके पहन जायेंगे, मगर बच्चे क्या जानें किस के घर बारात आई है ? उन की बला से कोई ग़रीब हो या किसी को तनख्वाह नहीं मिली हो, उन को तो अपनी खुशी पूरी

होने से गरज़ होती है। अस्ल में यह वक़्त उनकी खुशी पूरी होने ही का है, बड़े होकर तो वह भी हमारी तरह गिरहस्ती की कीचड़ में धँस जायेंगे।"

"ज़ुबैदा यह बातें सोचने को मैं ही बहुतेरा हूँ। मेरे होते हुये तुम ऐसी बातें क्यों सोचती हो ? जो शख़्स अपनी चिन्ताओं को अमल में नहीं ला सकता उसका सोच विचार करना ही व्यर्थ है। क्यों सोच सोच कर काया घुलाती हो ?"

"मालूम होता है आज तनख्वाह मिल गई है। तभी तो बातों में कुछ गर्मी है।"

"ज़ुबैदा तनख्वाह नहीं मिली है केशियर छुट्टी पर है। वह बीमार है। उसकी बीमारी से सेठ जी की चांदी हो गई। सात दिन बाद आयेगा तब तक सेठ जी के खूब वारे के न्यारे हो जायेंगे।"

ख़ज़ान्ची की बीमारी उन के हक़ में क्या भली साबित होगी ?"

"तुम नहीं जानती ज़ुबैदा, उसके न होने से लाखों रुपया तनख्वाह में बँटने से रह जायेगा और सात रोज़ तक बैंक में उसका कितना सूद सेठ जी को मिल जायेगा। अगर वह बीमार न होता तो यह सेठ जी को क्यों मिलता ?"

"तब तो यह लोग जान बूझ कर भी तनख्वाह देर से बांटते होंगे। हो सकता है ख़ज़ान्ची की बीमारी भी एक बहाना हो और उसे भी भेद छुपाने के लिये चुपड़ दिया गया हो।"

"अक्सर ऐसा ही होता है। यूनियन वाले कुछ शोर मचाते भी हैं तो सेठ जी उन को भी टुकड़ा डाल देते हैं और उनकी बात दब जाती है।"

"मज़दूर यूनियन मजदूर के हक़ में भी बुरा करती है।"

"लोहे को लोहा ही काटता है। अक्सर बाढ़ खेत को खा जाती है।" कहते कहते करीम का गला भर आया। ज़ुबैदा इसका रहस्य न समझ सकी और कुछ दूसरी ही वजह समझती रही।

"लो यह रुपये रख लो, बच्चों के कपड़े आ जायेंगे और नेज़े से पेश्तर सिलवा भी दूँगा" करीम ने गम्भीरता से कहा।

"यह इक्यानवे हैं।" वह फिर बोली "कपड़ों का इन्तिज़ाम तो हो गया, जूते रह गये।"

"जूतों का भी ख़ुदा हाफ़िज़ है।" घड़ी सँभालते हुये करीम ने कहा।

"मैं बातों ही बातों में यह पूछना भूल गई कि आज आपकी साइकिल कहाँ है ?"

"अगले पहिये में पन्चर हो गया था, दुकान पर छोड़ आया हूँ।"

"रात के नौ बजे कौन सी दुकान खुल रही थी ?"

"तुम जानती हो यह मशीन का ज़माना है। यहाँ रात दिन काम होता है। तुम सोच रही हो कि तुम्हारे बच्चे नंगे ही मेला जायेंगे।"

"नहीं। मैं यह नहीं सोच रही हूँ। मैं आपके होते हुये कुछ नहीं सोचूँगी, फिर जो अपनी चिन्ताओं को अमल में न ला सके उसको कुछ भी सोचना नहीं चाहिये।" ज़ुबैंदा ने करीम का वाक्य दुहराया।

"बस तो। यही मैं चाहता हूँ, अब लाओ खाना।"

"बहुत अच्छा।" कहते हुये ज़ुबैंदा खाना लेने चली गई। वह दिखाई तो प्रसन्न दे रही थी लेकिन मन और मस्तिष्क में एक बेचैनी थी।

"लीजिये खाना हाज़िर है" खाना सामने बढ़ाते हुये उसने कहा।

"मैं अकेला ही खाऊँगा" बनावटी मुस्कान के साथ उसने कहा।

"मैं बिना भूख के कैसे खालूँ ?" करीम के शब्द दुहराते हुये बोली।

"मैं समझ रहा हूँ तुम्हारी भूख न लगने की वजह।"

"क्या समझ रहे हो ?"

"यही कि तुम खाना कम बचने की वजह से खुद भूखी रह कर मेरा पेट भरना चाहती हो। अगर ऐसा भी है तो कोई बात नहीं। एक रोटी तुम खा लो एक रोटी मैं खा लूँगा। ग़रीब तो जीने के लिये खाते हैं। रईस खाने के लिये जीते हैं। जिस रोज़ भारत के ग़रीबों को भर पेट रोटी मिलने लगेगी उस रोज़ यह मुल्क जन्नतनुमा बन जायेगा।" ज़ुबैंदा का दामन पकड़ कर बिठाते हुये करीम ने कहा। वह अपनी हार मान गई और खाने में शरीक हो गई। एक रोटी हल्की सी और एक छोटी सी प्याज उसने उठाई और भारी सी रोटी और बड़ी प्याज करीम की तरफ़ बढ़ा दी। करीम यह देख कर मुस्कुराया। दोनों खुशी खुशी भोजन करते रहे। "क्या आज कमला की शादी है ?" करीम ने कौर चबाते हुये रुक कर पूछा।

"जी हाँ उसकी शादी है, तभी तो बाजे बज रहे हैं। बरात आ चुकी है।"

"लो हमारे पड़ोसी के घर बरात आ रही है और हमें पता भी नही।"

"रईसों की शादी ब्याह का पता ग़रीबों को नहीं होता जब कि ग़रीबों की शादी का पता रईसों को हो जाता है।" बेपरवाही से ज़ुबैदा ने कहा।

"कैसे ?" करीम ने कौर हाथ में लिये हुये हैरत से पूछा।

"ग़रीब जब कोई कारज करता है तो रईसों के घर क़र्ज लेने जाता है। इस लिये।"

"ठीक कहती हो ज़ुबैदा मगर मैं अपने बच्चों की शादी करूँगा तो किसी के आगे हाथ नही फैलाऊँगा।"

" वाह वाह। क्या लाट्री खुल गई है ? बड़ा लुक़मा तोड़ लो बड़ी बात मत करो। ग़रीबों को बड़ी बात कहना ठीक नहीं होता है।"

"ज़ुबैदा इसमें बड़ी छोटी बात क्या है ? मेरे पास जितना रुपया होगा उतना ही ख़र्च करूँगा।

"शादी ब्याह में ऐसा नहीं चलता है। तुम्हारे पाँच बच्चे है। मान लो एक की शादी में एक एक हजार रुपया खर्च किया तो पांच हजार हो गये, और जैसे जैसे बच्चे बढ़ते जायेंगे खर्चे भी बढ़ते जायेंगे। तो कैसे इतनी रक़म जोड़ोगे ?

"ज़ुबैदा मैंने यह कुछ सोच कर ही कहा"

"क्या सोचा है कुछ मैं भी तो सुन लूँ ?"

'सब बातें बताने की नहीं होतीं है।"

'मैं पूछ कर ही मानूँगी।" ज़ुबैदा ने हट की।

"पूछना ही चाहती हो तो सुनो। देखो फ़ैक्ट्री का यह कानून है कि अगर किसी मज़दूर की ड्यूटी पर एक उँगली कट जाये तो फ़ैक्ट्री तीन हजार रुपये देती है। एक उँगली काट लूँगा क्या फ़र्क पड़ता है ? शादी से पहले तो कुछ दिक्कत भी होती अब वह भी नहीं है। चाहे कितना ही अग भंग हो जाऊँ तुम मुझे छोड़ कर थोड़े ही चली जाओगी ?"

"बहुत ऊँचा ख़याल है आपका, मुझमें तो इतनी ऊँची बात सोचने की अक़्ल ही नहीं है। हाँ अगर एक या दो बच्चों की मां होती तो यह कड़वी बात सुनने को क्यों मिलती ?" इतना कह कर वह गम्भीर हो गई।

'तुम जो कुछ कह रही हो वह मैंने कभी सोचा था। लेकिन मोती लाल के नस-

वन्दी कराने के वाद मर जाने की घटना से मेरा दिल काँप गया और नसवन्दी का खयाल तर्क कर दिया।"

जब तक उस की नसबन्दी नहीं हुई पटवारी और ग्राम सेवक पीछे पीछे फिरते रहे। परछाइँ की तरह उसका पीछा नहीं छोड़ा और जब नसबन्दी हो गई और केस बिगड़ गया तो किसी ने वेचारे की मिज़ाजपुर्सी भी नहीं की। ग़रीब आदमी था, लगाने को घर में कुछ था नहीं, रिझ रिझ के मर गया।

"सैंकड़ों हजारों लोग नसबन्दी कराते हैं उसी का केस क्यों बिगड़ गया? कोई ग़लती कर बैठा होगा या डाक्टर का कहना न माना होगा।"

"तुम ठीक कहती हो ज़ुबैदा मगर ऐसा नहीं था। मेरी उससे बात हुई थी, वह कहता था कि उसने किसी क़िस्म की वदपरहेज़ी नहीं की मगर नसवन्दी के अगले दिन ही ख्वाव में कुछ गड़वड़ी होने से उसकी तकलीफ़ बढ़ गई थी, जो उसकी मौत का कारण बनी। सपनों पर तो किसी का भी काबू नहीं होता है। उसी खौफ़ से मैंने कान पकड़ लिये और नसवन्दी का खयाल तर्क कर दिया क्योंकि तुम ख्वाव में आये वग़ैर मानती नहीं और मैं भी इस मुआमले में कच्चा हूँ।" करीम ने व्यंगात्मक ढंग से कहा "जिस ने मुँह चीरा है वह खाने को भी देगा। पाँच लड़के हैं कभी पाँच बहुयें भी आयेंगी घर भरा भरा दिखाई देगा।"

"कभी कभी खाली भी दिखाई देगा।" ज़ुबैदा ने कहा।

"खाली क्यों होगा? पाँच रुपये भी फ़ी लड़का कमा कर लायेगा तो पच्चीस रुपये रोज़ कमा कर लायेंगे। इतना तो खाया भी नहीं जायेगा।"

"उस वक़्त की आमदनी पर नज़र है, खर्च पर नहीं।"

"तुम तो बाल की खाल निकालती हो, सो जाओ मुझे भी नींद आ रही है।" वह आँखें वन्द करके लेट गया और उसे खयालों कीं दुनिया में घूमते घूमते नींद आ गई। दिन निकला। बाज़ार गया। जूते लिये। "लो भई बच्चों के जूते भी आ गए, बड़ी परेशानी हो रही थी। कपड़े भी ले आऊँगा शाम को। वह भी सिल चुके होंगे। दिखा लेना वच्चों को नेजा।" करीम ने जूते के डिब्बे खाट पर पटकते हुये कहा।

"अव आप अपने कपड़े उतार दीजिये, इन को साफ़ कर दूँ।" जूते सँभालते हुये ज़ुबैदा ने कहा। करीम ने कपड़े उतारने शुरू किये। "घड़ी कहाँ गई" कपड़े उतारते ही नंगी कलाई को देख कर ज़ुबैदा ने सवाल किया?

"ख़राब हो गई है" जल्दी से करीम ने बात बनाई ।

"साइकिल की तरह सँभलने को देदी होगी । मरी जो भी चीज़ ख़राब हुई है नेजे पर ही खराब हुई है इस से पहले कुछ नहीं बिगड़ा था ।" तनज़िया कहा ।

"जी हाँ" हक़ीक़त का नाटक खेलते हुये करीम बोला ।

"मेरी क़सम ।"

"घड़ी ख़राब होने का यक़ीन दिलाने के लिये तुम्हारी क़सम खाऊँ ? घड़ी तो बड़ों बड़ों की ख़राब हो जाती है ज़ुबैदा ।" कह कर करीम ज़ुबैदा के होठों पर हँसी लाने का बहाना बनाता रहा, मगर वह हँसी नहीं, उठ कर अन्दर चली गई और कुछ रुपये लाकर उसके हाथों पर रखते हुये बोली—

"लीजिये जूते पहन आइये, नंगे पैर अच्छे नहीं लगते ।"

"तुम्हारे पास इतने रुपये कहाँ से आ गये ?" करीम ने ससन्देह कहा ।

"भैंस के गोबर के उपलों को बेच बेच कर जमा किये हैं" उस का शक दूर करते हुये ज़ुबैदा ने कहा । ग़रीबी और बेसरोसमानी के आलम में बचत का यह ढंग देख कर करीम बहुत खुश हुआ । रुपये जेब में रखते हुये बाज़ार चला गया । उस के मन में आया कि यदि किसी बहाने से जूते पहनने की बात टल जाती है तो यह रुपये बच्चों के कपड़ों की सिलाई और मेला दिखाने में काम आ सकते हैं । बहुत सोचा मगर कोई माक़ूल बहाना नहीं सूझा । सोचता विचारता आगे चला जा रहा था कि सड़क के किनारे महतरानी का इकट्ठा किया हुआ नाली का कूड़ा सामने आ गया और अचानक उस ढेरी पर पैर पड़ गया, जिसमें एक शीशे का टुकड़ा भी था जो अँगूठे में घुस गया और विचारों की श्रृंखला टूट गई । खम्बे का सहारा लेकर उसने शीशे का टुकड़ा निकाला । खून बहता चला जा रहा था । उसी कूड़े के ढेर में से कोई कपड़े का टुकड़ा ढूँढ कर उसने कस कर अँगूठे पर बाँध लिया । वह गेंद की तरह चोट खा कर भी उछलता हुआ घर को वापिस हो गया ।

"क्या अँगूठे में चोट मार ली ?" लँगड़ा लँगड़ा कर चलते हुये करीम को देख कर ज़ुबैदा ने कहा ।

"चोट मार ली या लग गई ?" करीम ने कहा ।

"जो उँगली काटने की हिम्मत कर सकता है वह चोट भी मार सकता है," उसने उदासी से कहा । "खट खट" दरवाज़ा खटका "कौन है" ज़ुबैदा ने किवाड़ों की दराज़ से बाहर झाँक कर देखा ।

"मैं डाकिया हूँ खत है ।" किवाड़ें हिलाते हुये उसने कहा ।

"यह कैसा खत है ?" बीमे की रसीद करीम के सामने रखते हुये ज़ुबैदा ने कहा ।

"यह ख़त नहीं है बल्कि बीमे की किस्त की रसीद है हर मास वेतन में से कुछ जमा हो जाता है। वैसे तो कुछ जमा होता नहीं, इस बहाने से कुछ जमा हो ही जायेगा ।"

"आपने जो किया अच्छा किया अब डाक्टर के पास जाकर अँगूठे पर पट्टी बँधवा आइये । आप बड़ कांइया हैं कहीं अस्पताल बन्द होने का बहाना बना कर यों ही मत लौट आइयेगा ।"

"नही नहीं, मैं पट्टी बँधवा कर ही आऊंगा" कहते हुये चला गया । चोट लगे कुछ देर हो गई थी अब अंगूठे में कुछ तर्राहट बढ़ गई थी । जख्म ठण्डा होकर और जिस्म गर्म होकर ही दुख देता है ।

डाक्टर का अस्पताल दूर था और एक हकीम का मतब पास था । इस लिये वह चलने की तकलीफ़ और डाक्टर लोगों के अधिक मँहगे नुस्खे के बोझ से बचने के लिये जमर्रुद अली खुर्राट के यहाँ चला गया । "अस्सलाम अलेकुम साहब ।"

"वअलेकुम सलाम भाई । आओ । अरे अँगूठे में क्या लग गया" हकीम जी ने चश्मे को नीचे झुका कर अँगूठे की तरफ़ झाँकते हुये कहा ।

"शीशे से चोट लग गई है साहब ।"

"अरे इतनी गर्मी में यहाँ तक आने की क्या ज़रूरत थी ? घर ही ककरोंधे के पत्तों का अरक बांध लेता । चौबीस घन्टों में ज़ख्म भर जाता फिर बाद को मुर्दासेन-कबीरा और जंगाल बराबर बराबर घोट पीस कर चमेली के तेल में मिला कर इस पर बाँधता रहता । चार पाँच दिनों में ठीक हो जाता । चल आ गया तो पट्टी बाँधे देता हूँ" कहते हुये शीरे की तरह गाढ़ी दवा लिहाफ़ के रूअड़ पर लपेट कर अँगूठे पर बाँध दी ।

'अजी साहब मैं तो नहीं आ रहा था मगर मेरे घर में जो है वह नहीं मानी और अस्पताल को भेज दिया, उधर न जाकर इधर चला आया" करीम पट्टी बँधवाते हुए कह रहा था ।

'अच्छा हुआ जो उधर नहीं गया वरना डाक्टर पहले तो एक सूई लगाता, खाने

की दवा देता और ड्रेसिंग करता। दस रुपये आज ही झण्ड कर देता।" बोरी के टुकड़े से हाथ पोछते हुये हकीम जी ने कहा।

"क्या पेश करूँ?" तकलीफ़ से नाक भौं सिकोड़ते हुये बोला।

"अरे इतने से काम के क्या लेना? चल नहीं मानता तो दो रुपये दे दे। यहाँ डाक्टरों की सी लूट खसोट थोड़े ही है।" हकीम जी ने कहा। करीम चुपके से दो रुपये तख़्त पर बिछी बाबा आदम के ज़माने की दड़ी पर रख कर चल दिया। वह घर पहुँचा। बच्चे मेला देखने की खुशियाँ मना रहे थे। उछल कूद कर रहे थे। मगर माँ को यह सब कुछ बुरा लग रहा था। फिर भी उसने किसी से कुछ नहीं कहा। करीम को देखते ही बच्चे और खुश हुये। करीम उनको खुश खुश देख कर मुस्कुराया, उसने अपनी तकलीफ किसी पर ज़ाहिर नहीं होने दी। वह देखते ही बोली—

"क्या डाक्टर लोग ऐसी पट्टी बाँधने लगे हैं?"

"हकीम जी से बँधवा आया हूँ।"

"अस्पताल बन्द होगा? कभी कभी का लोभ नुकसान देता है। आप हर जगह बचत करते हैं यह ठीक नहीं है। जाइये बच्चों को मेला दिखा लाइये। अब आपके जूते पहनने का तो सवाल ही ख़त्म हो गया, चप्पल पहन सकते हैं" ज़ुबैदा ने कहा। करीम चुपचाप बच्चों को लेकर मेला चला गया। सब की खुशी पूरी करने को उसके पास पैसे थे। मेला खुशी से दिखा दिया। पन्द्रह दिन बीत गये। आज करीम को हल्का सा बुखार था, ड्यूटी पर जाने का समय भी आ गया था लेकिन वह चारपाई नहीं छोड़ रहा था और करवटें बदल रहा था।

'क्या आज डयूटी पर नहीं जाओगे" ज़ुबैदा बोली।

"आज बुखार सा लग रहा है। जाने को जी नहीं कर रहा" अँगड़ाई लेते हुये करीम ने कहा।

"अगर ऐसा ही है तो जा कर दवा ले आइये, यों ही पड़े पड़े तो आप ठीक हो नहीं जायेंगे।"

"ज़रा सी तकलीफ़ में डाक्टर के पास क्या जाना, तुलसी के पत्तों की चाय बना दो, मैं इसी से ठीक हो जाऊँगा और ड्यूटी पर भी चला जाऊँगा।"

ज़ुबैदा ने चाय बनाई, पिलाई, और वह चला गया। लँगड़ा लँगड़ा कर चलता हुआ करीम आँखों से ओझल होकर भी आँखों के सामने नज़र आता रहा और ज़ुबैदा

साइकिल की आवश्यकता महसूस करती रही। वह ड्यूटी पर चला गया। तबीयत तो सुबह ही से ठीक नहीं थी, काम करते करते कुछ और बिगड़ गई। काम करना दर-किनार उस को शाम तक अपना जिस्म सँभालना भी मुश्किल हो गया। हैन्डिल पर हाथ रखे वह किसी की सहायता खोज रहा था कि आन की आन में उस का बाँया हाथ एक तरफ़ चकली पर जा पड़ा और दो उँगलियाँ कट कर नीचे गिर गईं। ज़मीन पर पड़ी पड़ी उँगलियाँ मछली की तरह तड़फ रही थीं। उसने मशीन बन्द कर दी। आस पास के वर्कर जमा हो गये और जल्दी ही उसको अस्पताल ले गए। डाक्टर साहब पिक्चर गए हुए थे। कम्पोन्डर ने पट्टी बाँध दी और वह घर चला गया।

"यह क्या कर लिया आपने" ज़ुबैदा देखते ही बोली "अभी तो किसी बच्चे की शादी भी नहीं है, यह क्या किया आपने?" उसने धीरे से कहा। किसी ने सुना किसी ने नहीं सुना। बच्चे चीखते चिल्लाते हुए आ गए।

"अब्बा जान को क्या हो गया? अब्बा जान को क्या हो गया?" हर बच्चे की ज़ुबान पर एक ही वाक्य था।

"कुछ नहीं मरो भागो यहाँ से" गुस्से में ज़ुबैदा ने बच्चों को डांटा। करीम को रात भर नींद नहीं आई और तड़प तड़प कर करवटें बदलता रहा। शरीर अकड़ सा गया। ज़ुबैदा ने सोचा किसी भूत प्रेत का असर हो गया है। उसने बदायूँ वालों की जियारत बोली, नियाज़ का सवा रुपया उठा कर रख दिया। करीम को बड़ी तकलीफ़ हो रही थी। उसकी तकलीफ़ का अन्दाज़ा उसके चेहरे पर पड़ी सलवटों से साफ़ साफ़ लगाया जा सकता था। जिस वक़्त नियाज़ का सवा रुपया बाज़ू में बाँधा जा रहा था उसी समय एक वरकर आ गया।

"अस्सलाम अलेकुम।"

करीम उस के सलाम का जवाब मुँह खोल कर न दे सका और हाथ उठा दिया। वह यह देखते ही समझ गया और बोला "भाभी यह क्या कर रही हो इन पर आसेब नहीं टिटेनिस का रोग सवार है। फ़ौरन अस्पताल ले चलो। इस मरज़ में ज़रा सी भी देर ठीक नहीं होती। मैंने कई रोगी इस मरज़ में मरते देखे हैं।"

यह सुनते ही ज़ुबैदा के हाथ पैर फूल गये और उस वरकर से सहमत हो गई। डा० श्रीमन नारायन के अस्पताल ले जाया गया। डा० ने देख भाल कर कहा "जिस दिन इसके अँगूठे में चोट लगी थी उसी दिन साढे तीन रुपये का एक टीका लगना चाहिए था। अब साढे तीन सौ भी जान बचा दें तो बड़ी बात है। फ़ौरन सरकारी अस्पताल ले जाओ।" यों कह कर डा० कुर्सी पर जा बैठा और दूसरे रोगियों को देखने

लगा। जब सरकारी अस्पताल पहुंचे तो वहाँ भी यही शब्द सुनने को मिले और डा० ने कहा "सात आठ सौ का खर्चा है हिम्मत हो तो पर्चा लिखूँ ?"

"पर्चा कहाँ को लिख रहे हैं आप" ज़ुबैदा ने ओढ़नी सँभालते हुये पूछा।

"बाज़ार को।" डा० ने शीघ्रता से उत्तर दिया।

"क्या आपके यहां यह दवायें नहीं हैं ?"

"इतनी मंहगी दवायें सरकारी अस्पताल अपने पास से कैसे दे सकता है ?"

"सरकारी अस्पताल ग़रीबों के इलाज के लिए बने हैं और ग़रीबों का यहाँ इलाज न हो तो वे कहाँ जायें ? हमारे पास तो हमारे जिस्म के अलावा कुछ भी नहीं है। डा० जी हमें तो कहीं इतना रुपया क़र्ज़ भी नहीं मिलेगा।"

"बहन जी हमारे सामने ऐसे कहने से कुछ नतीजा नही निकलेगा। सब की अपनी अपनी मजबूरी होती है। देखो तुम सब अपना अपना कुछ ख़ून बेच डालो उसकी क़ीमत से इन्जेक्शन आ जायेंगे कुछ यहाँ से मदद कर देंगे।"

विवशता और वक्त का तक़ाज़ा कि सब ने डा० की राय से सहमति प्रकट की। ख़ून दिया। बिका। इन्जेक्शन आए और लगे, कुछ राहत की सूरत भी पैदा हुई। वरकर कह रहा था "सभी सरकारी अस्पताल अब पहले जैसे नहीं हैं। अब तो—

पड़े रहते हैं रोगी रात दिन बाहर ही क्वार्टर के।
लगाये जाते हैं इन्जेक्शन डिस्टिल्ड वाटर के।।

अंग्रेजों के जमाने में सरकारी अस्पताल अच्छा काम करते थे।" यही बातें हो रहीं थीं कि करीम को एक दौरा पड़ा और उस की आत्मा उसके शरीर से ग़द्दारी कर गई। दुबारा डा० को बुलाने की नौबत भी नहीं आई।

ज़ुबैदा की आँखों में आँसू थे और उसके कानों में करीम के कुछ दिनों पहले कहे गये वाक्य घूम रहे थे "मैं अपने बच्चों की शादी में किसी के आगे हाथ नहीं फैलाऊँगा। ग़रीब जीने के लिये खाते हैं, जिस दिन ग़रीबों को भरपेट रोटी मिलने लगेगी उस दिन भारत जन्नत नुमा बन जायेगा। मेरे होते हुये तुम किसी बात की फ़िक्र क्यों करती हो ? जो अपनी चिन्ताओं को अमल में न ला सके उस को चिन्ता नहीं करनी चाहिये।"

◆

“श्रम और पूजा”

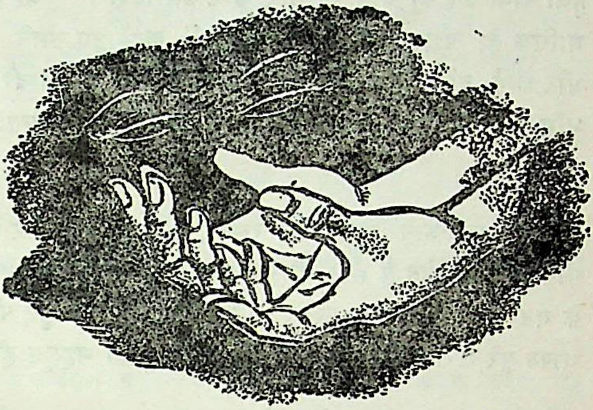

“हे भगवान तू सव की मदद करता है। आज मेरी भी मदद कर दे। मेरे खेत में शाम ही तक का काम रह गया है। अगर रात को वारिश हो गई तो पता नहीं मेरी कपास की निराई कव हो ? शकूर ठहरा मजदूर, जव भी अज़ान की आवाज़ आती है खुर्पा छोड़ कर चल देता है। इसे यह भी नहीं सूझता कि खेती के कामों में समय की पावन्दी नहीं चला करती। हाँ अगर आज अज़ान की आवाज़ नहीं आये तो काम पूरा हो जायेगा। क्या तू मेरी विनती को स्वीकार कर लेगा ? इतनी तेज हवा चला दे कि आवाज़ पूरब को उड़ जाये, या अज़ान के समय ज़ोर ज़ोर से विजली कड़कने लगे। जैसे भी हो अज़ान की आवाज़ नहीं आनी चाहिये। मुल्ला को बीमार ही डाल दे, मगर तव भी यह समस्या हल नहीं होगी क्योंकि मुसलमानों में तो हर आदमी नमाज़ पढ़ लेता है, अज़ान देने वाले भी अनेकों होगे। हिन्दुओं जैसी वात थोड़ ही होगी कि जो कुछ करेंगे ब्राह्मण ही करेगें। मेरे लिये तो मुल्ला का बीमार पड़ना भी व्यर्थ जायेगा। अरे मैं तो तुझे तरकीब सुझाने लगा। चाहिये थी विनती करनी। भूल हो गई ईश्वर ! क्षमा करना । तू नाराज़ न होना। ग़रीवों का एकमात्र सहारा तू ही है।”

मन ही मन भीखा सोच रहा था और खुर्पा वरावर चला रहा था। तन्मयता और तल्लीनता में उस से कपास के दो पौधे कट गये और उसको वोध तक नहीं हुआ। शकूरा की नज़र इन कटे हुये पौधों पर पड़ गई उसने टोका “यह क्या हो रहा है भीखा। दो पौधे कट गए और तुझे होश भी नहीं है। अगर मुझ से एक भी कट जाता तो शोर मचा देता।” शकूरा के यह शव्द सुन कर वह चौंक गया और सो कर उठे व्यक्ति की भाँति देखने लगा। कपास के लाल लाल पौधे खरपतवार के साथ उसके हाथ में लगे हुये थे। छोटे बच्चे के खुले हुये पन्जे की तरह कपास के पत्ते चमक रहे थे। ताज़ा कटे

हुये होने की वजह से कुम्हलाये नहीं थे ।

"हाय दो पौत्रे कट गए" बड़े मार्मिक ढंग से उसके मुँह से निकला । उसे इन पौधों के कटने से इतना मलाल हुआ कि इतना शहरियों के फ़िसादों में मरने वाले लोगों का भी नहीं होता । उसने आगे फिर कहा 'अब तो यह जम भी नहीं सकते । अरे तनिक सी जड़ रह गई है । शायद इसके आधार पर यह फिर जीवित हो जायें" कहते हुए उसने उन्हें फिर अलग अलग गाड़ दिया और तत्काल अपने पीने का रखा हुआ पानी उन की जड़ों पर धीरे से उँडेल दिया । "जो होना था हो गया आगे राम मालिक है, पछताने से भी क्या होगा" कहते हुए उसने जल्दी से खुर्पा उठा लिया और व्यर्थ गये समय की पूर्ति के खयाल से जल्दी जल्दी काम करने लगा जैसे समर भूमि में लड़ने वाला सैनिक मरने वालों की चिन्ता न कर के आगे बढ़ता चला जाता है ।

"अब आगे का ध्यान रखना, काम तो देर सवेर हो ही जायेगा मगर कटे हुए पौधे हरे नहीं होते हैं ।" बीड़ी सुलगाते हुए शकूरा ने चेतावनी दी । यह सुन कर भीखा के मन पर मन भर का पत्थर सा टकराया । "कटे हुए पौधे हरे नहीं होते हैं" यह वाक्य पूरे शरीर में विषैले नाग की भांति घूमता महसूस होता रहा ।

' आगे का ध्यान तो रखुँगा मगर शकूरा इन कटे हुए पौधों का मलाल थोड़े ही चला जायेगा । इन्हें कल परसों आकर फिर देखूँगा, हरे होते हैं या नहीं । पहचान के लिए दो सैंटे गाढ़े देता हूँ । अगर यह हरे नहीं हुए तो और मी मलाल होगा । इन दो ही पौधों पर इतनी कपास आती कि दो नेताओं की टोपियाँ बन सकती थीं" भीखा ने कहा ।

"तुम को नेताओं की टोपियों की फिक्र है और उनको कुर्सी की चिन्ता है । दो रूमाल भी तो बन सकते थे यों क्यों नहीं कहते ?" शकूरा बोला ।

"मैं तो पेट के लिए दो रोटी और सिर के लिए टोपी को अधिक अहमियत देता हूँ । इससे बढ़ कर और कुछ नहीं है । तुम रूमाल की बात क्या सोच कर करते हो ?" खुर्पा तेज़ी से चलाते हुए हाँपते हुए भीखा ने पूछा ।

"भीखा टोपी सिर्फ़ सर ही ढकती है मगर रूमाल कई काम में आता है, बीड़ी के टुकड़े को पीछे फेंकते धुए शकूरा ने कहा ।

"यह ठीक है मगर" गिरते हुए बीड़ी के टुकड़े पर नज़र डालते हुए भीखा ने कहा (बीड़ी के टुकड़े पर भीखा ने नज़र इस लिये डाली थी कि वह कहीं कपास के पौधे की जड़ में न जा गिरे) "दुनिया के काम इन दो ही के लिये किये जाते हैं शकूरा ।"

"कैसे ?" शकूरा अपनी बात कटते हुये देख कर बोला।

"देखो शकूरा, सारन्धा, चम्पत राय, राना प्रताप, शिवा जी, लक्ष्मी बाई आदि ने टोपी ही के लिये प्राणों की आहुति दी थी।"

"ठीक है भीखा मगर वह पुराने ज़माने की बात है। अब तो टोपियों का रिवाज ही घटता जा रहा है। लोगों ने अलफ़ाज़ के मतलब ही बदल दिये हैं। जैसे टोपी यानी इज़्ज़त की बात है। आस्ट्रेलिया में एक तरह के क्लब बने हैं जिन में नौजवान अपनी दुल्हनों को एक दूसरे की दुल्हन से पूरी रात के लिये बदल लेते हैं। भारत में भी मातहत अपने बौसों को खुश करने के लिये बीवियाँ पेश कर देते हैं। कहाँ रही टोपी की बात ?"

"रोटी की बात भी ग़लत है। क्या राजा नवाबों को रोटी नहीं मिलती थी जो कर्लिग, तराइन, पानीपत और प्लासी की लड़ाइलाँ लड़ीं। इस लिए बात रोटी और टोपी ही तक नहीं है वल्कि इस के अलावा भी कोई और चीज़ है जिसके लिये आदमी परेशान है।"

"ठीक है शकूरा। इसके अलावा कुर्सी है मैं मान गया मगर" इसके आगे वह कुछ कहना चाहता था कि एक चूहे पर नज़र पड़ गई और उसने कहा "शक़ूरा तेरे सामने से चूहा निकल गया और तूने मारा नहीं।"

'मैंने देखा नहीं, किधर है ?"

"वह है।" भागते हुये चूहे को संकेत से दिखाया। शकूरा मारने को सँभला ही था कि चील आई और पन्जों में दवा कर ले गई और जिधर से अजान की आवाज़ आती थी उधर ही को चली गई।

"जिस की मौत आती है यों आती है" भीखा ने निराई में जुटते हुये कहा। शकूरा भी निराई में लग गया।

"चीलें कितने चूहे मारेंगी ? खेत के खेत भरे पड़े हैं चूहों से।" शकूरा ने बड़े इत्मीनान के साथ कहा। "भीखा साइन्सदानों ने आदमियों को मारने के लिये तो बेशुमार ज़हर और घातक हथियार बना डाले हैं मगर ज़ालिम नुक्सानदेह जानवर को मारने के लिये कोई कामयाव क़दम नहीं उठाया। प्लेग, ताऊन और चेचक का नाम मिटाने वाले इसका नाम क्यों नहीं मिटा देते ?"

"इस को मारने के लिये ज़िंक फ़ास्फ़ेट बनाई तो है। चावल या ज्वार के दानों

पर इसका लेप करके ब्रिलों पर रख देते हैं और चूहा खा कर मर जाता है।"

"यह कुछ नहीं। आजकल चूहे इतने होशियार हो गये हैं कि उसको सूंघ कर छोड़ देते हैं, खाते ही नहीं। कोई ऐसा ज़हर बनाना चाहिए था जो खेतों में पानी देते वक़्त बखेर दिया जाता या मुलावे पर रख दिया जाता और सारे खेत में फैल जाता। इस से चूहे ही नहीं हर जीव मारा जाता।"

"साइन्स वालों के मन के दिलद्दर हैं यदि उन्होंने इधर ध्यान कर लिया तो यह भी हो जायेगा। असम्भव कुछ भी नहीं है।"

"क्या कहा असम्भव कुछ भी नहीं है?" शकूरा ने सन्देहास्पद ढंग से कहा "क्यों ओलों को भी गिरने से रोका जा सकता है" उसने बैठ कर पूछा?

"तू खुर्पा मत रोक, ओले भी रोके जा सकते हैं। सुन, मेरा लड़का साइन्स पढ़ता है। वह सुनाया करता है कि लैसर किरणों से मोटे से मोटे पेड़ का तना पल भर में काटा जा सकता है। वह किरनें हर नक्षत्र तक जा सकती हैं। यदि इधर ध्यान दिया जाये तो ऐसी मशीन बनाई जा सकती है जिस के अन्दर से पानी के फ़व्वारे की भांति गर्म किरणें आकाश की तरफ़ भागें और ऊपर ओले बनने के वातावरण को तवदील कर दें जिससे ओले पानी की सूरत में गिरें। हीरोशिमा और नागासाकी में आग लगाने वाले अपनी शक्ति का प्रयोग इधर भी तो कर सकते हैं।"

"भीखा तू तो शेखचिल्ली की सी बातें करता है। भला ख़ुदाई में दखल कौन दे सकता है?"

"शकूरा एक बात बता। हज़रत यूनुस अलस्सलाम मछली से जन्मे थे?"

"हाँ।"

"पैगम्बर की एक उंगली से चाँद के दो टुकड़े हो गये थे?"

"बिल्कुल हो गये थे।"

"हज़रत अय्यूब अलस्सलाम का कोढ़ बिना दवा के जाता रहा था?"

"बिल्कुल जाता रहा था।"

"जब यह सब सम्भव हो सकता है तो फिर यह भी सम्भव हो सकता है। क्या यह लोग उस खुदा के बन्दे नहीं हैं जिस के वह थे?" भीखा ने ईंट पर मार कर खुर्पे की मिट्टी छुड़ाते हुये कहा।

"ठीक हैं भीखा इन्सान सब कुछ कर सकता है। आज काफ़ी देर हो गई अज़ान नहीं हुई" शकूरा बात का पहलू बदलते हुए बोला।

"हो जायेगी अज़ान। चिन्ता क्यों करता है? जब तक अज़ान न हो तब तक तो शान्ति से काम करता रह। अज़ान की टोह में पौधे मत काट देना" भीखा ने कहा।

"नहीं भाई मुझ से कपास नहीं कटेगी। मैं बहुत संभल कर काम करता हूँ।" शकूरा ने दूसरी बीड़ी सुलगाते हुये जवाब दिया।

"शकूरा तू बहुत बीड़ी पींता है। यह स्वास्थ्य को हानि पहुचाती है। फेफड़ों को खराब करती है। यह मानव की शत्रु है और कोई अपने शत्रु से प्यार नहीं करता। तो तू इसे मुँह लगाये क्यों फिरता है?"

"भैया ठीक कहते हो मगर छुटती तो नहीं। टीका की बहू ने भी कई बार कहा है मगर क्या करूँ आदत से मजबूर हूं।"

"रमज़ान रखते हो।"

"उन्तीसों।"

"उन दिनों में बीड़ी पीते हो?"

'रमज़ान में बीड़ी पीने से क्या मतलब?"

"शाम तक कैसे रहते हो?"

"वह तो नियत बाँधी जाती है। बस दिल पर काबू हो जाता हैं, इसी तरह दिन बीत जाता है।"

"तुम इसी तरह नियत बना कर इस आदत से छुटकारा पा सकते हो। कुछ दिनों बारह घन्टे की नियत बाँधो, फिर चौबीस घन्टे की, फिर उससे भी अधिक, फिर सदा के लिए। जब आदमी को किसी चीज़ से नफ़रत हो जाती है तो वह उससे खुद ही बच जाता है। अभी तुमको बीड़ी से नफ़रत ही नहीं हुई है।"

"तुम्हारी बात तो मारके की है मगर—।"

"मगर क्या इस बहाने से कुछ आराम मिल जाता है। जितना समय यहाँ का मजदूर बेकार करता है इतना किसी भी देश का मजदूर समय बेकार नहीं करता। भारत का मजदूर तो दिन पूरा करने की कोशिश में रहता है। शाम हुई और काम छोड़ा। यह नहीं सोचता कि कुछ तो करके दिखा दे। यही कारण है कि भारत के

मजदूर की निर्धनता ज्यों की त्यों है। वह इन्हीं गिनती के सिक्कों में जीवन के दिन बेचता चला जाता है। बरकत तो उतनी ही होगी जितनी महनत की जायेगी।"

"क्या मैं काम कम करता हूं ?" शकूरा ने टुन्न हो कर कहा।

"जो कुछ कहा जा रहा है वह अपने ही लिए क्यों समझ रहा है ? यह तो आम बात कह रहा हूँ। एक दिन मैंने पाँच मजदूर ईख खोदने के लिए खेत में भेजे थे। हाउस टैक्स के सिलसिले में मुझे कचहरी में जाना पड़ा। लौटते समय मैंने झाड़ियों की आड़ से देखा तो सब लोग गन्ना खा रहे थे।"

"गन्ने कहाँ से आये ? उन दिनों में तो गन्ने बिल्कुल खत्म हो जाते हैं" शकूरा ने अचरज से कपास के पौधे की जड़ में से चुटकी से घास उखाड़ते हुये पूछा।

"ज़मीन में बोये हुए गन्ने निकाल निकाल कर खा रहे थे।"

"उन में तो अँखुये निकल आते हैं।"

"मैंने भी उन से इसी प्रकार कहा तो बोले जिस पेंडे में अँकुर नहीं होते हैं उसको खाते हैं।' मैंने कहा 'तुम को क्या पता कि ज़मीन में दबे हुए कौन से पेंडे में आँखें नहीं हैं' तो बोले 'कखी में लग कर निकल आते हैं। जब उसे दबाने के लिये देखते हैं तो जिस में आँखें नहीं होती उस को दबाने से क्या फ़ायदा, इस लिये खा लेते हैं।' यह सुन कर मैंने कुछ नहीं कहा। कम काम होने की शिकायत की तो असलियत को छुपाते हुये बोले 'ज़मीन सख्त हो गई है कल को काम ज्यादा हो जायेगा।' यह सुन कर मैंने मौन धारण कर लिया और फिर किसी से कुछ भी नहीं कहा। केवल मन ही मन सोचता रहा कि आज ज़मीन सख्त होने से काम कम हुआ है तो कल को ज़मीन और भी सख्त होगी फिर अधिक काम होने का क्या कारण हो सकता है ? मैंने यह रहस्य कल पर छोड़ दिया। देखें कैसे अधिक काम होता है कल को ?"

"शाम हो रही थी सब लोग चले गये। दिन निकला। मैं खेत में जान बूझ कर कुछ देर से पहुँचा। काम वास्तव में अधिक हो गया था। मैंने खुदी हुई ज़मीन देखी तो बिना खुदी ज़मीन पर मिट्टी बिखरी हुई पाई। हाथों से मिट्टी बचा कर उनको दिखाया तो कहने लगे कहीं रह गई होगी बिना खुदी। आगे ऐसा नहीं होगा। मैं उन की चालाकी और मक्कारी को समझ गया था। अगले दिन उनको काम पर नहीं बुलाया। यह हाल है भारतीय मजदूरों का। कैसे उन्नति कर सकते हैं यह मजदूर और कैसे भारत आगे बढ़ सकता है ?"

"ठीक है। भीखा आज तू दोपहर को खाना खाने नहीं गया" शकूरा ने बात का पहलू बदल कर कहा।

"हाँ भैया आज दोपहर को मैं खाना खाने नहीं गया था। सुबह गुड़ और चने खा कर आया था। दोपहर को जाता भी तो खाना बनाने में इतनी देर लग जाती कि आज कपास की निराई होने से रह जाती।"

"क्यों, वह कहाँ गई है, जो खाना हाथ से बनाते।"

"वह लड़के के साथ अपने मायके गई हुई है। वहाँ के ज़मीदार ने अपनी हवेली चौकोर करने के ख़याल से उसके मायके वालों को पुराना घर छुड़वा कर गाँव के बाहर नया घर बनाने को अपने बाग में से जगह दे दी है। वह नहीं भी चाहते तो भी क्या करते? वहाँ ज़मीदार का बोलबाला है। इस दुनिया में मुँह देखा इन्साफ़ है। गरीब की कोई अदालत ही नहीं है।"

"क्यों नहीं है? अल्लाह ताला के यहाँ सब का इन्साफ़ होता है।"

"उस के यहाँ का इन्साफ़ शायद शरीर से सम्बन्ध न रखता हो और आत्माओं से सम्बन्धित हो।" कमर सीधी करते हुए मेंड पर नज़र डालते हुए भीखा ने कहा।

"ऐसा नहीं है भीखा। उसकी नजर ज़ालिम पर भी है और मज़लूम पर भी।"

"हो सकता है। मैंने तो यह देखा है कि जब कहीं आग लगती है तो हवा लपटों को और बढावा देती है। गाँव में किसी ने भी ज़मीदार से यह नहीं कहा कि भरी बरसात में उसका घर छीन रहे हो तो रहने के लिये घर बनवा कर तो दे दो या घर बनाने लायक पूरी सामग्री दे दो। हार कर मैंने कुछ रुपये सूद पर लेकर उस के साथ उसके मायके वालों को भिजवाये हैं।"

"उस गाँव को छोड़कर इस गाँव में क्यों न बस गये?"

"काश्तकारी की ज़मीन का क्या होता?"

"वह तो यहाँ से भी करते रहते।" शकूरा ने सुझाया।

"यह पता चल जाता तो ज़मीदार फसल उजड़वा दिया करता।"

"अब्बा ऽ ऽ ऽ।" किसी ने पीछे से पुकारा और शकूरा ने मुड़ कर देखा।

"क्यों बेटी यहाँ किस लिये आई है?" शकूरा ने पूछा।

"सात बज गये और आप घर नहीं पहुंचे इस लिये अम्मा ने भेजा है कि मालूम तो कर के आ क्या कर रहे हैं? पहले तो आप असर की अज़ान के बाद ही आ जाया करते थे।"

‘‘अभी अज़ान हुई ही कहाँ है’’ शकूरा ने हैरत से पूछा ।

‘‘अज़ान तो कभी की हो गई मगर आपको आवाज़ नहीं आई होगी, क्यों कि मस्जिद का लोडस्पीकर ख़राब हो गया है । एक चील कहीं से चूहा ले आई थी वह उस के पन्जों से छूट कर मस्जिद के ऊपर गिर गया, वह उसके हाथ नहीं आया और तारों के पाइप में घुस गया । जैसे सीवर लाइन के पाइपों में वहुत से भिखारी छुप कर रात काट देते है । उसने अपनी आदत के मुताविक तार कुतर दिया और वक़्त पर लोड-स्पीकर की ख़राबी हाथ नहीं आ सकी ।’’

‘‘अल्ला ताला को यह काम कराना था वेटी ।’’ शकूरा ने मुस्कुराते हुये कहा । भीखा भी खुश खुश काम निवटा रहा था । मगर वेटी सुस्त खड़ी थीं ।

◆

"चरित्र विक्रेता"

साहू गोपी चन्द किसी विशेष व्यक्ति के आने की बाट जोह रहे थे । वह बेचैन से थे । उनके चेहरे पर परेशानी के चिन्ह साफ़ साफ़ दीख पड़ रहे थे । उसी समय घिसटता हुआ एक भिखारी उनके द्वार पर आकर रुका । इस भिखारी का असली नाम तो किसी को पता नहीं था लेकिन खचेड़ा नाम से सभी परिचित थे । वह इसी नाम से बोलता भी था । बात यह थी कि बचपन में उसके धड़ को पोलियो ने मार दिया था । तब से वह खिचड़ खिचड़ कर ही रास्ता तै करता था । अब उसकी आयु तीस से ऊपर ही थी । नगीने के ख़ास बाज़ार में उस को घूमते फिरते देखा जाता था । कभी कभी वह शहर से बाहर चुंगी की तरफ़ भी चला जाता था । इसी इलाक़े के कुछ दयालु लोग उसके पेट भरने लायक़ रोज़ दे देते थे ।

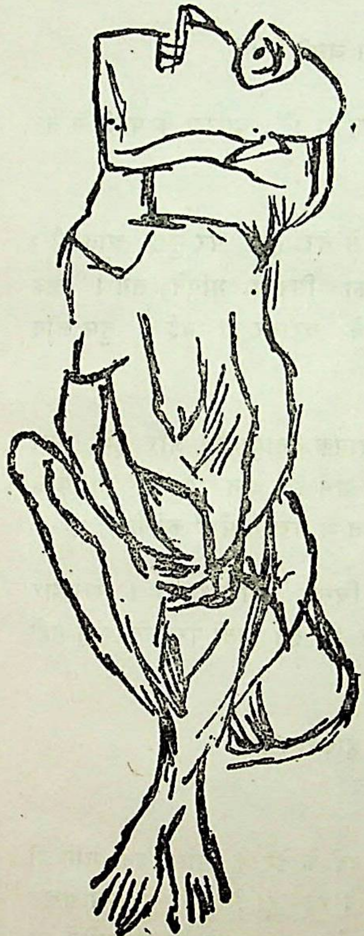

आज सवेरे से रिमझिम रिमझिम वर्षा हो रही थी । वह घूम फिर नहीं सका था । उसने सोचा, यह बड़े आदमी हैं । पेट भरने लायक़ दे ही देंगे । इसलिये बड़ी विनम्रता से बोला "साहू साहब कल से कुछ नहीं खाया है । बड़ा भूखा हूं । कुछ खिला दो । बड़ा पुन्न होगा ।"

"आगे जा । मन्दिर में एक धर्मशाला है, वहाँ खाना मिलेगा और रहने को भी ।" टालते हुये साहू साहब ने कहा ।

"साहू साहब. इस कीचड़ और बारिश में मुझे क्यों कहीं खिचड़ने भेजते हो ? मन्दिर भी तो आप जैसे दयालु धनाड्य लोगों ने ही बनाये हैं ।"

‘ दिमाग़ क्यों खाता है ? यह खिचड़ना तेरे नसीब में लिखा है, मेरा क्या दोष है ?” वे निष्ठुरता से बोले ।

“सरकार केवल दो रोटियाँ खिला दो और मुझे कुछ नहीं चाहिये ।”

‘ अपनी ही बात कहे जाता है । अरे यह कोई रोटी का समय है । दो बज रहे हैं । हमारे यहाँ नौ बजे तक खाना बनता है । इस वक़्त तुझे रोटी कहाँ से लाऊँ ?” साहू साहब चबूतरे पर टहलते हुये बोले ।

‘ सरकार इतने बड़े घर में दो रोटियाँ न निकलेंगी ? दसों रोटियाँ तो बच्चों के खाते खाते बच रहती होंगी । मैं तो जूठन ही खा लूँगा । भूखा भोजन देखता है, भक्ष्य अभक्ष्य नहीं ।”

“हमारे यहाँ तो जूठन फ़ौरन गाय को खिला दी जाती है ।”

“तो एक रुपया दे दो, कहीं से कुछ लेकर खा लूँगा ।” बारिश के पानी से तर बालों को झाड़ते हुये उसने कहा ।

“एक रुपया ऽऽऽ। तू तो ऐसे माँग रहा है जैसे तेरा हम पर कुछ आता है । फ़क़ीर कभी एक पैसा माँगा करते थे, फिर दस पैसे का सिक्का मांगने लगे । अब रुपया मांगते हैं यानी एक रुपये की औक़ात एक पैसे के बराबर हो गई । तुम लोग मांगते हुये शर्माते भी तो नहीं ।”

“साहू साहब आपको भगवान ने दान देने ही लायक़ बनाया है और हमें भीख मांगने लायक़ । भिखारी को भीख मांगने में काहे की शर्म ?” दान से धन की वृद्धि होती है । ग़रीबों की दुआयें आपकी दौलत और इज़्ज़त में बरकत पैदा करेंगी ।”

“जा जा, लेक्चर मत दे । मैं दुआ बददुआ को चिन्ता नहीं करता हूँ । पाराशर के शाप का भय शकुन्तला को भयभीत कर गया था । मैं इन बातों पर विश्वास नहीं करता । जो कुछ होना है वह तो होकर ही रहेगा ।”

‘तुम शाप से नही डरते ?” खचेड़ा ने कठोर होकर कहा ।

“हाँ हम शाप से नहीं डरते ।”

“साहू साहब तुमने उस रोज़ जंगल में चूने के गर्द के ढेर के पास बिना माँगे ही एक रुपया दे दिया था और आज माँगने पर भी नहीं दे रहे हो ? तुम्हें सचमुच ग़रूर हो गया है । तुम बददुआओं से नहीं डरते ? देखता हूँ कैसे नहीं डरते ? मैं ज़मीन पर

खिचड़ने वाला आदमी तुम्हारी शान शौकत मिट्टी में मिला कर छोड़ूँगा। मत दो एक रुपया।" कहता हुआ खचेड़ा घिसटता हुआ गेट से बाहर निकल गया। साहू साहब किसी दूसरी ही लगन में थे। उसके शब्दों पर गहराई से ध्यान न दे सके।

वह लकड़ी की टाल की तरफ़ बढ़ा। वहीं एक लक्कड़ पर एक पागल बैठा था। उसने खचेड़ा की तरफ़ ग़ौर से देखा। फिर उँगली के संकेत से अपने पास बुलाया। खचेड़ा ने मन ही मन सोचा "यह तो पागल है। बहुत दिनों से इधर उधर घूमते देखा है। क्या पता पास बुला कर ईंट ही फेंक कर मार दे। ऊँह—मार दे मार देगा तो। ऐसी ज़िन्दगी से तो मौत ही अच्छी। चलो इसकी भी सुनें।" यों विचारता हुआ खचेड़ा निर्भय होकर उधर गया।

"क्या बात है" वह पागल से बोला।

"लो तुम भूखे हो, कुछ खालो" कहते हुये उस पागल ने फटी पुरानी मैली कुचैली झोली में से चार तंदूरी रोटियाँ और देशी घी में भुनी मुर्ग़ की खुश्क बोटियाँ उस की तरफ़ बढ़ाईं। खचेड़ा ने रोटियाँ तो हाथ में ले लीं, मगर इधर शंकाओं और घृणा का जन्म हो रहा था और उधर उनकी सुगन्धि से मुँह में पानी भर भर आ रहा था जिसे बार बार निगलने की आवाज़ पागल को भी आ रही थी। जीभ अन्दर ही अन्दर घूम रही थी। एक पागल के पास ऐसा खाना और बातचीत का यह अन्दाज़ देख कर वह असमन्जस में पड़ गया। उसने बहुत कोशिश की मगर कुछ समझ न सका। रोटियों को हाथ में लिये हुये उस की सूरत को ग़ौर से देखता रहा। उसकी दाड़ी और मूँछों पर थूक और रेंट लगी हुई थी। उसके तार तार गन्दे पाइजामे के पीछे मल सा लगा हुआ था जिस पर बुरी तरह मक्खियाँ भिनक नही थीं। यह देखते देखते खचेड़ा इतना घिनियाया कि उस की दी हुई रोटियों से भी घृणा हो गई और भूख को बरदाश्त करते हुये खाना वापस कर दिया। "लो तुम ने दे दिया और मैंने ले लिया। शुक्रिया, मैं भूखा नहीं हूँ।"

"तुम्हारा क्या नाम है?"

"खचेड़ा।"

"खचेड़ा भाई साहब! अगर तुम भूखे नहीं होते तो मेरी रोटियाँ अपने हाथों में नहीं लेते, साहू साहब के घर से रोटियाँ नहीं माँगते। तुम झूठ बोल रहे हो। मैं तुम्हारे मन की बात समझ रहा हूँ। तुम मेरे बाह्य रूप से घिनिया कर रोटियाँ वापस कर रहे हो। आई एम नॉट बैड। देखो में एक बहुरूपिया हूँ। मेरी दाड़ी मूँछें नकली हैं और उन पर लगी हुई चीज़ गन्दगी नहीं रबड़ी है। मेरे पाइजामे पर शीरा और बुरादा लगा

हुआ लेप है जिसको देख कर सब मल समझ लेते हैं और मुझ से घिनियाते हैं। तुम खाना खालो। भूखे हो।" पागल ने समझाया और खचेड़ा समझ गया। इसके बाद उस ने खाना खा लिया। बहुरूपिये ने पानी लाकर पिलाया। अब खचेड़ा की जान में जान आई।

"मैं तुम्हें बहुत दिनों से इसी भेस में घूमते फिरते देख रहा हूँ और एक ही इलाके में, ऐसा क्यों है? बहुरूपिये तो रोज़ रूप बदलते हैं। रोज़ जगह बदलते हैं" खचेड़ा ने सवाल किया? खाना खाते पर वह यही सोच रहा था।

"तुम ठीक कहते हो मगर मुझे यही पार्ट पसन्द है। मैं इसी रूप में खाने लायक कमा लेता हूँ। अच्छा एक बात बताओ" बहुरूपिये ने बात का पहलू बदला।

'क्या" दाँत कुरेदते हुये खचेड़ा ने कहा।

"तुमने साहू सहाब ये यह बात किस बल बूते पर कही थी कि मैं तुम्हारी शान शौकत मिट्टी में मिला दूँगा।"

यह सुन कर खचेड़ा कुछ देर तो मुस्कुराया फिर बोला "इस का यह मतलब है कि तुम मेरी सारी बातें सुन रहे थे। सुनो, यह काला धन्धा करता है। सुबह थाने में जाकर दरोग़ा जी से सारी पोल खोल दूँगा। बस फिर क्या है? इस की ईंट से ईंट बज जायेगी। यह समझता है कि मैं कुछ समझता ही नहीं हूँ।"

"काले धन्धे तो अनेक हैं। यह कौन सा काला धन्धा करता है?"

"अफ़ीम और गाँजे का काम करता है।"

"खुद बेचता है या बिकवाता है?"

"यह मैं नहीं जातना लेकिन इतना पता है कि इसके पास मनों अफ़ीम और गाँजा जमा रहता है।"

"कहाँ रखता है?"

"यह तुम्हें क्यों बताऊँ? यह तो पुलिस को बताने की बात है।"

"खचेड़ा भाई साहब, मैं न पागल हूँ, न बहुरूपिया हूँ, बल्कि एक सी० आई०डी० वाला हूँ। इसी भेद को जानने के लिये यह रूप बनाये महीनों से इस इलाके में फिर रहा हूँ।"

"मुझे इतना बताया गया है कि नगीना से पूर्व में एक किलोमीटर दूर चुँगी के पास सड़क के किनारे ग़ैर आबाद इलाके में एक बीघा जमीन बाईस हज़ार रुपये में ख़रीदी गई है। आज तक उस के आस पास इतनी मंहगी ज़मीन नहीं ख़रीदी गई। फिर इससे कोई मंहगा काम भी नहीं किया गया। चारों तरफ़ पीली ईंट से दीवार बनवा कर जहाँ तहाँ राख और चूने के गर्दे के ढेर लगा रखे हैं। ज़रूर यह किसी काले धन्धे की रूप रेखा है, आज तुमने यह समस्या सुलझा दी।"

'बड़े गहरे होते हो तुम लोग भी।"

"तुम भी कम गहरे नहीं हो।"

"चलो तो तुम्हें अफ़ीम और गांजा रखने की जगह भी दिखा दूँ।" यह कहते हुए खचेड़ा ने सड़क की तरफ़ मुँह किया। सी०आई०डी० ने रिक्शा किया और वे उस घेर पर पहुँच गये और उसकी दीवार के पीछे ईख में छुप कर बैठ गये। "देखो यहाँ रोज़ एक फ़ियेट कार आती है शाम के छः बजे के बाद। डालडा घी की पिपियों में अफ़ीम और गाँजा भर कर इसी राख में कहीं न कहीं छुपा जाते हैं, निकाल कर कब ले जाते हैं? पता नहीं" खचेड़ा ने कहा। दोनों फिर कुछ क्षणों को चुप हो गये जैसे बरस कर बादल शांत हो जाता है। हवा सनसनाने लगी थी और कोई कोई बूँद भी गिर जाती थी. तभी एक कार के आने की आवाज़ आई। "कार आ गई" खचेड़ा बोला।

'तुम्हें इतनी पहचान है उस कार की।"

"जी हाँ, मैंने उस कार को कई बार यहाँ आते जाते देखा है। मुझे इसके हारन तक की पहचान है। देखो धीमी पड़ गई, रुक गई। किवाड़ खुले, कोई निकला, अब डिक्की खुली।" सी० आई० डी० ने दीवार के पीछे से झाँका। एक व्यक्ति डिक्की से चार डालडे की चार चार किलो वाली पिपियाँ निकाल कर इधर को आ रहा था। खचेड़ा की सभी बातें सही मालूम दे रही थीं।"

एक आदमी खड़ा खड़ा बाहर देखता रहा जैसे किसी किसान के खेत में से कोई गन्ना तोड़ने से पहले मेंड पर इधर उधर देखता है। अन्दर आये हुये व्यक्ति ने पिपियें दबाने के लिए जगह ढूँढनी शुरू कर दी। जब उसे मुनासिब जगह ढूँढने में कुछ देर लगी तो बाहर वाला व्यक्ति बोला —

"अरे कहीं भी दबा दे, यहाँ बारिश में कौन देख रहा है?" यह सुन कर भी अन्दर वाले व्यक्ति ने कोई जवाब नहीं दिया और चुपचाप अपना काम करता रहा। चारों पिपियों को राख में दबा दिया और हाथ झाड़ता हुआ कार की तरफ़ भागा ताकि भीगने से बच सके। कार चली गई। "तुम्हारी बात ठीक थी। जिस काम में मैं

महीनों से लगा पड़ा हूँ और कुछ भी नहीं कर पाया, तुमने उसे घन्टे भर में पूरा कर दिया। तुम तो मेरे लिये बड़े काम के आदमी निकले। यह लो, मेरे पास केवल बीस रुपये का नोट पड़ा है। मैं बतौर इनाम के देना चाहता हूँ, क्या तुम मेरी यह छोटी सी भेंट मन्जूर करोगे ? हालांकि इतने बड़े काम और इतनी कीमती मदद के लिये यह कुछ भी नहीं है।"

इनाम छोटे से छोटा भी बेशक़ीमती होता है क्यों कि उसमें सम्मानित करने का भाव छुपा रहता है और सम्मान की कोई क़ीमत नहीं होती है। मगर मेरे लिये सम्मान भूख से हल्का हो गया है। मैं पेट भर रोटी मिलने को सब कुछ समझता हूँ। सो तुम मेरा पेट भरके पहले ही दे चुके हो। मैं तो लँगड़ा लूला इस दुनिया का बेकार आदमी हूँ, आप के कुछ काम आ गया, मेरी बड़ी खुशनसीबी। एक बात बताओ साहब ?"

"पूछो।"

"क्या सरकार देश से भ्रष्टाचार मिटाने में सफल हो सकेगी ?"

"सरकार जो चाहे कर सकती है। उसे कोई भी काम मुश्किल नही है।"

"मैं इससे सहमत नहीं हूँ। जिन हाथों में सरकार है यदि उन्हीं हाथों में रही तो यहाँ का भ्रष्टाचार समाप्त ही नहीं हो सकता। कल की बात है कुछ लोगों ने सीमेंट और खाद के जमाखोरों के घर माल छुपे होने की ख़बर एस० डी० एम० को दी। ए० डी० एम० के चलने से पहले ही वहाँ का चपरासी उन लोगों को आगाह कर गया और उन्होंने माल स्थानान्तरित कर दिया। एस० डी० एम० मुँह लटकाये हुये निराश लौट गये।"

"उनके चपरासी ने उन लोगों को आगाह क्यों कर दिया ?"

"क्यों कि सब दुकानदार मिल कर हर महीने उसके घर कुछ रकम पहुँचा आते हैं, जिसके उपलक्ष में वह इनको छापे पड़ने से पूर्व ही सूचित करता रहता है। जब तक चरित्र का उत्थान नहीं होगा भ्रष्टाचार को समाप्त करना आसान नहीं है। सरकार जनता के सहयोग से चलती है, जनता भ्रष्ट होती जा रही है।"

"खचेड़ा तुम्हारी बातें सारयुक्त हैं। लेकिन एक एक का सुधार होता है। एक साथ सब का नहीं। हमें अपने कर्तव्य में निष्ठा दिखानी है, दूसरे क्या करते हैं इस पर ध्यान नहीं देना है। देखो, थोड़ी देर तुम यहीं बैठो। मैं अभी आता हूं। गोद में उठा कर, बाहर लाकर, सड़क के किनारे खड़े विशाल पीपल के पेड़ की जड़ों पर बिठाते हुए सी० आई० डी० ने कहा और स्वयं थाने को चला गया। वहाँ से कई सिपाहियों सहित दरोग़ा जी को एक जीप में लेकर इधर आया। जीप विशाल पेड़ के नीचे पल

भर को उड़न तश्तरी की भांति रुकी, सी० आई० डी० ने बाहर झांका और कहा– "पांच मिनट यहीं ठहरो मैं अभी आता हूँ और एक सिपाही भी यहीं छोड़ता हूँ फिर तुम को कहीं अच्छी जगह पहुंचा दूँगा" कहते हुये जीप फुर्र से उड़ गई।

"मुझे अच्छी जगह तो मौत ही पहुचा सकती है बाबू जी" सी० आई० डी० की बात का जवाब देते हुये खचेड़ा ने कहा। वह उसकी बात पर मुस्कुराता हुआ आगे बढ़ गया। सेठ गोपीचन्द के द्वार पर हार्न बजा, लोग चौंके। चौकीदार बाहर आया–'क्या बात है साहब ?"

"सेठ जी से मिलना है। कहना दरोग़ा जी मिलने आये हैं।" यह सुन कर वह अन्दर गया। इसी बीच वह सी० आई० डी० से बोले "वह अपाहज कौन था ?"

"वह मेरा सहायक है। कभी कभी फुट पाथ पर चलने वाले लोग भी बड़े काम के साबित होते हैं।" इसके बाद ही सेठ जी बाहर आये।

"आइये दरोग़ा जी बाहर क्यों खड़े हैं ?"

"आ गया, चलिये।" पीछे हथकड़ी छुपाये हुये कमरे में दाखिल हुये। "अरे रूपा", दरोग़ा जी को नाश्ता कराने के लिये नौकर को आवाज़ दी। दरोग़ा जी भाव को भांप गये और रूपा के आने से पहले ही बोले "सेठ जी किसी को बुलाने की जरूरत नहीं है। देखो यह हथकड़ी है और वह जीप खड़ी है और उसमें वह सी० आई० डी० बैठा है जिसने आपको काला धन्धा करने वाला सिद्ध किया है, चलिये।"

"क्या कहते हो साहब ?"

"यह कहते हैं कि आप अपने घेर पर राख के ढेर में बस्ती से बाहर अफ़ीम और गांजा दबाते हैं।"

"क्या वहाँ से कुछ मिला भी है ?"
"जी हाँ मिला है।" दरोग़ा जी ने कहा।

"जंगल की जगह है साहब। कोई पकड़वाने के खयाल से वहाँ कुछ छुपा गया होगा।"

"सेठ जी आप परेशान क्यों होते हैं ? यह फ़ैसला हमारे हाथ में है। हम कभी ग़लत क़दम नहीं उठाते हैं। हम आपका पूरा पूरा ख़याल रखेंगे लेकिन इस वक्त आप को हमारे साथ चलना होगा" सी० आई० डी० वाले ने कहा। सेठ जी ऐसे निस्तेज और सुस्त हो गये जैसे किसी के लव लैटर का भेद खुल जाता है। सेठ जी ने एक तरफ़ लेजा कर दरोग़ा जी से कुछ कहा, दरोग़ा जी ने सी० आई० डी० को एक तरफ़

लेजा कर सेठ जी की बात बताई "सेठ जी बीस हज़ार रुपये दे रहे हैं, आधे आपको आधे मुझे । कहते हैं जो भी हो सो हो, केस यहीं ख़त्म कर दिया जाये ।"

सी० आई० डी० ने सेठ जी की बात सुन कर दरोग़ा जी से कहा "नोटों की चमक में अन्धे मत हो । कर्तव्यपरायणता का भी कुछ ध्यान रखना चाहिए, आप पुलिस इन्स्पेक्टर हैं । खुद ग़लत काम कर रहे हैं और मुझे भी ग़लत काम करने की प्रेरणा दे रहे हैं ।"

"आप और हम दोनों ही सरकारी मुलाज़िम है । मुलाज़िमत से भी कहीं ज़्यादा मूल्यवान अपनी इज़्ज़त और अपनी जान होती है । यह बड़े दुष्ट लोग हैं, अगर इन का कहना नहीं माना गया तो यह जान भी ले सकते हैं ।"

"तुम्हारा यह मतलब है कि मैं इस रिश्वत और जान के लोभ में कानुन और कर्तव्य का गला घोंट दूं । चलो जल्दी, गिरफ्तार करो । यह समाज की नज़र में बड़ा आदमी हो सकता है, इज़्ज़तदार हो सकता है । हमारी नज़र में एक स्मगलर है, मुजरिम और बड़प्पन दौलत की तराज़ू में नही तोले जाते दरोगा जी । कोई और चाल चली जा सकती है । हमारा यहाँ पर ज़्यादा देर ठहरना खतरे से खाली नहीं है ।" सी० आई० डी० ने कहा । दरोग़ा जी इसके आगे कुछ न कह सके, और मुक्तिवाहिनी के सामने पाकिस्तानी सैनिकों की भाँति समर्पण कर बैठे । सी० आई० डी० के संकेत पर सिपाहियों ने सेठ जी को कस के पकड़ लिया और हथकड़ी डाल कर कार में बिठा लिया । सेठ जी कह रहे थे "किसी इज़्ज़तदार के साथ आपका यह बरताव नहीं करना चाहिए । आपके हाथ में कानून की ताकत है तो आप नादिरशाह थोड़े ही हो गये है ?"

'आप ठीक कहते हैं । न हम नादिरशाह हैं और न हम इज़्ज़तदार के साथ बेइज़्ज़ती का बरताव करते हैं । मगर आप अपने को इज़्ज़तदार समझते हैं, स्मगलर और देश का शत्रु क्यों नहीं समझते ।" सी०आई०डी० की बात खत्म होते ही एक फ़ायर की आवाज़ आई । सब चौंक गये । जीप स्टार्ट हो गई और घेर पर पहुँची । घबराया हुआ सिपाही इधर आकर बोला—

"मैं तो बाल बाल बच गया साहब ।"

"क्या हुआ ?"

"एक मोटर साइकिल पर दो आदमी आये और पल भर पीपल के पेड़ के नीचे ठहरे और उस अपाहज को गोली मार दी और बोले "हरामज़ादे तूने ही हमारा भेद खोला है । अब गवाही न दे सके इसलिये यह कदम उठाना पड़ा । ले अब तेरा खिचड़ना

भी बन्द हो गया।" इसके बाद वह घेर की तरफ़ बढ़े। मैं फ़ायर होते ही चौंक गया था और सचेत हो गया था। ज्यों ही उन्होंने अन्दर क़दम रखा मैंने कड़क कर कहा "भाग जाओ यहां से वरना भून दूँगा। मैं अकेला नहीं हूँ कई एक हैं।" यहां वह पीछे तो हट गये मगर एक ने कहा "चाहें बीस सिपाही हों हमारा मुक़ाबिला नहीं कर सकते हम दो ही सब को मार सकते हैं क्यों कि हमें फ़ाइरिंग का आर्डर देने वाला हमारा मन हमारे साथ है और यह बीस भी हमें नहीं मार सकते क्यों कि इन को गोली दाग़ने का आदेश देने वाला कहीं दूर बैठा हुआ है। इन लोगों के हथियार तो सिर्फ़ भय दिखाने के लिए होते हैं। देखा ना मुरादाबाद में क्या हुआ ?" हैन्डिल पकड़े हुये युवक ने कहा।

"अबे चल, गोली न भी चलाई तो डण्डे भी नहीं चलायेंगे क्या ? तुझे पता नहीं यह पुलिस वाले बड़े ज़ालिम होते हैं। बागपत में टैक्सी में बैठी बेचारी दुल्हन माया त्यागी से पुलिस इन्स्पेक्टर ने छेड़खानी की और जब उसके पति को बुरा लगा, कुछ कहन सुनन हो गई तो पुलिसमैन बुला के उसके पति और उसके दोनों साथियों को वहीं गोली से मार दिया और बेचारी माया त्यागी की पिटाई ही नहीं की सारे कपड़े नोच डाले और थाने तक मादरजाद नंगी करके बेइज़्ज़ती करते हुये ले गये थे। केस क्या दर्ज किया गया कि यह लोग किसी ट्रक या बैंक लूटने का षड्यन्त्र बना रहे थे" पीछे वाला बोला।

'चलो भाई मुझे तो यहाँ डर लग रहा है" दूसरे साथी ने कहा और मोटर साइकिल धुकधुकाती हूई भाग गई। इस तरह मेरी जान तो बच गई वरना मैं मारा जाता।"

'भगवान की माया है। हम किसी का बुरा थोड़े ही कर रहे हैं जो हमारा भी बुरा होता। चलो पिपियें निकालो" सी० आई० डी० ने कहा। सारे सिपाही राइफलों की नाल में लगी संगीनों की नोक से राख के ढेर में से कुरेद–कुरेद कर पिपियें निकालते रहे और जीप में डालते रहे। दरोगा जी खड़े खड़े काँप रहे थे जैसे किसी साझीदार के खेत में आग लग जाये।

सात पिपियें अफ़ीम (लगभग अट्ठाइस किलो) और नौ पिपियें गांजा (लगभग छत्तीस किलो) बरामद हुआ। सब थाने सकुशल पहुंच गये। सी० आई० डी० को कमरे में आराम करने को भेज दिया और सेठ जी को हवालात में बन्द कर दिया। कुछ देर बाद दरोग़ा जी सेठ जी के पास गये।

"अब मैं क्या कर सकता हूँ सेठ जी, यह सी० आई० डी० तो किसी तरह मानता ही नहीं।"

"तुम चाहो तो सब कुछ हो सकता है ।"

"क्या हो सकता है वही तो पूछना चाहता हूँ ?"

'पुलिस के आदमी होकर मुझ से पूछ रहे हो ? बीस हज़ार के नोट अपनी जेब में रखो और तलवार उसकी गर्दन पर । साला बदनसींब है दस हज़ार भी गये और जान भी गई । आप भाग्यवान हैं दस की जगह बीस मिल रहे हैं । रोज़ कितने ही क़त्ल होते हैं एक यह भी सही । रातों रात जीप में रख कर लाश को कहीं दूर फिकवा दो । ठीक है ना ? और नहीं करते हो तो हो जाओ तैयार । सी० आई० डी० का तो पता नहीं कहाँ जाये, आप को मेरे साथी ज़िन्दा नहीं छोड़ेंगे और आप मुझे जानसे मार नहीं सकते चालान कर देंगे । रुपये की वह ताकत है कि हर दरवाज़ा खुल जाता है ।" सेट जी ने मुस्तैदी से कहा ।

"अच्छा मैं इस पर विचार करूँगा" दरोगा जी कह कर लौटे और सी० आई० डी० के कमरे के सामने चहल कदमी करने लगे । मन ही मन प्लान भी बना रहे थे । 'रात के दस बजे और मेरे ही कमरे के सामने बराबर टहलना' सी० आई० डी० ने सोचा । उसे शक हो गया और वह अपनी अटेची लेकर उठा और शहर में एक धर्मशाला में जा सोया । उसे बाहर जाने से दरोगा जी न रोक सके न टोक सके क्यों कि उन्होंने सोचा कि किसी जरूरत से जा रहा है, आ जायेगा ।

◆

"पाप का परिणाम"

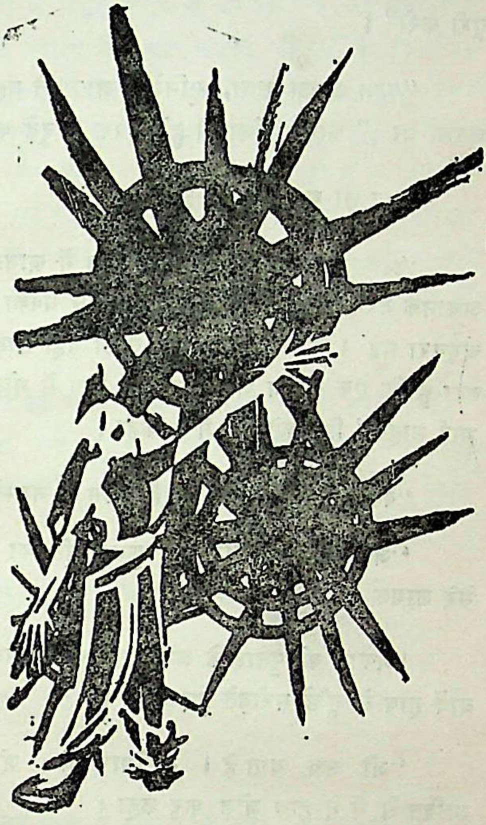

"क्या तुम कुन्दन हो ?" सामने की सीट पर बैठे हुये बूढ़े व्यक्ति ने पूछा ।

"जी नहीं । मेरा नाम कुन्दन है" नाम पर ज़ोर देते हुये कुन्दन ने उत्तर दिया । "हो सकता है अब से दस ग्यारह साल पहले कुन्दन रहा हूं ।"

"तब क्या बात थी ?" बूढ़े व्यक्ति ने उस की तरफ़ झुकते हुए पूछा ।

"हा...हा...हा यही मालूम करना चाहते हो तो मेरे पास आकर बैठो । दूर से सुनाने की बात नहीं है । चलती हुई रेल गाड़ी में बहुत जोर से बोलना पड़ेगा" यह सुनते ही बूढ़ा पास आकर बैठा गया "आपने इस बदहवासी के आलम में मुझे पहिचाना बहुत" युवक ने बूढ़े के कन्धे पर हाथ रखते हुये कहा ।

"हाँ बेटा, बूढ़ी आँखें कभी कभी काम कर भी जाती हैं । आखिर तू मेरा गोद खिलाया है । मेरे पड़ोसी का लड़का है ।"

"अब आप कहाँ से आ रहे हैं ।"

"चन्डीगढ़ से ।"

"वहाँ क्या करते हैं ?"

"लड़के ने मोटर पार्ट्स की दुक़ान कर ली है। बारह साल से वहीं रहना हो रहा है।"

"क्या हरिखेड़ा आज ही लौटना हुआ है" कुन्दन ने विस्मय से पूछा।

"ऐसा ही है" सन्तुष्टि से उत्तर देते हुये बूढ़ा फिर बोला 'तुम अपनी बात पूरी करो"।

"बहुत अच्छा बाबा, सुनिये। आप को यह तो पता है ही कि मैं मकान पोता करता था।" कालर संभालते हुये युवक ने बूढ़े को आकृष्ट किया।

"यह तो मुझे मालूम है बेटा।"

"अच्छा जी तो सुनिये। एक दिन मैं खाना खाने के बाद हाथ मुँह धो रहा था। अचानक दरवाजे की किवाड़ों पर किसी ने धक्का मारा। ढीले कब्जे और घिसी चूलें चरचरा गईं। मैं चौंक गया और लोटा वहीं छोड़कर उधर लपका, पट खोले तो देखता क्या हूँ कि एक लहीम शहीम आदमी हाथ में मोटा सा डण्डा लिये खड़ा है। "नमस्ते भाई साहब" झिझकते हुये मैं ने कहा।

"क्या यह कुन्दन का घर है" उस ने नमस्ते लिये बिना ही प्रश्न किया।

"जी हाँ सर-कार-यह कुन्दन ही का घर है। मैं ही हूँ कुन्दन, क्या सेवा है मेरे लायक ?"

"मकान की पुताई के अलावा आप के लायक़ और सेवा ही क्या हो सकती है" बायें हाथ से मूँछें मरोड़ते हुए बोला।

"जी सच बात है। मैं तैयार हूं। जो हुक्म हो।" बाबा उस राक्षस तुल्य व्यक्ति से मैं ने हाथ जोड़ कर कहा।

"लो सिग्रेट पीलो" बूढ़े ने डिब्बी आगे बढ़ाते हुये शिष्टाचार दिखाया।

"मैंने धूम्रपान बिलकुल त्याग दिया है बाबा, आप पियें।

"तब तो तुमने बहुत अच्छा किया। मुझ से तो छूटती नहीं"।

'बुढ़ापे में छोड़ कर भी क्या करोगे ? तो बाबा वह बोला कि कल आऊंगा। घर दिखा कर ही बात ठीक रहेगी। तुम्हारे घर का पता तो चल ही गया।" इस तरह कह कर उसने मेरी तरफ़ से पीठ फेरी और अपना रास्ता पकड़ा और आगे बढ़ता

चला गया। अब वह मेन रोड पर पहुँच गया था जहां म्यूनिसिपेलिटी की बत्ती लगी हुई थी। मैं अभी तक खड़ा खड़ा उस को देख रहा था। धुंधलके में गश्ती सिपाही आते दिखाई दिये। वह युवक नाली की आड़ लेकर बैठ गया।

"इस का घर भी पोतना पड़ेगा और जो देगा वह लेना भी पड़ेगा ऐसे आदमी क्रूर होते हैं' इस तरह सोचता विचारता रहा। कई मिनट हो गये थे मगर बाबा वह अभी तक ऊपर नहीं उठा था। मेरे मन में फिर संशय ने घर किया। 'वह मुसलमान तो नहीं जो पेशाब करने में इतना समय लगाता है। चोर चकोर भी नहीं है जो पुलिस के भय से छुपा बैठा है क्यों कि घर पुतवाने की बात करने आया था। मगर फिर दिमाग़ में बात आई कि घर तो शाह और चोर दोनों ही पुतवाते हैं। वह अभी तक बैठा था। उस की भयानक आकृति मेरे सामने अभी तक घूम रही थी। अब यह निश्चय करने में मुझे देर न लगी कि वह चोर था। कई बातें दिमाग़ में आती रहीं और निकलती रहीं। मैं पट बन्द कर के चला आया। रात में जब भी आँख खुली उस की डरावनी सूरत अवश्य दिखाई देती। दिन निकला तो वह युवक सच मुच ही आ धमका।

पुताई करना मेरा काम था। उसके साथ चलने में संकोच तो था ही नहीं। मगर अन्तरात्मा कुछ अजीब सा महसूस कर रही थी। "बाबा सुन रहे हो या कहीं और पहुंच गये हो?" उसने बाबा को हिलाते हुये कहा "कुछ लोगों को चलती गाड़ी में नींद आ जाती है।"

"नहीं नहीं बेटा में सब कुछ सुन रहा हूँ। भला नींद आ सकती है। तुम कहे जाओ" बाबा ने आंखें खोलते हुये कहा।

"वह मुझे यहाँ से बदायूँ ले गया।"

"वह यहाँ से कितनी दूर है?"

"बदायूँ से दो मील उत्तर में शुगर मिल से दक्षिण में जहां रेलवे लाइन पक्की सड़क को क्रास करती है। ठीक उसी मोड़ पर हरिखेड़ा बसा हुआ है" कुन्दन ने उस को समझाया। बाबा फिर झूमने लगे कुन्दन ने फिर टोका "बाबा आलस आ रहा है?"

"नहीं बेटा" बाबा ने सुसती उतारते हुए कहा जैसे राम चर्चा सुनते समय लोग जबरदस्ती जागने की कोशिश में मुंह पर हाथ फेरते रहते हैं और जँभाई लेते रहते हैं।

"क्या हरिखेड़ा के पूरब में पक्की सड़क भी बन गई है?" बाबा ने अचम्भे से पूछा।

"हाँ बाबा शुगर मिल तक जाने वाला रास्ता पक्का हो गया है। हमारी सरकार ने रास्तों और पुलों पर बड़ा ध्यान दिया है, गांव को गांव से मिलाने की योजना चल रही है। हाँ, तो वह मुझे बदायूँ ले गया।

एक विशाल भवन में प्रवेश करते ही मैं समझ गया कि यह कोई बड़ा आदमी है। ख़ूब मजदूरी मिलेगी। बड़ा काम होगा सारे बच्चों को काम पर लगा दूँगा। कई द्वार पार करके एक हाल में प्रवेश किया। चारों तरफ़ कमरे बने हुये थे मगर चहल पहल न थी।

"यहीं बैंठ जा" युवक आंखें तरेरते हुंए मुझसे बोला। यह व्यवहार देखते ही मेरी पहली विचार धारा गन्जे की चांद की तरह साफ़ हो गई। अब मैं सोचने लगा कि अवश्य किसी विपदा में जा फँसा हूँ। नहीं तो पोतने वाले की लोग खातिर करते हैं कि काम बढ़िया करे। मुझसे मेरे जीवन में इस प्रकार का व्यवहार किसी ने पहली बार किया था। "चेलो चलो" उसकी आवाज़ गरजी जैसे खाली कमरों में आवाज़ गूँजती है। उसने ताली बजाई और पांच छः हट्टे कट्टे आदमी मेरे चारों तरफ़ आकर खड़े हो गये। मैंने चारों तरफ़ देखा, सभी भयंकर आकृति के थे। सब के हाथों में देसी तमन्चे थे। अब मेरे शरीर से पसीना छूटने लगा था। पुताई का कोई ज़िक्र ही नहीं था। मैंने बड़ी हिम्मत से कहा "क्यों साहब मुझे इस प्रकार क्यों घेरे हुये हो ? मैं तो गरीब आदमी हूँ। पुताई करता हूँ। जितना चाहो काम ले लो, पैसा एक मत देना। परन्तु यह सब कुछ क्यों है ?"

"इस सब कुछ का अभी पता चल जायेगा" चाकू निकालते हुये उस दानव ने कहा। उसने चाकू का फल मेरी तरफ़ बढ़ाया, इतना बढ़ाया कि उसकी नोक मेरे गले की खाल पर छू गई। उस वक़्त की परेशानी क्या थी बस बता नहीं सकता बाबा! मृत्यु साक्षात दिखाई दे रही थी। मेरी आंखें उबल पड़ी थीं। हर चीज़ हिलती मालूम दे रही थी "अभी तुमने ज्ञान सहाय का मकान पोता है" उसने दांतों को किटकिटाते हुए सवाल किया। मैं बोल तो न सका, मुझे ऐसा मालूम हो रहा था कि बोलने से भी खाल हिल जायेगी और चाकू अन्दर घुस जायेगा। इस लिये आँखें टिमटिमा कर ही इक़रार किया। इस पर वह खिलखिलाकर हँसा और चाकू हटा लिया।

"तुम को मालूम होगा कहाँ कहाँ क्या क्या है ?" उसने कुछ पीछे हट कर सवाल किया। मैंने हाथों का पसीना पोंछा जैसे बकरी भेड़िये से कुछ दूर होकर राहत की साँस लेती है।

"जी हां" मैंने कहा।

"तो आज रात को तुम हमारे साथ चलोगे। हमें उसके घर डकैती डालनी है। तुम जानते हो उस मर्दूद पटवारी को जिसने क़लम चला कर ग़रीबों की सात सौ बीघे झील की जमीन हथियाली है। दुनिया का ज़ेवर उसके घर गिरवी रखा रहता है" उसने कहा। अभी तक उसने चाकू ऐसे कस के पकड़ रखा था कि जैसे सपेरा सांप के फन को।

'बड़ा भयंकर सीन होगा कुन्दन ?"

"हाँ बाबा स्वयं ही अनुमान लगा लो।" उसने फिर कहा "चलेगा हमारे साथ ?"

"अवश्य चलूँगा" प्राणों के मोहवश कहा "परन्तु मैंने आज तक डकैती तो कहीं डाली नहीं है। वहाँ चल कर मुझे क्या करना होगा, कुछ यहीं समझा सिखा दो" मैंने उनसे सौहार्द्र दर्शाते हुये कहा।

'हमें तुझ से कुछ भी काम नहीं लेना है। केवल यह बताते रहना कि किस कमरे में किस क़िस्म का सामान है। बतायेगा सच सच या नहीं" वह कड़क कर बोला और चाकू गर्दन पर पीछे से टेक दिया पहले आगे से रखा था। वह घड़ी याद आती है तो बाबा ऐसा लगता है मानो अब भी चाकू गर्दन पर रखा है। "मैं अवश्य चलूँगा और सच सच बताऊँगा" उन लोगों से कहा 'कब आ जाऊँ ?" ज्यों ही मैंने पूछा, वह नर्मी से बोला "तुझे जाने ही कब दिया जायेगा। बकरे यह चाल किसी और को बताना। आज शाम को तो चलना ही है। देखता नहीं यह तेरे दामाद इकट्ठे किस लिये हो रहे हैं" यह भाषा थी बाबा उस पिशाच की, मगर मैंने सब कुछ सह लिया। वह फिर बोला "रमजानी"ऽऽ। "हां सरकार" अन्दर से आवाज़ आई

"इसे कमरे में ले जाओ और खाना खिलाओ" उसने हुक्म दिया मगर यहां तो भूख ही ग़ायब थी। मैंने उससे कहा—

"नहीं नहीं साहब मुझे भूख नहीं है।"

"अरे जो कुछ भी खाया जाये वह खाले। डरता क्यों है तुझसे खाने के पैसे नहीं लिये जायेंगे। तू तो ग़रीब आदमी है हम ग़रीबों को नहीं सताते हैं। किसी तरह का भय मत कर" उस दानव की बातों से कुछ शांति मिली। बाबा खाना भी खाया मगर क्या बताऊँ ऐसा खाना खाया कि ऐसा जीवन में कभी नहीं खाया। उस रोज़ मुझे पता चला कि बदमाश लोग भी अच्छा खाना खाते हैं।

"मुफ्त का भोजन भी अच्छा न खायेंगे" स्वामीं जी ने कहा।

"फिर क्या हुआ ?" पास बैठे अजनबी ने पूछा। मैंने उसकी तरफ़ देखा और कहा "क्या तुम को कहीं पास ही उतरना है ?"

"जी हां मन्ज़िल पास ही आ चुकी है। इसी लिये तो शीघ्रता से सुनना चाहता हूं। तुम्हारी दास्तान तो बड़ी रोचक है।"

"दास्तान या हक़ीक़त ?"

"जी हां हक़ीक़त"

"सुनिये। तो फिर बाबा मैंने वहीं शाम तक का समय जैसे तैसे बिताया। शाम को सब लोग मुझे लेकर चल दिये। हरिखेड़ा आ गया। सांप हर जगह टेढ़ा चलता है मगर बिल पर सीधा चलता है। मैं था कि बिल पर भी टेढ़ा चल रहा था। यानी अपने ही गांव में अपने ही पड़ौसी के घर डकैती में शरीक हो रहा था। आन की आन में लोग तीन मन्जिल मक़ान पर चढ़ गये।"

"कैसे चढ़ गये ?" अजनबी ने पूछा

"नीचे कुछ आदमी खड़े किये, उनके कन्धों पर कुछ चढ़े, कुछ उनके भी कन्धों पर चढ़ गये और फिर धीरे-धीरे दीवार का सहारा लेकर खड़े हो गये। इस प्रेकार दो मन्जिले की छत पकड़ ली। अब क्या था सब आसान हो गया। कुछ रास्तों में इधर उधर घूमते रहे, कुछ मकान के चारों तरफ पहरा देते रहे। ऊपर चढ़ने वालों ने अन्दर काम करना शुरू कर दिया, एक डकैत मुझे पकड़े हुये था। छत पर खड़े डकैत धायें २ कर रहे थे। सारे गांव पर हू का समा छाया हुआ था, कोई घर से बाहर भी नहीं झांक सकता था। ज्ञान सहाय तो भाग गये मगर उनकी पत्नी पकड़ ली गईं और उससे माल असबाब की पूछ ताछ करने लगे। उधर उनके दो बच्चे छः साल की लड़की और नौ दस साल का लड़का भी डकैतों के हत्थे चढ़ गये। मुझ को सारे घर में घुमा घुमा कर हालात पूछे जा रहे थे। उसी समय ज्ञान सहाय के पुत्र ने मुझ को पहचान लिया और कहने लगा "अच्छा कुन्दन तू ने अभी तो मेरे घर की पुताई की थी और आज चोरी करने आ गया "बाबा लड़के की यह आवाज मेरे कानों में तीर की तरह लगी। उसी समय एक डाकू ने कहा "काट दो इसका गला नहीं तो कल को यही तुम्हारी शामत बन जाएगा। "यह सुनते ही एक डाकू जिसने मुझे खाना खिलाया था तेज़ चाकू लेकर उधर लपका। मैं भी इधर से उधर को भागा और उससे बच्चे को क्षमा करने की विनती की। लड़का चाक़ू देख कर सहमा हुआ खड़ा था।

"क्यों साले मौत ने घेरा है ? यह पहचान गया है कल ही पुलिस वालों से सब पोल खोल देगा और तू जीवन भर जेलों में सड़ जायेगा ।" चाकू कस कर पकड़े हुये डाकू ने मुझ से कहा । मैंने जवाब में कहा—

"इसने मुझ ही को तो पहिचाना है आपको तो नहीं । फिर क्या चिन्ता है ? मेरा कुछ भी हो आप ग़म न करें । आप का कोई कुछ नहीं बिगाड़ सकता क्यों कि आप को तो यह भी नहीं जानता और मैं भी नहीं जानता ।" मेरी यह वात सुन कर उसकी समझ में सही बात आ गई और उसने चाक़ू बन्द कर लिया और जेब में रख के अपना काम करने चला गया, शायद उसके मन में पितृ भाव जाग गया था और तमन्चे की नाल मेरी तरफ़ घुमाकर दिखाते हुए मुड़ मुड़ कर कहता जा रहा था "देख इन दोनों बच्चों को यहीं पकड़े बैठे रहना । अब तेरा काम खत्म हो गया है । मैं ईश्वर जाने क्या क्या सोच रहा था । वह दोनों बच्चे मुझ से ऐसे चिपटे बैठे थे, जैसे सैलाब में बहते हुये छप्पर पर मां के पास बैठे हुए दो बच्चे हों । वे दोनों बुरी तरह भयभीत थे और कम्पित थे ।

"हाय यह मत करो" ज्ञान सहाय की बहू की चीख मेरे कानों में आई । मैं उस पर हो रहे अत्याचारों का भांति भांति से अनुमान लगा रहा था । कई बार उसकी हृदय विदारक चीखें सुनाई दीं । वालों के जलने की चिराँद भी आई, कपड़े फटने की आवाज़ भी आई, मिट्टी के तेल की दुर्गन्ध भी आई, लिहाफ़ पर डण्डे मारने की सी आवाज़ भी कई बार सुनी । उसकी चीखें सुनते २ जी दुखी हो गया । कभी बच्चे पूछ बैठते थे "हमारी मां के साथ क्या हो रहा है ?" तो मैं कह देता था कि डाकू उसके कान पकड़ कर माल पूछ रहे हैं ।

बाबा लड़का बड़ा समझदार था । उसने कई बार अपना कान अपने ही हाथों से ज़ोर से खींचा, मरोड़ा और कहा "कुन्दन ठीक कहते हो कान खींचने में बड़ी तकलीफ़ होती है ।" मैंने उस को चुप रहने के लिए अपने मुंह पर उंगली रखी, इसके वाद उन्होंने अपने दोनों कानों में उंगलियां घुसेड़ लीं और बोले बिलकुल नहीं ।

डकैतों को जितना भी माल असवाव हाथ लगा बाँध कर ले गये और मुझे दूध की मक्खी की तरह वेपरवाही से गाँव के किनारे भांति भांति के भय दिखा कर छोड़ गये ।

दिन निकला पुलिस आई । मैं घर से दूर कहीं नहीं गया । क्यों कि मुझे यह तो पता था कि मैं पहिचान लिया गया हूँ । घर से कहीं बाहर जाऊँगा भी तो कहाँ जाऊँगा ? पुलिस मेरे भाग जाने पर मेरे बच्चों को और कष्ट देती ।

दरोग़ा जी ने उस लड़के और लड़की को बड़े प्यार से पास बिठाया और पूछ ताछ करने लगे। बच्चों ने सब कुछ बता दिया और मैं पुलिस की बेड़ियों में जकड़ गया। मैंने भी सारी कहानी सच सच सुना दी। मैं जेल जाने की तैयारी में भी खुश था, क्यों कि मैंने अपनी जान पर खेल कर ज्ञान सहाय का नामों निशान मिटने से बचाया था। धन तो फिर कमा लिया जाता बच्चों को कहाँ से लाते ? दरोग़ा जी ने मेरी यथार्थता पर विश्वास कर लिया और उन्होंने डकैतों की वावत पूछ ताछ करने के लिए मेरी पिटाई नहीं की मगर ज्ञान सहाय मुझ पर खार खाये बैठे थे। वह वोले—

''तूने मेरे घर पर डकैती डलवाई है और उलटा मुझ पर एहसान दिखा रहा है कि तुम्हारे बच्चों की जानें बचाई हैं।'' वावा मैं तो यह समझ रहा था कि जब सब के सामने मेरी वात खुलेगी तो सराहना की जायेगी लेकिन उलटी ताड़ना दी गई और मेरा वह वलिदान यह रंग लाया कि दस साल में आज अपने घर जा रहा हूं। न जाने वच्चों ने किस प्रकार दिन विताये होंगे ?''

''कुन्दन तुम दस साल की जेल काट कर आ रहे हो'' पीछे से किसी सुन्दर लड़के ने कहा। उसने ''हाँ'' तो कर दी लेकिन उसको देखता रहा। कुन्दन अभी पहिचान ही रहा था कि लड़का फिर वोला ''कुन्दन तुम ने मेरी और मेरी वहिन की ही तो जान बचाई थी। वहिन यह बैठी है। हम बड़े हो गए हैं इस लिये तुम पहिचान नहीं पा रहे हो।''

''ओह'' उसके मुंह से निकला और वह दोनों वच्चे उसके गले से उसी अन्दाज़ से चिपट गये। कुन्दन की आंखें अश्रुपूर्ण थीं। ''वेटा मेरे घर वाले कैसे हैं ?''
''खूब अच्छे हैं।'' लड़का बोला।

''अच्छा आमदनी का क्या ज़रिया है ?''

''घर जा कर मालूम कर लेना।''

''देखो वावा कैसे कैसे मुलाक़ातें होती हैं''—''तुम कहां से आ रहे हो वेटा ?''

''हम दिल्ली से आ रहे हैं। वहाँ हेन्वर्ड मोन्टेसरी स्कूल में पढ़ते हैं। छुट्टियाँ विताने घर आये हैं।''

''तुम्हारे पिता जी अव क्या करते हैं ?''

''वही पटवारीगीरी'' लड़के के मुंह से यह सुनकर कुन्दन कुछ सोचने लगा।

''क्यों चुप क्यों हो गये ? क्या यह अच्छा काम नहीं है ?''

"मैं अच्छाई बुराई नहीं सोच रहा हूँ बेटा, यह सोच रहा था कि हल चलाने वाले से क़लम चलाने वाला अधिक सुखी रहता है।" यह सुन कर लड़का चुप हो गया जैसे वह इस विचार की तह तक पहुँच रहा था। गाड़ी धीमी हो गई थी। लोगों ने झाँक झाँक कर बाहर देखा। एक छोटा सा स्टेशन था, कुछ लोग चढ़ें कुछ उतरे परन्तु दुनिया की तरह भीड़ कम नहीं हुई उसी समय एक भिखारी भीख मांगता इधर आया।

"आगे जाओ" देव ने नफ़रत से कहा।

"इतनी नफ़रत मत करो बेटा यह भी —एक"

"कहते कहते चुप क्यों हो गये कुन्दन ?" देव ने कहा

"यही कि यह भी एक ग़रीब आदमी है बल्कि बदनसीब आदमी है।" भेद छुपाते हुए कुन्दन फिर बोला "इसे खूब देख लो, पहिचान लो" देव ने नीचे से ऊपर तक ध्यान से देखा "क्या कोई खास बात है इस में" कुन्दन की तरफ़ झुक कर देव ने पूछा।

"यह घर चल कर सुनायेंगे। क्यों कुन्दन तुम्हारी पढ़ाई पर बहुत खर्चा होता होगा" बात का पहलू बदलते हुये कुन्दन ने पूछा।

"जी हां काफ़ी खर्च होता है।"

"क्या तुमने कभी अपने पिताजी से पूछा है कि वह इतना रुपया कहाँ से लाते हैं ?"

"सात सौ बीघे की आमदनी कम होती है क्या ?"

"वह ज़मीन कहां से आई कभी यह भी पूछा ?"

"यह तो नहीं पूछा।"

"आज घर जाकर यही पूछना कि उन्होंने यह ज़मीन किससे खरीदी थी और कितने में ख़रीदी थी।"

स्टेशन आ गया। सब उतरे। अपने अपने घर गये।

"अरे भई किवाड़ें खोलो" कुन्दन ने अपने द्वार पर आवाज़ लगाई।

"अम्मा पिता जी की सी आवाज़ है।"

"चुप ! अभी पिता जी कहाँ से आजायेंगे ? कल तो उनका पत्र आया था कि एक महीने बाद आयेंगे" मां ने बेटे को समझाया ।

"क्या एक महीने पहले आना बुरी बात है" । बीवी की बात सुन कर द्वार ही पर से कुन्दन ने ज़ोर से कहा । अब तो शक की गुन्जाइश ही नहीं रही । सब बाग़ बाग़ हो गये । सारे बच्चे हाथों पैरों से चिपट गये । कुन्दन की बहू खाना बनाने में लग गई । बच्चे बातें करने लगे बड़े लड़के ने कहा—

"पिता जी तुम्हारे बिना यह घर काट खाने को दौड़ता था ।"

"पिता जी तुम तो कहते थे कि भगवान सच्चे आदमी की रक्षा करता है फिर तुम्हारी रक्षा क्यों नहीं की" छोटा बोला।

"पिता जी सरकार जुर्म करने वाले व्यक्ति को जेल में डालकर उस परिवार का व्यक्ति ही नहीं छीन लेती बल्कि उसकी रोज़ी का ज़रिया भी छीन लेती है जिससे पूरे परिवार को सज़ा मिलती है। सज़ा शारीरिक हो या मानसिक मगर पारिवारिक तो न हो।" बड़े लड़के ने कहा । छोटे लड़के के सवाल का जवाब दिये बिना ही बड़े लड़के ने सवाल कर दिया। कुन्दन कुछ कहने को था कि छोटा लड़का फिर बोला—

"पिता जी आप जल्दी कैसे आ गये ?"

"अरे बेटा दस साल में आया हूँ तू जल्दी बता रहा है" प्यार से कमर पर हाथ फेरते हुए कुन्दन ने कहा ।

"यह मतलब नहीं मेरा"

"मैं समझता हूँ तेरा मतलब । सरकार ने मेरे व्यवहार से खुश होकर एक महीने की अवधि कम कर दी, मेरा पत्र नहीं मिला ?"

"कल मिला था ।"

"एक महीने पहले डाला गया ख़त और कल मिला है। डाक विभाग इतना शिथिल हो गया है । तुम काम तो ठीक ठाक कर रहे हो ?"

"कहाँ पिता जी ?"

"ओरियन्टल बैंक आफ़ कामर्स में चपरासी हो न ? दो सौ रुपये महीना पाते हो" कुन्दन ने बड़े लड़के से पूछा

"पिता जी मैं तो कहीं भी नौकर नहीं हूं, आप को यों ही लिख दिया था ताकि आप घर की चिन्ता न करें।

"तो कैसे भरण पोषण हुआ" सुस्त होते हुए कुन्दन ने कहा "महनत मजदूरी कर के ?"

"तुम इस छलिये की बातों में मत आओ मैं बताऊँगी भेद की बात।" पत्नी बोली "देव ज्ञान सहाय का लड़का है ना ! वह हमें मां बाप से छुपा कर दो सौ रुपये प्रति मास दे जाता है। इस प्रकार दिन फूटे हैं।"

"लड़का ? वह भी ज्ञान सहाय का" कुन्दन ने विस्मय से पूछा

"जी हां देव"

"कब से ?"

"सात साल हो गये इस प्रकार सहायता करते हुये। जब तक वह अबोध रहा तब तक तो कुछ नहीं दिया जब कुछ सयाना हो गया और आप की बाबत किसी ने उसे बताया तो वह दो सौ रुपये महीना देने लगा। जब आप ने उसकी जान बचाई थी तब भी वह नासमझ थोड़े ही था। एहसान मानता है, बाप की तरह थोड़े ही है।"

"हूँ" कहते हुये कुन्दन कुछ सोचने लगा और दामन में पड़ी सलवटें ठीक करने लगा। उस की गम्भीर आकृति को देख कर उसने कहा "अभी तो वह बच्चा है और मैं भी अधेड़ हूँ, क्या सोच रहे हो ?"

"पगली मैं ऐसी गन्दी बात कैसे सोच सकता हूँ ? मैं सोच रहा हूं उस भले मानस की देव-प्रवृत्ति को। बाप बेटे की आदत में कितना अन्तर है। भगवान की माया है हिरण्याकश्यप के प्रहलाद और उग्रसेन के कन्स जन्मे थे। क्या उसके पिता का हमारे प्रति अब भी वही रवैया है ?"

"वह तो हमारे नाम से भी चिढ़ता है ? हमारे नाम ज़मीन नहीं है वरना अपने नाम जिन्सवार भर कर हमें भी ज़मीन से बेदखल कर देता जैसे औरों के साथ करता आया है।"

"भगवान उसको इन अत्याचारों का फल भी देगा। बेईमानी सदा नहीं फलती है देखना, कोई किवाड़ें खटखटा रहा है।" द्वार की ओर किसी की टोह लेते हुये कुन्दन ने कहा। बड़ा लड़का उधर गया किवाड़ें खोलीं।

"अरे भैंया तुम आ गये। पिता जी भी आ गये हैं"

"मुझे मालूम है कि वह भी आ गये हैं। मैं और वह एक ही ट्रेन से तो आये हैं।"

"तुम घर बिलकुल भी नहीं ठहरे ?"

"पिता जी बदायूँ दवा लेने गये हैं। उन्हें शुगर का रोग है। घर कोई था नहीं मैंने सोचा शाम तक लौटेंगे तब तक आप ही के पास बैठ लूँ।"

"बेटा हमारे घर तुम अधिक न आया करो। तुम्हारे पिताजी की नज़रों में हम नमकहराम और ग़द्दार हैं। वह हमारी राम राम भी नहीं लेते हैं। हमारी सूरत देखते ही वह ऐसा मुँह बिगाड़ लेते हैं जैसे चर्चिल गांधी को देखकर मुँह बुसा सा कर लेते थे।"

"अब मैं सब कुछ समझता हूं अंकल। वह ग़लती पर हैं। कभी स्वयं समझ जायेंगे कि वह, जो व्यवहार आपसे कर रहे हैं ठीक नहीं है। जिस पौधे को उन्होंने लगाया था आपने उसकी परवरिश की है। जन्मदाता से जीवनदाता बड़ा होता है। इस लिए मेरी नज़र में आप की इज्ज़त भी कम नहीं है।" टाई की गांठ ठीक करते हुये देव ने कहा।

"यदि तुम्हारी हमदर्दी, इसी तरह रही, तो वह तुम पर हमारा प्रभाव मान लेंगे" कुन्दन ने कहा

"क्या मतलब ?"

"यही कि देव को भड़काया गया है। तुम जानते हो कि तुम को दिल्ली पढ़ने क्यों भेजा गया है ?" कुछ ठहर कर "इसी लिये कि तुम्हारी कच्ची बुद्धि पर तुम्हारे पिता के काले करतूत की छाप न पड़ने पाये। जब तुम परिपक्व हो जाओगे तो अपना रंग होगा अपना असर होगा। न कोई तुमसे कुछ कह सकेगा और अगर कोई कहेगा भी तो तुम पर उसका असर नहीं होगा।"

"मेरे पिता के काले करतूत क्या हैं ?"

"रेल गाड़ी में कोई भिखारी मिला था ?"

"याद है मिला था, जिसको आपने पहिचानने को कहा था।"

"बस वही आदमी, सुनो उसकी बावत। उसका नाम फगुना है। वह खटीक जाति का है। आपके पिता ने ज़मीदार से मिलकर उस पर लगान बढ़वा दिया। कुछ

दिनों तक तो वह देता रहा जब ग़रीबी ने ज़्यादा दबा लिया और अदायगी न कर सका तो रात में गाँव छोड़ कर भाग गया और दूसरे गांव में जो शुगर के पश्चिम में यहां से तीन मील दूर है, जाकर बस गया। बेचारे के पास खाने को कुछ था नहीं। बरसात के दिन थे। दो चार दिन तक तो मछलियाँ उबाल उबाल कर खाते रहे लेकिन बारिश लगातार होती रहने के कारण यह काम भी सम्भव न हो सका। पेट की आग तो बुझानी ही थी। पड़ोसी के घर से अरबी उधार ले लेकर उबाल उबाल कर खाईं। एक रात को बड़ा लड़का हैजे में मर गया।

फगुना जब कभी किसी से बात करता था इसी दर्दभरी दास्तां को लेकर बैठ जाता था। कुछ तो उस पर दयालुता बरतते थे कुछ भीख मांगने का बहाना बताकर रास्ता बता देते थे।

उसकी बदनसीबी की सीमा यहीं समाप्त नहीं हुई। बहू को सांप ने काट लिया वह घास खोदने गई थी वहाँ से लौटी ही नही। ढिंढोरा पड़ा तो जंगल में घास की ढेरी पर पड़ी मिली। मुँह में से झाग निकल रहे थे। उस बेचारे के पास क़फन तक को पैसे नहीं थे। पड़ोसियों ने चन्दा करके उसका तन ढका इसके बाद वह श्वान-जीवन बिताने लगा जो तुमने प्लेटफ़ार्म पर देखा था।

यह सुनने के बाद वह घर गया। माता पिता आ ही चुके थे। उसके सुस्त चेहरे को देख कर माँ ने पूछा—

"क्या कोई तकलीफ़ है ?"

"हां तकलीफ़ है पिता को तकलीफ़ हो और बेटा सुस्त न हो, यह कैसे हो सकता है ?"

"बात सही है बेटा लेकिन तुम्हारे पिता को ऐसा मरज नहीं है जो कोई सोचने की बात हो। मधुमेह खतरनाक नहीं होता है जो उसका इलाज न हो सके" मां ने कहा।

"यह तुम्हारा मत है या डाक्टर का ?"

"डाक्टर ही कहते हैं"

"वह कहां हैं ?"

"बस आते ही होंगे और रोज़ तो इस समय तक आ भी जाते थे आज ही देर हो गई है।"

"चलो आ जायेंगे। माता जी रोहिणी शादी योग्य होती जा रही है कुछ इस का भी ध्यान है।"

"हाँ बेटा इसका भी ध्यान है। तुम्हारे साथ कोई लड़का इस योग्य पढ़ता हो तो बताओ?"

"इसके योग्य लड़के तो बहुत पढ़ते हैं मगर माता जी उन का स्टेन्डर्ड हमारे स्टेन्डर्ड से बहुत ऊँचा है। क्या उनके लायक़ हमारे पास धन भी है?"

"बेटा अगर अच्छा लड़का हो तो हमारे पास धन की क्या कमी है?" सन्तुष्टि से माँ बोली। उसी समय किवाड़ें हिलीं उसने देव से कहा 'शायद तुम्हारे पिता जी आ गये हैं।"

देव द्वार पर गया किवाड़ें खोलीं, वाक़ई पिताजी आ गये थे। "डीयर डैडी गुड मोर्निंग"

"जीते रहो बेटा। क्या अभी आ रहे हो?"

"जी हाँ। आप अच्छे हो?"

"भगवत कृपा से मैं ठीक हूँ। बेटा बुरा न मानों तो एक बात कहूँ"

"बुरे मानने की क्या बात है। गो आन"

"बेटा आप के साथ "हैं" क्रिया आती है "हो" तुम के साथ आती है। खाना वाना खा लिया?" पत्नी की तरफ़ प्रश्नवाचक मुद्रा में पूछा।

"मैं खाना खा चुका हूं" माँ के उत्तर देने से पूर्व ही देव ने कहा "अच्छा माता जी अब बताइये आप कह रहीं थीं हमारे पास रुपये की कमी नहीं है। हमारे पास इतना रुपया कहां से आ जाता है। पिता जी के वेतन से तीन गुना तो मैं ही दिल्ली में ख़र्च कर देता हूँ। रही खेती तो उसमें इतना रुपया बच जाता है कि इतना शानदार मकान भी बन गया और घर के सारे ख़र्च भी चल जाते हैं और रोहिणीं के लिये बचा कर भी रख लिया है?"

"क्या कह रहा है देव सुन रही हो" ज्ञान सहाय ने दवाओं का थैला मेज पर रखते हुए कहा।

"जानते नहीं हो अब देव जवान हो गया है और समझदार भी। तुम से कोई पूछने वाला भी नहीं था। दो आज इसके सवालों का जवाब। पूछता है कि हमारी इतनी आमदनी कैसे होती है?"

"पगला है यह तो। भला इसे इन बातों से क्या मतलब ?"

"पिता जी मैं इस प्रश्न का उत्तर अवश्य चाहूंगा।"

"इस से तुझ को क्या मिलेगा ?"

"पिता जी मुझे यह अवश्य मालूम होना चाहिए। इस से मैं खर्चों पर नियन्त्रण रख सकूँगा। हर बेटे को अपने बाप की कमाई का अनुमान होना चाहिये कि वह किस प्रकार घर में आती है, कितनी महनत करनी पड़ती है मां बाप को ? ऐसा न होने पर औलाद रुपयों की सही क़ीमत नहीं समझ पाती और वह फ़िजूल खर्च हो जाती है। क्या पता मैं आपको इस नादानी में अधिक कमाने पर मजबूर कर रहा हूँ। इधर आप रोगी हैं।"

"बेटा सीनियर कैम्ब्रिज करने के बाद तुम को ओवरसियर बनाऊँगा। तब देखना तुम्हारे सामने नोट ही नोट बरसेंगे। तब मैं कोई भी काम करना छोड़ दूँगा। अभी एक दो साल और ऐसी बातें मत पूछो। कभी तुम को मुंह मांगे पैसे न मिले हों तब तो ऐसी बातें पूछना भी ठीक है।

"मेरे सामने कभी कोई परेशानी नहीं आई फिर भी वह बात पूँछूगा ज़रूर।"

"अच्छा बेटा तुम्हें समझाता हूँ" माथे पर हाथ फेरते हुए ज्ञान सहाय ने कहना शुरु किया। "हर महीने छः सात सो फ़र्ज़ी नामों से फ़र्दें डायरी में चढ़ा देता हूँ, आठ आने फ़ी फ़र्द सरकार से मिलता है। इस प्रकार लगभग तीन सौ साढ़े तीन सौ रुपये महीना तो यों कमा लेता हूँ। यह रकम नम्बर एक में आ जाती है। एक दो बैनामे रोज़ होते हैं,हर बैनामे पर सौ रुपये कहीं नहीं गये। यानी तीन हज़ार रुपये महीना यों कमा लेता हूँ और किसी की जिन्सवार किसी के नाम, किसी की जिन्सवान किसी के नाम भर कर किसानों में वेदखली का भय पैदा करके सौ दो सौ ऐठ लेता हूँ। इसी प्रकार अनेकों काग़ज़ी गड़बड़ियां करके हर महीने कुछ न कुछ कमाता रहता हूँ। इस प्रेकार चार पांच हजार रुपये महीना आसानी से कमा लेता हूँ। ज़मीन तो रिश्वत पर डालने के लिए पीली चादर है। जैसे साधु वेष में हर प्रकार का मनुष्य छुप जाता है इसी तरह हर प्रकार की कमाई ज़मीन की आमदनी में छुप जाती है।"

"मैं समझ गया कि आप वाक़ई हर माह अच्छी खासी रक़म पैदा करते हो। लेकिन इतनी जमीन कहाँ से आई ?

'सब बातें तुम्हें बताने कीं नहीं हैं। अभी तुम बच्चे हो।" गन्जी चांद पर हाथ फेरते हुये ज्ञान सहाय ने पत्नी से कहा "क्यों भई यह बात कैसे छिड़ी ?

"रोहिणी की शादी की बात छिड़ने से यह बात उखड़ी थी। तुम तो जानते ही हो देव अब कानूनची हो गया है।"

"कहो भई कितने दिनों की छुट्टी पर आये हो।"

"केवल दस दिन की।"

'दस दिन की ऽऽ। बहुत लम्बा अर्सा हुआ यह तो। पढ़ने वाले बच्चों को स्कूल का वातावरण और किताबों का साथ छोड़ना ही प्रलयंकर होता है। मेरी तो यह राय है कि तुम कल ही यहां से चले जाओ"पत्नी की तरफ आंख मारते हुये ज्ञान सहाय ने कहा "क्या ख़्याल है?"

"बिलकुल ठीक कहते हो" दोनों की बातें सुन कर उसने अनुमान लगा लिया कि कुन्दन ठीक कहता था। वरना कौन मां बाप ऐसे होंगे जो अपने बच्चों को छुट्टियों से पहले ही स्कूल भेज दें। इस माहौल से दूर रखने के ख़याल से ही उन्हें दिल्ली रखा गया था और इसी ख़याल से आज भेजा जा रहा था। "चुप क्यों हो देव ठीक है ना" ज्ञान बोले।

"जी हाँ बिलकुल ठीक है मैं जाने की तैयारी करता हूँ" देव ने कहा और वह सामान सँभाल सँभाल कर रखने लगा। शाम तक सामान लत्ता कपड़ा आदि बांधे। रात हुई आराम किया, दिन निकले. ज्ञान दवा लेने बदायूँ चले गये थे उनके बाद ही कुछ खरीदारी के लिये देव भी बदायूँ को जाने लगा तो माँ ने समझाया "बेटा यहीं से कुछ सामान लेना था तो अपने पिता जी से कह देते वह भी तो बदायूँ दवा लेने गये थे।"

"माता जी उनको परेशान करना ठीक नहीं। वह बीमार हैं उन से वही काम लो जो दूसरा न कर सके उन्हीं के करने का हो" पेटी कसते हुए उसने कहा। माँ मुस्कुराती रही। वह घर से निकल पड़ा मगर बदायूँ न जाकर वह कुन्दन के घर पहुंच गया। देखते ही सब सिमट सिमट कर अदब से बैठ गये। "आइये आइये" सब के मुँह से निकला।

'कुन्दन सिंह जी मैं दिल्ली जा रहा हूँ और परीक्षा देकर गर्मियों ही में आऊँगा कोई मेरे योग्य सेवा हो तो बताओ।"

"बेटा मेरे पीछे तुमने मेरे परिवार की इतनी सराहनीय सेवा की है कि मैं जीवन भर तुम्हारी सेवा करूँ तब भी उद्धार नहीं हो सकता अब और क्या सेवा करोगे तुम? हम लोगों पर कृपा दृष्टि रखो यहीं बहुत है।"

'आपने जितना एहसान हम पर किया उसके सामने मेरा करा धरा कुछ भी माने नहीं रखता कुन्दन। मैं यह सोच कर आया हूँ कि तुम्हारे छोटे लड़के को अपने स्कूल में चपरासी की जगह खाली है वहां लगवा दूं तो कैसा रहे?"

"अगर ऐसा हो जाये तो बहुत अच्छा रहे। नेकी और पूछ पूछ?"

"ठीक है मैं शिव को अपने साथ ले जाऊँगा" इतना कह कर वह चला गया।

"क्यों, गया नहीं?"

"जो यहां से खरीदारी करूंगा वह दिल्ली ही में जाकर ले लूंगा। यही सोच कर बदायूं जाने का प्रोग्राम वदल दिया।" माँ यह सुनकर सन्तुष्ट हो गई और वह चलने की तैयारी में लग गया। उसी समय नौकर ने आवाज़ दी—

"मालकिन! मालकिन!"

"क्या बात है सेजू।"

"साब आज तो गजब हो गया।"

"क्या हुआ जल्दी वोल।"

"हारियों (हल चलाने वाले) ने हरन (हलों) कौ छोड़ कै वर्दो (बैलों) वैसे ही छोड़ दियो। उन्होंने वाजरा की बालें खालईं। सारे वर्द धरती पै गिरे पड़े हैं। मैंने ढोरों के डांकदर कौ बुलायो हो सो वा ने कही कि वाज़रा में अरगन नाम को विस होय गयो है जो जानवर वच नहीं सकता"

"क्या चौदहों बैल मर जायेंगे?"

"सब ने बाजरा खायो है सभी मर जायेंगे साव।"

'नालायको तुमने जानवर वाज़रे पर छोड़ें ही क्यों थे? अभी पूरी तरह से डकैती में गये गिरवी जेवरों की पूर्ति भी न कर पाये थे कि यह नुक़सान सामने आ गया वह (ज्ञान सिंह) सुनेंगे तो बहुत दुखी होंगे।" देव की माँ ने कहा

"यह कितनी रक़म के थे।"

"लगभग दस हज़ार के थे।"

"भैंसों से यह मंहये होते हैं शायद।" देव बोला

"तो फिर तुमने भैंसे ही क्यों न खरीदे थे, बैल क्यों रखे थे। कम खर्च करके खेती करनी चाहिए।"

"वह कम कीमत में तो आते हैं मगर चलते भी धीमे हैं, काम भी कम निकालते हैं।"

"आप सात हल ही क्यों रखती हैं दो जोड़ अच्छे वाले बैल रखिये और दो कल्टीवेटर रखिये इस प्रकार चार बैल चौदह बैलों के बराबर काम करेंगे और बचत भी होगी।"

"ठीक कहते हो। इस विषय में सोचेंगे। तुम दिल्ली जाओ। यह काम हमारा है। तुम सोच विचार में मत पड़ो। यह तो काश्तकारी के बखेड़े हैं। ऐसे ही चलते रहेंगे। महनत से पढ़ना। एक ही साल रह गया है"

"जी हां माता जी अभी जाता हूं और आप निश्चिन्त रहें मैं महनत से पढ़ूंगा।" कहते हुए देव दिल्ली को चला गया।

"देव बाबू ! देव बाबू !" किसी ने चीख़ते हुये जल्दी जल्दी आवाज़।

"कौन है ? वह घर नहीं है" कहते हुये वह बाहर निकली, दरवाज़ा खोला देखा तो मटरू पड़ोसी खड़ा था। "क्या बात है ? क्यों हांप रहे हो ?"

"पटवारी जी रेल गाड़ी से उतरती बार नीचे गिर गये हैं। मैं वहीं रेड़ी खींचता रहा था। उन्होंने मुझे यहां भेजा है कि देव को बुला लाऊँ ताकि वह उन्हें संभाल कर घर ले आये।"

"वाहरी अक्लमन्दी यहां तक तुम आये हो और जाओगे। अगर तुम ही साथ ले आते तो क्या हो जाता ? लो पांच रुपये और रिक्शे में बिठा कर यहां ले आओ। देव दिल्ली गया है।"

"अभी लो माता जी उनका कहना मान कर यहां आ गया, आपका कहना मान कर वहाँ जाता हूं और उन्हें लाता हूँ।" कहता हुआ मटरू चला गया और ले आया। ज्ञान सहाय रात भर तकलीफ़ से कराहते रहे। दिन भी कराहते हुये बीता और इसी तरह पन्द्रह दिन गुज़र गये। गांव का जर्राह उनको ठीक नहीं कर सका वह हाथ को हड्डी (रेडियस अलना) की चूलें उतरी बताता रहा लेकिन था फ्रेक्चर और अन्दर ही अन्दर घाव हो गया था जो पक के सैप्टिक बन चुका था। हार कर जर्राह ने मना कर दिया और किसी बड़े डाक्टर के पास इलाज को जाने की राय दी।

ज्ञान सहाय उसी डाक्टर के पास गये जो शुगर का इलाज कर रहा था। उस डाक्टर ने सिविल अस्पताल को भेज दिया। रोहिणी और उसकी माँ तीसरे चौथे दिन उनको अस्पताल जाकर देख आया करती थीं। खेती का काम नौकरों पर आ गया था। वह अपेनी मन मानी कर रहे थे। बैलों की जगह भैंसे लिये गये और गेहूँ बोने की तैयारी होने लगी।

उधर अस्पताल में ज्ञान सहाय के हाथ की हड्डी निकाल दी गई तब कहीं उनकी जान बची मगर घाव ठीक होना बाकी था जिसका इलाज चल रहा था। मां बेटी दोनों उदास बैठी थीं क्यों कि ज्ञान सहाय की एक महीने की छुट्टी भी समाप्त हो चुकी थी और बहुत सी ज़मीन भी बिक चुकी थी। रुपया जो कुछ जोड़ा गया था कुछ डकैत ले गये थे कुछ अब तक खर्च हो गया था घर में ग़रीबी के पहरे आ गये थे। इसी बीच मटरू ने कहा—

"मालकिन गेहूँ कहां से लाकर दिया था एक दाना नहीं जमा, सब खेत बैठ गये।"

"क्या सचमुच गेहूँ नहीं उगे?"

"क्या ऐसी बातों की भी मखोल की जाती है?"

"यह तो बुरा हुआ। अब क्या होगा?"

"अब क्या होता, गेहूँ का समय तो गया आलू बोया जा सकता है" सेडू ने कहा

"आलू में गेहूं से अधिक लागत लगेगी" यह कह कर सेडू चला गया।

"फिर क्या करें हम इस साल अधिक लागत नहीं लगा सकेंगे बेटी।"

"माता जी ऐसा भी तो हो सकता है कि हम लोग तो पिता जी के इलाज में लगे रहे हों और नौकरों ने गेहूँ बोया ही न हो और मिल कर खा गये हों?"

"पगली बेईमानी इतने आदमी मिल कर थोड़े ही कर सकते हैं।"

"क्या सब नहीं मिल सकते। चोरी एक दो ही कर सकते हैं, अधिक नहीं।"

"तुमने छः हजार रुपये दिये थे भैंसे लाने को, क्या पूरे छः हज़ार के भैंसे आ गये?"

"रसीदों में पूरी रक़म है।"

"रसीदों में जो चाहो लिखवालो।"

"जो भी हो रोहिणी अब हमारी खेती मजदूरों ही की हो जायेगी क्यों कि उन की देख भाल करने वाला कोई है नहीं।"

"तुम आज्ञा दो तो मैं देख भाल कर सकती हूँ। पढ़ाई छोड़ दी है तो यही काम सही। अपने काम में कुछ बुराई तो नहीं है।" यह सुन कर माँ ने कुछ कहा तो नहीं मगर अन्दर ही अन्दर ऊँच नीच सोचती रही।

* * *

देव रेल गाड़ी में सवार दौड़ा चला जा रहा था। अब की बार उसका मस्तिष्क कुछ असह्य गमों से बोझिल था। गाड़ी रफ्तार पकड़ चुकी और हरे भरे पेड़ पौधों को धुये के काले काले दमघोट बुर्कें उढ़ाये चली जा रही थी। वह फिर भी नाच रहे थे। खुश थे। जैसे कोई बुर्का पोश दुल्हन। गाड़ी की रफ़्तार धीमी हुई। "शायद वही हाल्ट है" देव के मुंह से निकला जिस पर उसने फ़क़ीर फगुना को देखा था। ज्यों ही गाड़ी रुकी उसने खिड़की से बाहर झाँक कर देखा। शायद यात्रियों के आगे भीख मांगता आज भी मिल जाये। वह बड़ी जल्दी हर तरफ़ देख रहा था। सँयोग की बात कि वह हाथ फैलाये भीख मांगता दिखाई दे ही गया। उसने सँकेत से पास को बुलाया। उसने यहां आते ही हाथ फैला दिया "तुम मुझे जानते हो" एक रुपये का नोट उसके हाथ पर रखते हुये देव ने पूछा।

"मैं तुमको जानता हूं तुम ज्ञान सहाय के लड़के हो मगर तुम नहीं जानते होगे।"

"मैं भी तुम को जानता हूँ तुम्हारा नाम फगुना है न ?"

"ठीक है बेटा लेकिन तुमने मुझे पहिचाना कैसे ?" वह बोला

"बताऊँगा। पहले एक बात बताओ तुम ने मुझ से भीख माँगी मैंने एक रुपया दे दिया क्या मैं तुमसे भीख मांगू तो कुछ दे दोगे ?"

"बरसे हुए बादल में पानी नहीं होता बेटा वह किसी को क्या देगा फिर भी मैं तुम्हारे कुछ काम आ सकूँ तो कहो जान ही मेरे पास है सो दे सकता हूँ, बोलो।"

"मैं तुम से भीख में भीख न मांगना मांगता हूँ।"

"मैं समझा नहीं बेटा' कान डिब्बे के पास लगा कर कहा ।

"मैं तुम्हें भिखारी के रूप में देखना नहीं चाहता ।"

"मगर पेट कैसे भरूंगा ?"

"मैं भरूंगा आप का पेट । लो यह साठ रुपये । इसी तरह जब तक तुम जीवित हो हर महीने साठ रुपये देता रहूंगा । यह तुम्हारा पेट भरने को काफ़ी होंगे ।"

"छोड़ दी बेटा भीख आज से । मगर क्या अच्छा होता कि यह रुपये मेरे पास उस वक़्त होते जब...... ।" कहते कहते बूढ़ा फफक फफक कर रोने लगा । अधीर हृदय पर काबू पाकर वह फिर बोला "मेरा तुम सा लाल मौत छीन कर न ले जाती और ना ही मेरी वहू......... " वह फिर फूट फूट कर रोने लगा । तभी गाड़ी ने सीटी दे दी और वह चल दी फिर मिलूंगा, भूलूंगा नहीं । मैं तुम्हारी बाबत सब कुछ जानता हूँ" कहता हुआ देव चला गया । फगुना आँसू पोंछ कर देखता रहा जब तक उसकी बूढ़ी आंखों ने काम किया ।

"देख चरनी दुनिया में कितने कितने बदनसीब बसते हैं ।" कुन्दन के लड़के से देव ने कहा ।

"आप सही कहते हैं । लेकिन आंसू पूछने वालों की भी कमी नहीं है, चरनी ने देव को लक्ष्य करते हुए कहा । दोनों बातें करते जा रहे थे परन्तु फगुना वहीं खड़ा खड़ा रुपयों को उलट पुलट कर रहा था और सोच रहा था कि यह भी तो भीख ही है । जब यह साठ रुपये महीना देता रहेगा तो भीख मांगना छूटा कहाँ बहुतों से न ली एक से ली, बल्कि बहुतों से मांगी हुई भीख अच्छी है बनिस्बत किसी एक जेब पर बहुत सा बोझ डालने के । किसी एक का इतना बड़ा एहसान लेना सिर झुका कर जीने के समान है । यों सोच कर उस को ग्लानि हुई और तै किया कि जब भी वह मिलेगा इन रुपयों को उसे वापिस कर देगा ।

"चरनी इस पर कृपा करके मैंने कोई एहसान नहीं किया है । बल्कि यह उसकी देन का सूद भी नहीं है ।"

"ठीक कहते हो" चरनी मुस्करा के कहता रहा, उधर महतरानी देव की माँ से बोली—

"बाबू जी का क्या हाल है ?"

"बहिन तीन महीने से बीमार चल रहे हैं। अब नौकरी भी नहीं कर सकेंगे । घर पूरी तरह से बरबाद हो गया समझो जमीन विसे परमान बिक कर रहेगी, जवान लड़की शादी को बैठी है । बड़ी मुसीवत में हूं । तुम देर से क्यों आई हो सवेरी आया करो ।"

"मेरा लड़का बीमार है। वह ठीक हो जायेगा तो सब ठीक हो जायेगा ।"

"बहिन बीमारी बुरी चीज होती है। हमारे उनका तो हाथ कटने की नौबत आ रही है । आज बदायू॑ जा रही हू॑ देखो क्या होता है ?"

'ऐ है । वेचारों को बड़ा कष्ट दिया है भगवान ने। ईश्वर करे वह ठीक हो जायें ।" कमर से कस के धोती का पल्ला लपेटती हुये काम करने चली गई । दिखावे को बड़ी हमदर्दी दिखाई, मन में कहती जाती थी करनी के फल सामने आ रहे हैं ।

"माता जी आप ने वदायू॑ जाने की बात भी वता दी यह नहीं सोचा कि यह घर घर घूमने वाली स्त्री है। स्त्रियों की जीभ काग़ज़ की होती है । कहीं खोल दी और दुष्टों ने पीछे घर खखोड़ लिया तो कुछ भी न वचेगा" रोहिणी ने मां से शंका व्यक्त की ।

"अच्छी बात मुंह से नहीं निकलती । भगवान के हाथ जोड़ भगवान के । ईश्वर करे कोई मुसीबत न आये" तालियों का गुच्छा हाथ में संभालते हुए उसने कहा । सामान लिया और चल दिये ।" रास्ते में आटा दाल लेके आता कुन्दन भी मिल गया ।

"कहो कुन्दन क्या हो रहा है ?" रोहिणी ते कहा

"कुछ नहीं बेटी वही महनत, मजदूरी और क्या होता" वह ठहरते हुये बोला । रोहिणी उसको देख के मुस्कुराई, माँ ने कुहनी मारी ।

"क्यों क्या हुआ" धीरे से झुंझला के रोहिणी ने कहा ।

"होता क्या । उस दुष्ट से बात कर रही है जिससे हमारी बोल चाल भी नहीं है । यही डकैती डलवाने वाला था कमीना ।"

"माता जी तुम अभी तक इस शख्श को नहीं पहिचान सकीं कि यह तुम्हारा दोस्त है या दुश्मन । इसने हमारी जान बचाई थी ।" "ऊँह" मुंह विचूरते हुए "यह निकम्मा जान वचाता, यह भगवान की कृपा थी कि तुम्हारी जान वच गई । विना उस के हुक्म के पत्ता भी नहीं हिलता ।"

"जब उसके हुक्म के बिना पत्ता भी नहीं हिलता तो डकैती का कारण उसी को क्यों ठहरा रही हो" माँ के चुटकी लेते हुए बोली।

"तू बेकार की बातों में मेरा दिमाग मत खा। वह चुप गई। स्टेशन आ गया। गाड़ी आई और गई, अस्पताल पहुँचे।

"आप लोग यहाँ किसे ढूंढ रहे हैं ?" बरामदे में खड़ी नर्स ने पूछा।

"ज्ञान सहाय पटवारी जी को" रोहिणी की माँ ने कहा।

"अब आप उनसे शाम तक नहीं मिल सकेंगे क्यों कि उनको शाम तक होश आयेगा।"

"क्या हाथ काट दिया गया ?"

"जी"

"बिना हमारी मर्जी के यह कैसे हुआ!"

"जिस दिन हड्डी निकाली गई होगी उसी दिन डा० साहब ने अपनी बचत के लिये सब कुछ लिखवा लिया होगा। रोज़ तुमसे कितने आते हैं। सर्जन मूर्ख नहीं होता है" टका सा जवाब देकर नर्स आगे फूट ली। ये दोनों घास के मैदान में आकर शाम तक को बैठ गईं। बातें कर रहीं थीं कि एक बुढ़िया कुछ पुड़िया सी हाथ में लिये आई, फटे कपड़े थे बाल बिखरे थे। बोली—

"बहिन जी आप पढ़ी लिखी हो ज़रा हमारी दवा देख देना पर्चे से मिलती है या नहीं।" रोहिणी ने पुड़िया खोली, पर्चे से मिलाई और सुस्त हो गई। "क्यों क्या ग़लत दे दी उस मिटे ने। मार दूँ उसके माथे से जाके" बुढ़िया ने कहा।

"नहीं नहीं दवा सही है, मैं सुस्त इस बात पर हूं कि यह डिस्टिल्ड वाटर यानी इन्जेक्शन में मिलाने वाला पानी है जो पांच आने में आता है। जब अस्पताल में इतनी चीज़ भी बाज़ार से मंगाई जाती है तो मंहगी चीज़ क्या मिल सकती है ?"

"बहिन जी इन सरकारी अस्पतालों से निर्धन नहीं धनवान लाभ उठाते ।" कहते हुये वह चली गई। उसका अन्दाज़ बता रहा था कि वह जल्दी में थी। रोहिणी घास के तिनके तोड़ तोड़ कर चबाती रही और कुछ सोचती रही।

* * *

कुन्दन सामान लेकर घर पहुचा, रास्ते की सारी बातें सुनाईं तो सबको अचरज हुआ कि रोहिणी अभी तक इतनी हमदर्दी रखती है। बड़ा लड़का तो पूछ भी बैठा—

"पिता जी जिस के मां बाप हम से इतने खिंचे हुये हैं उसी वातावरण में रात दिन रहने वाली रोहिणी हम से इतनी सहानुभूति क्यों कर रखती है ?" कुछ देर ठहर कर फिर बोला "आप ने बात गिरा कर क्यों कही, यों क्यों नहीं कहा कि तहसीलदार की कोठी पोतने जा रहे हैं ?"

"बेटा रईसों के आगे बढ़ चढ़ कर बात नहीं कहनी चाहिए। यह लोग ग़रीबों की उन्नति देख कर खुश नहीं होते हैं" कुन्दन ने धीरे से समझाया और इधर उधर देखा।

"जलते को और जलाया जाये तो कैसा रहेगा ?"

"इसमें हमें लाभ की सूरत दिखाई नहीं देती।"

"क्यों ?"

"विल्ली दूध पी नहीं पाती तो वखेर देती है बेटा" कुन्दन ने कहा।

"ज़रा चुपो। कोई बाहर आवाज दे रहा है।" कुन्दन की पत्नी ने कहा। डाकिये ने खत किवाड़ों की दराज़ में अन्दर को सरका दिया। लड़का उठा लाया और पढ़ना शुरु किया। खत पढ़ के उसने कहा "डेढ़ सौ रुपये खाना और कपड़े पर चरनी नौकर लग गया। देव ने अपनी शराफत का सुबूत दे दिया।"

"बहुत अच्छा हुआ, सँभल कर रहा तो भाग चमक जायेगा। चलो अब तहसीलदार साहब के घर की पुताई करेंगे और जब तक उनका काम पूरा नहीं हो जायेगा वहीं रहेंगे। यहां आने से थकन भी होती है और काम भी कम होता है।"

"ठीक कहते हो पिता जी ऐसा ही करेंगे।"

अस्पताल में –

ज्ञान सहाय के हाथ कटने की खबर और माँ बेटी के वहाँ जाने की बात महतरानी द्वारा सारी बस्ती में रुई की आग की तरह फैल गई। दुष्टों को इस से अच्छा अवसर कौन सा मिल सकता था। रात के नौ बजे तक तो यार लोग गली कूचों में उनके आने की टोह लेते रहे जब दोनों घर नहीं लौटीं तो उन्होंने बेफ़िक्री से घर खखोड़ना शुरु कर दिया और जो कुछ हाथ लगा बाँध कर ले गये। दिन निकले जब

वह आईं तो घर पर उल्लू बोल रहा था। हर तरफ़ ख़ाली था। रोहिणी की माँ के दिमाग़ में कुन्दन फिर खटका। उसने उसी की नामज़द रिपोर्ट दर्ज करा दी। रोहिणी इसका विरोध करती रही लेकिन माँ ने एक न चलने दी। जब उसकी गिरफ्तारी का नम्बर आया तो तहसीलदार ने खुद गवाही दी कि वह डकैती की तारीख़ से पहले से उनके घर रहता है और पुताई कर रहा है। वह रात को भी वहीं सोता है फिर डकैती कैसे कर सकता है ? इस तरह कुन्दन को इस केस से मुक्ति मिल गई। वह सब काम पूरा करके घर पहुँचा तो बड़े लड़के धुनी ने बेताबी से कहा "पिता जी देव भैया का ख़त आया है" कुन्दन ने ख़त देखा तो बोले–

"पगले यह चरनी का ख़त है। अब वह ख़त लिखने लायक हिन्दी सीख गया है। तुम हर ख़त को देव ही का ख़त समझ लेते हो।"

"क्या लिखा है ?" धुनी की मां ने कहा

"उसने लिखा है कि वह ठीक ठाक है। अंग्रेज मालिक उससे अच्छा व्यवहार करता है। देव उसका वेतन बैंक में जमा कराया करेगा ताकि कभी वह रुपया उसके वक़्त पर काम आये।"

"मेरी आत्मा आज शाँत हो गई। चरनी की तरफ़ से बेफ़िक्री मिली। देखो जिसका लड़का हमारे साथ इतना दयालु है उसकी मां हमें झूट मूट डकैती में फंसवा रही थी। एक ही घर में दो तरह की बातें चल रही हैं एक ही प्राणी के प्रति।"

"चुपो रोहिणी आ रही है" कुछ देर सब ने उसकी तरफ़ चुप चाप देखा। "रोहिणी आज कैसे आना हुआ ?"

"आपको पता है कि हमारे माता पिता के विचार आप की तरफ़ से अभी तक ठीक नहीं हैं लेकिन हम दोनों बहिन भाई आप की तरफ़दारी करते हैं यह दूसरी बात है कि उन पर हमारी बातों का प्रभाव नहीं पड़ता है" कहते कहते वह कुछ रुकी।

"कोई बात नहीं कृपा तो एक की भी बहुत होती है।"

"पिता ज़ी का जीवन ख़तरे में है। वह खाट से उठ नहीं सकते। आप हमारी सारी ज़मीन बिकवा दीजिये ताकि हम रुके हुए काम पूरे कर सकें। अब माता जी के पास नक़दी नहीं रही है।" यह सुन कर कुन्दन कुछ सुस्त हो गया। रोहिणी फिर बोली "आप क्या सोच रहे हैं ?"

"बेटी में यही सोच रहा हूं कि जिस जायदाद को उन्होंने अपने हाथों पैदा किया थां उसको अपने ही हाथों बेच भी चले। बच्चों के हाथ में फिर ठीकरा दे रहे हैं। उनका हाथ कट गया है सुना है।"

"ठीक सुना है और कुछ दिन में यह भी सुनेंगे कि वह भगवान को प्यारे हो गये हैं" रोहिणी बोली।

"ऐसा क्यों कहती हो बेटी ?"

"डाक्टर का संकेत है ?"

"बेटी घबराओ मत। जो होना है होगा। मगर मुझ से जो भी सेवा लोगी मैं तैयार हूँ। देखो तुम्हारी माता रोती हुई आ रही हैं क्या बात है पूछना ?"

"वह इधर ही आ रही हैं। आने दो इधर आने पर पूँछ लें गे" अब वह पास आ चुकी थी। "माता जी क्या बात है ?"

"तेरे पिता का देहांत हो गया। चल यहाँ क्या कर रही है" ऐसे कहा जैसे उसने रोहिणी को यहाँ भेजा ही नहीं था।

"यह तो बुरा हुआ।"

"हां हुआ तो बहुत ही बुरा मगर भाग्य को क्या करें ? अब तो हमारी आबरू तुम्हारे हाथ में है कुन्दन।"

"तुम्हारी आबरू और एक डकैत के हाथ में" कुन्दन ने चुटकी ली।

"हमारी गलती थी जो एक शरीफ को शरीफ न समझ कर डकैत समझते रहे। अब आंखें खुल गई हैं और तुम्हारा सहारा चाहते हैं।"

"मैं हर सेवा को तैयार हूँ। आप मुंह से कहें।"

★

" मर्द की बात "

सड़क के किनारे किनारे एक आदमी बराबर खाँसता हुआ जा रहा था। एक रिक्शे वाला उसको झुक झुक कर खाँसते देख रहा था। रिक्शे वाले को अभी कोई सवारी नहीं मिली थी। उसी आदमी ने कुछ दूर जाकर सड़क ही पर खांस कर थूक दिया। ''कितना बदतमीज़ आदमी है। बढ़ कर नाली में भी थूक सकता था। अब जिसकी भी इस पर नज़र पड़ेगी वही चिनियायेगा। यह लोग कैसे लिखे पढ़े हैं ?'' दिल ही दिल में रिक्शे वाला सोच रहा था कि पीछे से किसी ने आवाज़ दी ''क्या सोच रहे हो भाई''। वह सुन कर चौंका, पीछे देखा और बोला—

''कुछ नहीं साहब। क्या कोई सवारी है ?''

''हाँ एक लाश को गंगा पर ले जाना है।'' जल्लाद ने कहा। रिक्शे वाला रिक्शा लेकर पीछे पीछे हो लिया और पहली घटना से प्रभावित होकर वह कहता जा रहा था—

''आदमी के अन्दर से जो भी चीज़ बाहर निकलती है वह गन्दी ही होती है, एक अल्लाह के नाम को छोड़ कर।''

''सही कहते हो।'' जल्लाद बोला। रिक्शा पोस्ट मार्टम चेम्बर के सामने जाकर रुक गई। लाश कपड़े में सिली हुई थी जैसे बाग़बान सड़े हुए कद्दू फेंकने के लिए एक तरफ़ रख देता है। दो आदमियों ने उठाकर उसे रिक्शा के पादान पर रख लिया और इधर उधर बैठ गये।

''चलो गंगा घाट।'' दोनों बोले। वह चल दिया।

"क्यों भाई साहब, इसकी एक टांग नहीं है क्या ?"

"इस की एक टाँग ही नहीं एक हाथ भी नहीं है। रेल गाड़ी से कट गये हैं।"

"आपका कौन लगता है ?"

"हमारा साला कौन लगता ? हम तो सरकारी आदमी हैं। लाश लावारिस है इस लिये सरकारी तौर पर दुनिया से विदा की जा रही है।"

"कहां से आई है ?"

"यह आदमी मुडिया भीकम के पास रेलवे लाइन पर कटा था। है कहां का, यह पता नहीं चला" एक ने कहा। इसके बाद रिक्शे वाला चुपचाप रिक्शा चलाता रहा। उसके मन में कई सवाल आये मगर उसमे मुँह नहीं खोला। गंगा घाट आ गया जहाँ की मिट्टी में अनेक माई के लाल छुपे पड़े थे। उन दोनों ने लाश उतारी और विना मांगे ही पांच का नोट उसे थमा दिया। उसने नोट हाथ में लिये लिये कुछ सोचा। उसका यह ढंग देख कर जल्लाद ने होंट विचूरते हुए पूछा —

"क्या कम हैं ?"

"नहीं सरकार, कम नहीं हैं बल्कि वहुत हैं। मैं तो यह सोच रहा था कि इसमें से आपको वापस क्या करूं।"

"जा भाग जा यह सरकार की तरफ से तै होते हैं। इनमें कम बड़ती का कोई सवाल ही नहीं होता" यह सुन कर वह खुश हो गया और नोट जेब में रखकर और रिक्शा घुमाकर नीम के पेड़ के नीचे खड़ा हो गया। यहां से और कोई सवारी तो मिलनी थी नहीं, उसने सोचा कुछ देर ठहर कर इन्हीं दोनों को ले जायेगा। शायद पांच ही फिर मिल जायें। यह सोच के रिक्शा खड़ी कर ली और धनिये की चटनी पुती ज्वार की रोटियां निकालीं और बड़े बड़े कौर खाने लगा।

"वह खाता जाता था और सोचता जाता था कि हिन्दू लोगों की लाश हो या मुसलमानों की लाश हो उसके क्रिया करम में कुछ देर तो लगती ही होगी। जिसका अन्तिम संस्कार सरकार कराती है वह जरूर कुछ ढंग से होता होगा। जब वह एक रिक्शे वाले को एक की जगह पांच देती है तो गत मुक्त में भी उदारता बरतती होगी।" वह इस प्रकार सोच रहा था कि पीछे से आवाज़ आई।

"अरे रिक्शा वाले तू गया नहीं है ? चल। अरे तू खाना खा रहा है और तेरे पास पानी भी नहीं है। यह ज्वार की रोटियां बिना पानी के कैसे निगल रहा है रे ? हमारे गले में तो गेहूं की रोटी भी अटक जाती है।"

"मजबूरियां जिस्म को अपने साँचे में ढाल लेती हैं भाई साहब" रोटियां कपड़े में लपेट कर सीट के नीचे रखते हुये उसने कहा।

"इसे भी खाले। हम रुके रहेंगे। पूरा खाना खा कर चलना चाहिये।"

"काम के वक़्त रोटी नहीं खाई जाती है।" सीट पर बैठते हुये चलने के मूड में वह बोला।

"तुम्हारा नाम क्या है ?"

"मक़बूल" गंगा घाट की तरफ़ देखते हुये उसने कहा। उसने इस लिये उधर देखा था कि आग जल रही है या नहीं। मगर वहां न आग थी न कब्र थी। आती बार इनके साथ लकड़ियां भी नहीं थीं जो चिता बना कर आग जलाते और न ही फावड़े थे जो कब्र खोदते। लाश बहुत दूर पानी में बहती जा रही थी जिस को इन्होंने पानी में फेंक दिया था। साफ़ प्रकट हो गया था इनके क्रिया करम का ढंग।

"कितने बाल बच्चे हैं" इसी बीच दूसरा सवाल कानों के पर्दे से टकराया।

"कुल नौ।"

'कोई कमाने लायक़ भी है।"

"अभी सब छोटे हैं।"

'रिक्शा अपना है या किराये का ?"

"किराये का है।"

"क्या देते हो मालिक को ?"

"रोजाना तीन" हाँपते हुये संक्षेप में कहा।

"मालिक नव्वे रुपये महीना घर बैठे ही कमा लेता है और तुम इतनी मेहनत करने के बाद भी दस पांच कमा पाते हो।"

"जब वह हजार रुपये का रिक्शा हमारे हाथ में दे देता है तो नव्वे रुपये महीना लेता है। हम लोगों पर यह भी उसका एहसान ही है। उसने हमारे बच्चों को रोज़ग़ार दिया है।"

"रिक्शे तो बैंक से भी मिलते हैं। वहां कम खर्चा होता है, किश्तों में उस रक़म की अदायगी होती है। सूद बराये नाम होता है आखिर में रिक्शा अपना हो जाता है। यहाँ तीन रुपये रोज़ देकर भी रिक्शा अपना नहीं होता।"

"बैंक से रिक्शे भी सब को और आसानी से नहीं मिल जाते। वहां ज़ामिन चाहिये और गरीब की कोई ज़मानत करने वाला नहीं मिलता। इस लिये वहां के झगड़े में कौन पड़े" लम्बी सांसे लेते हुए उसने कहा—

"भाई साहब क्या हर हिन्दू मुसलमान को यों ही गंगा में बहा दिया जाता है?"

"और क्या नहीं। वैसे तो लकड़ी और कपड़े के दो सौ रुपये मिलते हैं। मगर हम दोनों बाँट लेते हैं।"

"सरकार आप से इस रक़म के खर्च किये जाने या न किये जाने का कोई सुबूत तलब नहीं करती।"

"क्यों नहीं मगर हम तो झूठी रसीद बनवा लेते हैं। जैसे कार के ड्राईवर मालिकों को पेट्रोल की फ़र्ज़ी रसीद दिखा कर रुपये खा जाते हैं और जाते पांच मील हैं तो बताते पचास हैं।"

"तब तो आपकी आमदनी चोखी हो जाती है।"

'हाँ जी। कोई कम्बख्त दिन होता होगा जो सौ रुपये लेकर घर में न घुसते हों।" दूसरे ने कहा, रिक्शा गन्तव्य पर पहुँच गया था। वह उतरे और पाँच का नोट हाथ पर रखते हुये बोले—

यह बातें कहीं और मत कहना, रोज़ यहीं आ जाया करो, खासी मजदूरी कर लिया करोगे, बिना महनत किये जेब भर जाया करेगी।"

"शुक्रिया" नोट जेब में सरकाते हुये उस ने कहा और सड़क के एक तरफ थूकते हुए आगे बढ़ गया जैसे उसने इन बदकारों पर लानत भेजी हो। उसे रिक्शा चलाते आठ साल हो गये थे। उस तरह का अनुभव उसको पहली बार हुआ था। लोग रुपया कमाने के लिए कितने अख्लाक़ से गिरे हुए काम करते हैं। यह बात, यह घटना, और यह मन्ज़र उसके दिमाग़ में शाम तक घूमता रहा। उसने सोचा था कि घर जाकर सारी कहानी अपनी बीबी को सुनायेगा ताकि उसको भी पता चले कि दुनिया में रुपये का शैतान इस इन्सान से क्या क्या करा रहा है। मगर बीवी तो खुद एक नई कहानी सुनाने को बेताब बैठी थी। अक्सर औरतें दिन भर की घटनायें शाम को खाना खाते वक़्त पति को सुनाया करती हैं, जब कि यह रवैया ठीक नहीं है। वह बोली—

"आज हमारे गाँव का सिरदारी चमार रेल पर कट कर के मर गया।"

"कैसे ?" कौर निगलते हुये मक़बूल ने पूछा ।

"बड़ी अजीब कहानी है । बात यों थी । आप को यह तो पता है ही कि उसके पास यहां बिसे भर ज़मीन नहीं थी सिर्फ़ महनत मजदूरी करके गुज़र करता था । उस के सास सुसर तो उसकी शादी के केवल दो ही महीने बाद मर गये थे । केवल एक साला रह गया था । वह भी कुयें का हौज़ खोदते वक़्त ऊपर से मिट्टी गिरने पर उस में दब के मर गया । इस तरह ससुराल की सारी ज़मीन सिरदारी को मिल गई । उसने वहाँ की ज़मीन बेच कर यहाँ बारह बीघे ज़मीन ख़रीद ली थी । मगर खेती में लगाने को उसके पास रुपया नहीं था । इस लिए स्टेट बैंक से उसने क्राप लोन लिया और सारे खेत में उसने मटर बो दी । मटर की खेती आसानी से और कम खर्च में हो जाती है और बिकती गेहूं से मँहगी है । अपनी सूझ बूझ से काम तो उसने ठीक किया था । मगर भाग्य ने साथ नहीं दिया ?

मटर खूब अच्छी उगी, बढ़ी, फूली फली, उसको फूलते फलते देख कर सारा कुनवा फूला नहीं समाता था । एक दिन पच्छिम से बादल उठे और ओले बरसा दिये । हर पौधे की कमर टूट गई और सारी मटर ज़मीन पर बिछ गई । इस तरह उनके कुनवे की भी कमर टूट गई ।"

"ओले तो सभी किसानों के खेतों पर पड़े थे ।"

"मगर सब इस तरह बरबाद तो नहीं हुये जैसे वह बरबाद हुआ । हर किसान हर प्रकार की फ़स्ल बोता है किसी पर ओले का कम असर पड़ता है किसी पर ज्यादा । इसने कुल खेत में मटर ही मटर बोदी थी । इस लिये उस पर बुरा असर पड़ा । विवश होकर उसने मटर को पलट दिया । उसने हरी खाद होने की वजह से खेत को दमदार बना दिया । अब उसने केन डवलपमेंट सोसाइटी से गन्ना और खाद लोन लेकर बो दिया । ईख बहुत शानदार हुई । ईख को लहलहाते देख कर मटर का ग़म मुर्झा गया और सारा कुन्बा खुश हो गया था ! किसी ने ठीक कहा है कि मरे को मारे शाहोमदार । क्वार में ज़ोर की बारिश के साथ तेज़ हवा चली और तमाम ईख को जमीन पर बिछा दिया । मील चलते चलते आधी सूख गई आधी को चूहे खा गये कुछ को पास पड़ोस के लोग खा गये । शुरू में मिल से पर्ची नहीं मिली, फागुन में मिल पर पड़ पाई । पानी का साधन अपना न होने की वजह से वह खुश्की से सूखती रही । जो कुछ गन्ना मिल पर बिका वह सोसाइटी ने अपने पिछले साल के लोन में काट लिया । खाद बीज के क़र्ज़ों से तो उद्धार हो गया लेकिन बेचारे पर बचा कुछ नहीं डले से ढोकर बैठ गया ।"

"अगर खेती का बीमा होता तो उसकी यह हालत नहीं होती ।"

"बैंक से रिक्शे भी सब को और आसानी से नहीं मिल जाते। वहां ज़ामिन चाहिये और गरीब की कोई ज़मानत करने वाला नहीं मिलता। इस लिये वहां के झगड़े में कौन पड़े" लम्बी सांसे लेते हुए उसने कहा—

"भाई साहब क्या हर हिन्दू मुसलमान को यों ही गंगा में बहा दिया जाता है?"

"और क्या नहीं। वैसे तो लकड़ी और कपड़े के दो सौ रुपये मिलते हैं। मगर हम दोनों बांट लेते हैं।"

"सरकार आप से इस रक़म के खर्च किये जाने या न किये जाने का कोई सुबूत तलब नहीं करती।"

"क्यों नहीं मगर हम तो झूठी रसीद बनवा लेते हैं। जैसे कार के ड्राईवर मालिकों को पेट्रोल की फ़र्ज़ी रसीद दिखा कर रुपये खा जाते हैं और जाते पांच मील हैं तो बताते पचास हैं।"

"तब तो आपकी आमदनी चोखी हो जाती है।"

'हाँ जी। कोई कम्बख्त दिन होता होगा जो सौ रुपये लेकर घर में न घुसते हों।" दूसरे ने कहा, रिक्शा गन्तव्य पर पहुँच गया था। वह उतरे और पाँच का नोट हाथ पर रखते हुये बोले—

यह बातें कहीं और मत कहना, रोज़ यहीं आ जाया करो, खासी मजदूरी कर लिया करोगे, बिना महनत किये जेब भर जाया करेगी।"

"शुक्रिया" नोट जेब में सरकाते हुये उस ने कहा और सड़क के एक तरफ थूकते हुए आगे बढ़ गया जैसे उसने इन बदकारों पर लानत भेजी हो। उसे रिक्शा चलाते आठ साल हो गये थे। उस तरह का अनुभव उसको पहली बार हुआ था। लोग रुपया कमाने के लिए कितने अख़लाक़ से गिरे हुए काम करते हैं। यह बात, यह घटना, और यह मन्ज़र उसके दिमाग़ में शाम तक घूमता रहा। उसने सोचा था कि घर जाकर सारी कहानी अपनी बीवी को सुनायेगा ताकि उसको भी पता चले कि दुनिया में रुपये का शैतान इस इन्सान से क्या क्या करा रहा है। मगर बीवी तो खुद एक नई कहानी सुनाने को बेताब बैठी थी। अक्सर औरतें दिन भर की घटनायें शाम को खाना खाते वक़्त पति को सुनाया करती हैं, जब कि यह रवैया ठीक नहीं है। वह बोली—

"आज हमारे गाँव का सिरदारी चमार रेल पर कट कर के मर गया।"

“कैसे ?” कौर निगलते हुये मक़बूल ने पूछा ।

“बड़ी अजीब कहानी है । बात यों थी । आप को यह तो पता है ही कि उसके पास यहां बिसे भर ज़मीन नहीं थी सिर्फ़ महनत मजदूरी करके गुज़र करता था । उस के सास सुसर तो उसकी शादी के केवल दो ही महीने बाद मर गये थे । केवल एक साला रह गया था । वह भी कुयें का हौज़ खोदते वक़्त ऊपर से मिट्टी गिरने पर उस में दब के मर गया । इस तरह ससुराल की सारी ज़मीन सिरदारी को मिल गई । उसने वहाँ की ज़मीन बेच कर यहाँ बारह बीघे ज़मीन ख़रीद ली थी । मगर खेती में लगाने को उसके पास रुपया नहीं था । इस लिए स्टेट बैंक से उसने क्राप लोन लिया और सारे खेत में उसने मटर बो दी । मटर की खेती आसानी से और कम खर्च में हो जाती है और बिकती गेहूं से मँहगी है । अपनी सूझ बूझ से काम तो उसने ठीक किया था । मगर भाग्य ने साथ नहीं दिया ?

मटर खूब अच्छी उगी, बढ़ी, फूली फली, उसको फूलते फलते देख कर सारा कुनवा फूला नहीं समाता था । एक दिन पच्छिम से बादल उठे और ओले बरसा दिये । हर पौधे की कमर टूट गई और सारी मटर ज़मीन पर बिछ गई । इस तरह उनके कुनबे की भी कमर टूट गई ।”

“ओले तो सभी किसानों के खेतों पर पड़े थे ।”

“मगर सब इस तरह बरबाद तो नहीं हुये जैसे वह बरबाद हुआ । हर किसान हर प्रकार की फ़स्ल बोता है किसी पर ओले का कम असर पड़ता है किसी पर ज़्यादा । इसने कुल खेत में मटर ही मटर बोदी थी । इस लिये उस पर बुरा असर पड़ा । विवश होकर उसने मटर को पलट दिया । उसने हरी खाद होने की वजह से खेत को दमदार बना दिया । अब उसने केन डवलपमेंट सोसाइटी से गन्ना और खाद लोन लेकर बो दिया । ईख बहुत शानदार हुई । ईख को लहलहाते देख कर मटर का ग़म मुर्झा गया और सारा कुन्बा खुश हो गया था ! किसी ने ठीक कहा है कि मरे को मारे शाहोमदार । क्वार में ज़ोर की बारिश के साथ तेज़ हवा चली और तमाम ईख को जमीन पर बिछा दिया । मील चलते चलते आधी सूख गई आधी को चूहे खा गये कुछ को पास पड़ोस के लोग खा गये । शुरू में मिल से पर्ची नहीं मिली, फागुन में मिल पर पड़ पाई । पानी का साधन अपना न होने की वजह से वह खुश्की से सूखती रही । जो कुछ गन्ना मिल पर बिका वह सोसाइटी ने अपने पिछले साल के लोन में काट लिया । खाद बीज के क़र्ज़ों से तो उद्धार हो गया लेकिन बेचारे पर बचा कुछ नहीं डले से ढोकर बैठ गया ।”

“अगर खेती का बीमा होता तो उसकी यह हालत नहीं होती ।”

'खेती का बीमा कौन करेगा ? सरकस के फनकारों और स्त्रियों तक का बीमा किया नहीं जाता । भारत में तो उसी का बीमा होता है जिस के साथ ख़तरे जुड़े न हों ।

"हाँ तो सिरदारी की जवान लड़की थी ईख की आमदनी पर मुँह धोये बैठे थे । वह धोखा दे गई । लड़की के हाथ पीले ज़रूर करने थे गांव बिरादरी के लोग टोकने लगे थे । उसका ब्याह पूरे कर्ज के रुपये पर किया गया । उसी साल सिरदारी की बहू के अँगूठे में कांटा लग गया और सेप्टिक हो गया जिस को ठीक करने में कई सौ रुपये क़र्ज़ा लेने पड़े इस तरह चार हज़ार तीन सौ पैंसठ रुपये का क़र्ज़दार हो गया बेचारा सिरदारी ।

कुछ दिनों तक तो क़र्ज़ा देने वाले सूद के लोभ में चुप बैठे रहे लेकिन जब असिल की वापिसी में भी शक नज़र आने लगा तो लोगों ने तकाज़े करने शुरु कर दिये । कुछ दिनों तक तो वादे बहाने करके पीछा छुटाता रहा जैसे अजनबी गली के कुत्तों को पुचकार कर पार करता है ।

आदमी खरा था, साफ़ था, ईमानदार था मगर ग़रीब था । जब पानी सिर से ऊपर होने लगा, तकाज़े रास्ता चलना बन्द करने लगे तो उसने किसी भी सूरत क़र्ज़ा से उद्धार होने की कोशिश करनी शुरू कर दी । उस के पास केवल ज़मीन ही थी उसने बहू से कहा कि वह या तो चार बीघा ज़मीन बेच लेने दे या सारी जमीन चार साल को रहन रख लेने दे ताकि क़र्ज से मुक्ति मिल जाये, पेट तो महनत मजदूरी करके भर ही लिया जायेगा । मगर औरत ने दोनों बातों में से एक भी न मानी । सुनते हैं उसने यह भी कहा था कि मर्द की बात औरत को टालनी नहीं चाहिए वरना इसके परिणाम गलत होते हैं । इस पर औरत ने साफ़ जवाब दे दिया कि वह इस गीदड़ भभकी में आकर बच्चों के हाथ में ठीकरा नहीं देगी । उस जवान शादी शुदा लड़के ने भी अपनी बहू की शह पाकर चुप साध ली थी । जब उसकी परेशानी में, वाल्मीकि के कुम्बे वालों की तरह किसी ने भी मदद करने का आश्वासन नहीं दिया तो वह कहाँ तक मुँह छुपा कर जीने की ज़िन्दगी जीता । आख़िरी हथियार का प्रयोग किया ।

"अगर तुम लोग मेरी मदद नहीं करोगे तो मैं रेल पर कट के मर जाऊँगा" उस के इस वाक्य पर भी क़िसी के कान पर जुँ नहीं रेंगी और वह सच मुच दुखिया कर सिर से कपड़ा लपेट कर मुड़िया भीकम के पास लाइन पर आने वाली गाड़ी के सामने लेट गया ।"

''मुड़िया भीकम के पास की बात है ?"

'जी ! फिर इन्जन के छाज ने उसको लाइन से उतार दिया जैसे कि वह ऐसे ईमानदार को इस तरह मारना नहीं चाहता था और उसकी देश के लिए जरूरत महसूस करता था । मगर उसकी आन रखने के लिए प्रकृति ने यही एक उपाय सोचा । हर सच्चे और ईमानदार को जान पर खेलना ही पड़ता है । सो उसकी एक टांग और एक हाथ कट गया ।"

"ओफ़" मक़वूल वहुत दुखिया कर बोला ।

"उस के जिस्म से ख़ून बहता रहा । शाम का समय था गाड़ी तो उसका वलिदान लेकर मुरादावाद चली गई मगर वह रात भर वहीं पड़ा रहा । सुबह को जी० आर० पी० ने सिविल पुलिस के द्वारा आस पास के लोगों को वुला कर लाश पहचनवाने की कोशिश की मुंडिया राजा के लोगों ने कुछ निशानों के बल पर उसको पहचान लिया । वैसे उसका चहरा फूल कर कुरूप हो गया था मगर हुक़्क़े के धुयें से सफ़ेद भूरी मूँछें और कान पर जन्म से उभरी हुई रसौली साफ़ ज़ाहिर कर रही थीं कि यह सिरदारी ही है । लेकिन उस की वीवी और उसके लड़के ने इतना होने पर भी गाँव वालों को झूठा वना कर लाश को अपनाने से इन्कार कर दिया ।"

"सोचा होगा कि यह तो मर ही गया । अपना बताने पर इस दरिद्र स्थिति में सौ दो सौ रुपये और क़र्ज हो जायेंगे ।"

"ऐसी भी क्या ग़रीवी कि अपने आदमी को आख़िरी वक़्त में ठुकरा दिया जाये !" वहू ने कहा—

"कोई ताअज्जुव की वात नहीं है, लोग जिन्दगी में अपने को भूल जाते हैं, ठुकरा देते हैं । उसने तो मुर्दे को ठुकरा दिया था ।" पति ने ताना सा कसा ।

"इस घटना से तुम्हें दुख भी हो रहा है और पक्ष फिर भी वहू वेटे ही का ले रहे हो ।"

"इस में भी एक राज़ है ।" कुछ सोच कर उसने सिरदारी की गंगा में वहती हुई लाश की कहानी सुनाई यह सुन कर मक़वूल की वीवी वोली—

"इसी का फल भोगेंगे यह सब लोग देखते जाना । आज प्रधान कह रहा था कि जमीन पर लिया गया सरकारी कर्जा जिस के नाम पर वह जायदाद चढ़ेगी उसी से वसूल किया जायेगा । जो काम सिरदारी की वहू और बेटे ने नहीं करने दिया था, वही काम किसी दिन उसको करना पड़ेगा । इतना कर्जा चुकाने के लिए उन के पास इसके अलावा और कुछ है ही नहीं ।"

एक महीने बाद प्रधान जी की वात पूरी हो गई ।

"मन का निर्णय"

स्वर्गीय माता पिता के चित्र पर नज़र जमाये वाल मुकन्द वड़ी तन्मयता से कुछ सोच रहे थे अचानक पन्ना लाल ने कन्धा हिलाया और कहा "क्या सोच रहे हो मित्र ?"

"आओ भई पन्ना लाल" कहते हुए बालमुकन्द ने वैठने को कुर्सी सरकाई और आगे फिर बोले "भाई सोच यह रहा था कि मेरे पिता को शेविंग करते समय जरा सा ब्लेड लग जाने से टिटेनस हो गई और इसी वीमारी में वह भगवान को प्यारे हो गये । मगर रोज़ हज़ारों मुसलमानों के खतने तेरह सौ साल से होते चले आ रहे हैं कोई मैडिकल एहतियात भी नहीं वरती जाती और फिर भी किसी को टिटेनस होते नहीं सुनी ।"

"भगवान की माया है" पन्ना लाल ने विना अक़्ल पर ज़ोर डाले कहा ।

"यह भी कोई जवाव हुआ ।"

"वस, यही जवाब है इस वात का । चलो ज़रा अस्पताल चलें मधुसूदन के लड़के को देख आयें ।"

'उसे क्या हो गया है ?"

"बिना टिकिट आ रहा था । स्टेशन से दूर आउटर के पास स्पीड घट जाने पर उतरने के प्रयास में सिगनल के तारों की किसी खूंटी पर गिर गया और सिर

फट गया । कहते हैं बचना मुश्किल है ।"

"इतने धनाड्य आदमी का लड़का बी० ए० का छात्र और बिना टिकिट सफर करना? कितनी शर्म की और अविवेकपूर्ण बात है। राम, राम चलते हैं भई। उसके पिता तो मेरे भी मित्र हैं। हम और वह साथ साथ पढ़े हैं" बाल मुकन्द इतना ही कह पाये थे कि एक बहू तीन वर्ष के बच्चे को लिए इधर आई, पीछे पीछे उसका पति भी था। उसने बाल मुकन्द की बहू के पैंर छुये और इन को हाथ जोड़ कर नमस्ते की फिर बाहर चली गई। उसके पति ने भी उसी तरह दोनों का अभिवादन किया। इन दोनों ने भी इस प्रकार आशीर्वाद दी जैसे कोई अपने बहू बेटों को देता है। पन्ना लाल यह सब देख रहा था। जब वह बाहर चले गये तो उन्हों ने पूछा—

"यह कौन लोग हैं ?"

"मेरे किरायेदार ।"

"इतने शिष्ट किरायेदार ? मेरी नज़र में पहली मिसाल है ।"

"आप यही देख कर अचरज में पड़ गये हैं। अगर इनके सुबह से शाम तक के व्यवहार देखेंगे तो दातों तले उंगली दबा लेंगे।

"ऐसी क्या बात है ज़रा सुनाओ तो ?"

"मैं वैश्य हूँ और यह ब्राह्मण हैं मगर इन्हें उच्च वर्ग का तनिक भी ध्यान नहीं है। बहू रोज़ सुबह शाम मेरी बहू को प्रणाम करने आती है। जब कोई खास चीज़ बनती है तो यहां अवश्य पहुँचाती है। एक दिन मेरी बहू को ज्वर आ गया तो बन्दी दिन भर सिर और पैर दबाती रही, अपनी बहू भी क्या सेवा करती। यही नहीं अपना काम भी किया।"

'वह कैसे" बात काट कर पन्ना लाल ने पूछा।

"वहीं स्टोव ले आई और खाना भी बनाती रही, बच्चे को भी खिलाती रही मगर बीमार को छोड़ कर कहीं नहीं गई। मैं उस रोज़ लखनऊ गया था। इतना सौहार्द्र, प्रेम और सहानुभूति अपनों में भी नहीं होता। उस का पति भी उसकी ट्रू कापी है। बड़ा हंसोड़ और मिलनसार है।"

"यह सब छल है, भुलावा है, बहुरूपियापन है बालमुकन्द जी, यह शिष्टाचार नहीं है। तुम भोले भाले हो समझते नहीं हो। इस सब का कारण वह फ़ाहिशा औरत है जिसके तुम आशिक़ थे जिस से तुम्हें आतशिक की बीमारी लगी और डाक्टरों

ने तुम्हारी गुप्तेन्द्री काट दी नहीं तो मर जाते। आज तुम उसी के तुफैल निवन्शिया हो और इसी निवन्शियापन के कारण वह तुम्हारी सम्पत्ति को हथियाने के लोभ में तुम से यह शिष्टता बरत रहा है। वेमतलब कौन किस से प्यार करता है ? आप इस व्यवहार से खुश हो जायेंगे और जायदाद का मालिक बना देंगे यही उसका लक्ष्य है। जायदाद नाम होते ही देख लेना कोई पास आनकर भी नहीं फटकेगा। हज़ारों मिसालें देखी हैं। ऐसा ही हुआ करता है। आप भी अनुभव कर लेंगे।"

"इस का मतलब है कि यह रूप गाँठ रहे हैं"

"बिलकुल। इस आधुनिक युग में ऐसे लोग कहां मिलते हैं ?"

"मुझ से तो तीन साल पहले जब यह मकान में किरायेदार की हैसियत से आये थे तो यह कहा करते थे जि जब भी आप को मकान खाली कराना हो एक दिन पहले कह दीजिए। खाली करके चले जायेंगे।"

"भाई साहब वह तो वक्ती बात थी चाऊ एन लाई भी तो जब भारत आये थे तो हिन्दी चीनी भाई भाई कहा करते थे। आप को क्या पता है कि छुपे छुपे उन्होंने मकान का अलाट भी करा लिया हो।"

"मुझे इसका यक़ीन नहीं होता।"

"यही तो बहुरूपिये के रूप की विशेषता होती है कि वह असल और नक़्ल की तमीज़ ही न होने दे। इसका अनुभव करना हो तो इन लोगों के घर से वापिस आने पर कह कर देख लीजियेगा" उठ कर अस्पताल को चलते हुये पन्ना लाल ने कहा।

"अच्छा पन्ना लाल यह अनुभव भी जरूर करूँगा। तुम्हारे हाथ में यह कौन सी किताव है।"

यह "सरिता" है भारत की प्रसिद्ध हिन्दी पत्रिका। अरे यार इस में एक बिलकुल नई बात छपी है। देखोगे तो तुम भी अचरज में पड़ जाओगे" कहते कहते पन्ना लाल ने जल्दी जल्दी पन्ने पलटे 'देखो यह है" बोला 'तुलसी दास एक पथ भ्रष्ट थे' एक हिन्दी लेखक का यह नया ग्रंथ, है ना हैरत की बात।"

"जी यह हैरत की बात नहीं है बल्कि ग़ैरत की बात है। इस लेखक ने इतने महान भक्त कवि को पथ भ्रष्ट कहा है, मैं उसको भी हेय समझता हूँ और इस पत्रिका के एडीटर को जिसने यह खबर छापी है। वास्तव में किसी भी सम्पादक को ऐसे अशोभनीय इश्तहार नहीं छापने चाहिए। जो समाज का ग़लत दिग्दर्शन करते हैं। बुरे काम में सहयोग देने वाला भी भला नहीं होता है।"

"बालमुकन्द जी आप तो आदर्शवाद की बात करते हैं। इस युग में ऐसी बातें कौन देखता है। रुपया मिले चाहे कैसे भी मिले यह उद्देश्य है लोगों का।"

"ग़लत तरीक़े से कमाया हुआ रुपया अभक्ष्य होता है।"

"होता होगा। चलो अस्पताल आ गया। उतरो।" कहते हुए पन्ना लाल ने बहस का सिलसिला समाप्त किया। अन्दर गये। बात चीत की। हाल चाल पूछे। सामाजिक सहानुभूति दर्शाई। स्वस्थ होने की कामना की और चले आये।

छः दिन बाद किरायेदार वापिस आया। बालमुकन्द ने कच्चे कानों के होने का सुबूत दिया और मोती स्वरूप को बुला कर कहा "तुम बुरा न मानो तो हम अपना मकान खाली कराना चाहते हैं।"

"इस में बुरा मानने की क्या बात है लाला जी। यह आपका मकान है मालिक मकान को हक़ होता है कि वह किरायेदार को कभी भी निकाल दे। हम तो आपके आभारी हैं कि तीन साल आपके मधुर सम्पर्क, सौम्य व्यवहार और सुशील संरक्षण में बीत गये।" मोती स्वरूप ने कहा और चले गये। बहू से लाल के विचार प्रकट किये। वह पहले तो सुस्त हो गई मगर बाद में पति ही की हां में हां मिलाकर कल ही को पूर्व कथनानुसार घर छोड़ने को राज़ी हो गई। दूसरा मकान तो इतनी जल्दी मिल नहीं सकता था। छोड़ा जल्दी कैसे जा सकता था। यह लोग सामान भर कर विद्याचन्द धर्मशाला में चले गये। जाती बार भी उनके शिष्ट व्यवहार, सौहार्द और प्यार में कमी नहीं थी, उसी तरह पैर छूना प्रणाम करना चलती बार भी हुआ।

घर में सुनसानी छा गई। बालमुकन्द की बहू को अपने पति का यह इकतरफ़ा फैसला अच्छा नहीं लगा हालांकि एक हिन्दू नारी का कर्तव्य निभाते हुये उसने पति के विचार का विरोध नहीं किया। मगर अन्दर ही अन्दर खिन्न रहने लगी। बालमुकन्द भी उस की उदासी का कारण समझते थे मगर अपने किये का इलाज क्या है? मन ही मन पन्ना लाल को बुरा भला भी कहते थे।

एक दिन उन्होंने बहत्तर घन्टे के अखण्ड कीर्तन का प्रोग्राम बनाया और दावत देने पन्ना लाल के घर गये सारी बातों के अन्त में उन्होंने कहा "पन्ना लाल हमारा किरायेदार तो परीक्षा में जीत गया परन्तु हम फेल हो गये।"

"कैसे भाई साहब?" कीर्तन का कार्ड सम्भालते हुए पन्ना लाल ने कहा। बाल मुकन्द ने सारी बात बताई। सुन कर पन्ना लाल बोले "आप के साथ साथ मैं भी

फेल हो गया। उसके जाने से आप को जो आर्थिक हानि हुई है उसके लिए मैं क्षमा माँगता हूँ।"

"इस के लिए मैं क्षमा भी कर सकता हूँ और वह हानि पूरी भी हो सकती है। मगर मानसिक शान्ति की हानि के लिए न मैं क्षमा करूँगा और न वह पूरी हो सकती है।" यों कह कर बाल मुकन्द सिर सहलाने लगे जैसे बालों में जुयें काट रही हों। पन्ना लाल भी उन की मानसिक वेदना का अनुभव करने लगे। उदास हो गये और अपनी भूल पर पछताने लगे। कुछ देर ठहरकर वह बाल मुकन्द से बोले जो अभी तक सिर सहलाते रहे थे और मुंह नीचा किये विचारों में लीन थे "कीर्तन में लाउड स्पीकर का प्रयोग तो होगा ही ?"

'बिलकुल होगा। विना इसके क्या आनन्द आयेगा।"

"बहत्तर घन्टे लगातार कीर्तन में लाउड स्पीकर बजने से कुछ लोगों को असुविधा भी होगी।"

"हां क्यों नहीं होगी विद्यार्थी, रोगी, लेखक इससे अधिक प्रभावित होंगे। परन्तु जब इलेक्शन होते हैं तो महीनों रात दिन लाउड स्पीकर बजाते रहते हैं तब क़िसी को कोई परेशानी नहीं होती और राम नाम लेने में दुख हो़गा ?" बाल मुकन्द ने स्वभाव में सख़्ती लाते हुए कहा।

"आप सही कहते हैं बाल मुकन्द जी मैं जब सोचता हूँ गलत सोचता हूँ आप मेरी बात का बुरा न मानें।" कह कर पन्ना लाल कार्ड पढ़ने लगे "इस कार्ड में एक शब्द ग़लत छपा है– अनुग्रहीत। होना चाहिए था "अनुगृहीत" बाल मुकुन्द की तरफ कार्ड बढ़ाते हुये पन्ना लाल ने कहा।

"सही बात है यह छापने वाले भी अस्ल मैटर पर ध्यान नहीं देते। अच्छा मैं चलता हूँ। आना ज़रूर मय परिवार के आना।"

"अवश्य आयेंगे। नमस्ते।"

"नमस्ते" खुश खुश बाल मुकन्द घर आये तो देखा बहू जी रो रहीं थीं "क्यों भई तुम क्यों रो रही हो" उन्होंने पूछा।

"कीर्तन में हमारा वह किरायेदार भी होना चाहिए था। चाहे हज़ार आदमी आयें मगर उसके बिना मुझे कीर्तन अधूरा लगेगा।"

"तुम ने मेरे मन की बात कह दी मगर उसका पता तो नहीं, उसे ख़बर भी करूँ तो कैसे करूँ, लेकिन एक बात है"

"क्या ? जिज्ञासा से बहू ने पूछा।

"तुलसी दास ने कहा है 'जा पर जा को सत्य सनेहू, सो तिहि मिलहि न कछु सन्देहू' यदि तुम्हें उससे इतनी लगन है तो वह भगवत कृपा से अवश्य ही मिलेंगे, तुम कीर्तन की तैयारी करो।" बड़ी गर्मा गर्मी से कीर्तन की तैयारियां होने लगीं। कीर्तन का दिन भी आ गया। लोग बाग आने लगे। घर में चहल पहल होने लगी। रिकार्डिंग शुरु हो गयी। "साक़िया आज मुझे नींद नहीं आयेगी, सुना है तेरी महफ़िल में रतजगा है।" बलन्द आवाज़ गूँज रही थी। हाजी क़मर उद्दीन बाल मुकन्द से मिलने आये।

"हाजी जी सलाम अर्ज़ है।"

"जीते रहो बेटे, मुरादें पूरी हों। कीर्तन मुबारक हो।"

"शुक्रिया ! कोई मेरे लायक खिदमत हाजी जी ? शिष्टाचार दिखाते हुये लाला जी ने कहा।

"लाला जी खिदमत तो मुझे बताइये, आपके यहां कीर्तन है। आप मेरे पड़ोसी हैं। इस लिये मेरा भी कुछ फ़र्ज होता है।"

"हाजी जी आप बुजुर्ग हैं खिदमत क्या बताऊँ ? जब कीर्तन शुरु हो जाये तो तशरीफ़ लाने की ज़हमत फ़रमाइये अगर आप की धार्मिक नीति के खिलाफ़ न हो तो" बाल मुकन्द ने विनम्रता से हथेलियां मलते हुये कहा।

"कीर्तन एक अच्छी बात है। अज़ीम हस्तियों का इसमें तज़किरा होता है। ऐसी अहले सफा और खुदा रसीदा लोगों का जहाँ जिक्र हो वहां जाना हमारे मजहब के उसूलों के खिलाफ़ नही है। यह भी तो मीलादुन्नबी की तरह है। मगर मैं..." कहते कहते रुके--

"मगर क्या हाजी जी ?"

"बात यह है कि मेरा लड़का कल कोठे पर पतंग उड़ाते से नीचे गिर गया था आज उसकी हालत बहुत खराब है। इस लिये मैं कीर्तन जैसे शुभ काम में शरीक न हो सकूँगा। कभी आप मेरी अदम मौजगी का शिकवा करें इस लिये पहले ही मुआफी माँगने चला आया हूँ।" रिकार्ड बन्द हो गया था और रामायण शुरु हो गई थी। कीर्तन की मधुर ध्वनि सारे ब्रह्माण्ड में गूंज रही थी।

हाजी जी की बात सुनते ही बालमुकन्द का चहरा फक पड़ गया और वह सारा काम ज्यों का त्यों छोड़ कर हाजी जी के लड़के को देखने उन्हीं के साथ चले गये।

वहा पहुँचे तो डा० जवाब दे रहा था कि बच्चे के बचने की उम्मीद बहुत कम है। यह सुनते ही बुर्कापोश औरतें फफक फफक कर रोने लगीं। हाजी जी की आंखों में भी आंसू छलकने लगे थे। उनकी गम्भीरता भी डिग गई। अब बाल मुकन्द को वही कीर्तन की आवाज़ जो कुछ देर पहले मन मोहक लग रही थी अब हृदय विदारक लग रही थी। कानों को असह्य हो रही थी। वह फ़ौरन लौट आये। "अरे मोती स्वरूप तुम आ गये। मेरा सौभाग्य अब मेरा कीर्तन सफल हो गया। तुम्हें कैसे पता चला" मोती स्वरूप को देखकर बोले।

"मेरे दफ़्तर के क्लर्क से पन्ना लाल की यारी है। पन्ना लाल जी ने उन्हें बताया था उन्होंने ही मुझे दफ़्तर में बताया! जब कीर्तन की खबर सुनी तो बिना बुलाये ही चला आया क्यों कि राम नाम में बुलाने की कोई अहमियत नहीं होती है और न ज़रूरत होती है।"

"तुमने ठीक किया बेटा। बैठो।" वह आगे बढ़ कर बहू से बोले—

"हाजी जी के लड़के की हालत बहुत खराब है। कीर्तन बन्द कर दो। फिर कभी देखा जायेगा।" यह सुनते ही सब में शान्ति छा गई और कीर्तन बन्द कर दिया गया। बाल मुकन्द व्यास गद्दी के पास आ कर हाथ जोड़ कर बोले –

"कीर्तन के बहाने आप लोग यहां जमा हुये हैं। मगर सब का धन्यवाद अद करते हुए मैं भगवान को साक्षी करके एक रहस्योद्घाटन करना चाहता हूँ वह यह कि श्री मोती स्वरूप मेरी सारी सम्पत्ति के मालिक होंगे और मेरे दत्तक पुत्र के रूप में इन को सारे अधिकार प्राप्त होंगे। कल दिन निकले कोर्ट में जाकर इस की काग़ज़ी कार्यवाही पूरी कर दूंगा।"

'मेरे पति ने जो निर्णय किया है वह मेरी मर्ज़ी के अनुकूल किया है और मुझे सहर्ष स्वीकार है।"

"क्या कह रहे हो बाल मुकन्द" पन्ना लाल ने कहा।

"यह मेरे मन का निर्णय है। तुम्हारे परामर्श की ज़रूरत नहीं है।" यह सुनते ही सब ने तालियां बजाई मगर कुछ लोगों पर ओस पड़ गई थी।

◆

“ मैं तो कह दूँगी ”

रेल गाड़ी की सबारियाँ लेकर आ रहे रिक्शों की टनाटन टनाटन की ध्वनि, इक्कों की खड़खड़ाहट की आवाज़ सुन कर मही पाल की पत्नी ने कहा - “मालूम होता है कि गाड़ी आ गई, नौ वज गये हैं।”

“नौ तो वज ही गये हैं तुम कुछ कम समझ रही हो क्या ?”

“वातों ही वातों में कितना समय वीत गया और पता नहीं चला।”

“औरतों की बातों में तो जुग वीत जायेगे तब भी पता नहीं चलेगा जानकी” महीपाल ने कहा। उसने लजा कर अँगड़ाई ली और सोने का बनावटी स्वाँग रचने लगी। वैसे उसकी आँखों में नींद दूर तक नहीं थी लगभग सभी सवारियां निकल चुकीं थीं। सड़क बिलकुल सुनसान हो गई थी। जानकी ने घड़ी भर को यों ही खिड़की से बाहर झांका जैसे किसान रात का अनुमान लगाने को आकाश की तरफ़ देखते हैं। सड़क से दूसरी तरफ़ अन्धेरे में कुछ लोग बीड़ी पी रहे थे। मगर जानकी को क्या ? कोई कहीं बैठा हो।

वह अन्दर आ गई और चेहरे पर क्रीम मलने लगी। थोड़ी ही देर में किसी की तेज़ आवाज़ रात के अन्धेरे में गूँजी “ठहर जा रिक्शे वाले। एक क़दम भी आगे वढ़ा तो ख़ैर नहीं है।” यह सुनते ही जानकी ने शीशी बन्द करके अलमारी में रख दी और क्रीम लगाना छोड़ दिया। वह खिड़की की तरफ़ फिर दौड़ी। मही पाल भी बाहर

झाँकने के लिए खिड़की की तरफ लपके। "क्या मामला है" उनके मुंह से निकला। दो आदमी रिक्शे के सामने खड़े थे। रिक्शे में कोई युवती थी उसके साथ कोई नहीं था। मही पाल ने मौके का जाइजा लिया और फौरन बन्दूक़ सम्भाली।

"तुम कहां चले ?" कहते हुये जानकी ने रोका

"देखता हूँ यह क्या करते हैं। अगर इन्होंने गलत कदम उठाया तो मैं भी नारी-सुरक्षा के लिए कदम उठाऊँगा" वह कहते हुये चले गये।

"गलत क़दम तो सरासर दिखाई दे रहा है लेकिन यह मत भूल जाना कि कोयलों की दलाली में हाथ ही काले होते हैं। चुप चाप घर बैठो, बहादुरी दिखाने का समय नहीं रहा है। ज़रा देर में पुलिस आ गई तो वे सब भाग जायेंगे और आप पकड़ लिए जायेंगे। फिर देते रहना सफ़ाई कि मैं उन का साथी नहीं हूँ।"

"उस हालत में लड़की और रिक्शे वाला मेरी मदद करेंगे। तुम मुझे कायर मत बनाओ। भगवान सब कुछ देखता है।"

"सुनो ! वे लोग कुछ और कह रहे हैं" जानकी ने घबराये स्वर में कहा। मही पाल जीने से नीचे उतर चुके थे। जानकी उन लोगों की बातें सुन रही थी वह कुछ कह रहे थे और अबला का हाथ पकड़ कर खींच रहे थे। जानकी ने कान लगा कर ग़ौर से सुना "ज़रा चीं चपड़ की तो पेट में चाकू घुसड़े दूँगा। नहीं तो मेरे साथ चल दो।" मही पाल के कानों तक भी यह आवाज़ पहुँच गई थी और वह जीने उतर कर बाहर मैंदान में पहुँच गये थे। लड़की ने रिक्शा पकड़ लिया था मगर वह हाथ से रिक्शा छुटा कर कह रहा था "उल्लू की पट्टी रिक्शा पकड़ती है ? यह क्या जादू का पिटारा है जो तेरी रक्षा कर देगा ?" यह बात जानकी ने भी सुनी और मही पाल ने भी। गुन्डे युवती को सड़क से दूर खेतों में को खींच रहे थे और वह पीछे को खिचती घिसटती जा रही थी। रिक्शे वाला विवशता से देख रहा था। महीपाल ने सड़क के पास जाकर पेड़ की आड़ लेकर एक गोली दागी। भयानक आवाज़ हवा में गूँजी, वह बोले—

"ठहर जाओ कमीनो। छोड़ दो इसे। भाग जाओ यहां से, वरना लाशें ही जायेंगी तुम्हारी, यहां से। मेरे ही घर के सामने यह जुल्म करने चले हो।" मही पाल की कड़ाके की आवाज़ सुन कर उनके पैर उखड़ गये। वह सचमुच छोड़ भागे और लड़की भाग कर मही पाल के गेट में घुस आई।

"घबराओ मत बहन जी मैं तुम्हारी पूरी रक्षा करूँगा। अब तुम पूर्णतया सुरक्षित हो।" वह पास आ गये और पहिचान कर बोले 'अरे तुम तो नरेन्द्र दत्त शर्मा

की लड़की हो। मैं इसी रिक्शा में तुम को तुम्हारे घर तक पहुंचा दूंगा" मही पाल आश्वासन देते रहे मगर वह इतनी घबराई हुई थी कि रुकी नहीं और घर की तरफ को भागती रही। उसे घर जाने में डर लग रहा था और वह यहीं रात बिताना चाहती थी। जब वह नहीं रुकी और घर के अन्दर ही चली गई तो उन्होंने स्वयं से कहा—"जैसे शर्मा जीं की बेटी वैसी ही मेरी बेटी। आज नहीं तो कल घर पहुँचा दूंगा। ले भई रिक्शे वाले अपने पैसे ले और जा" उन्होंने चवन्नी दी और घर में प्रवेश किया।

"किरन तू पहचानती है कि वे कौन लोग थे?" मही पाल ने पूछा

"कपड़े लत्ते और बढ़े हुए बालों से पता चलता है कि विद्यार्थी होंगे। यह मेरे साथ ही डींगर पुर स्टेशन से इस डिब्बे में चढ़े थे। मुझे ऐसा पता होता कि ये भेड़िये मुझ पर हमला करेंगे तो मैं दूसरे डिब्बे में जा बैठती। इन लोगों ने वहीं पूछा था कहां जा रही हो? तुम्हारे साथ कौन है?"

"तुम ने सही सही बता दिया होगा।" जानकी ने कहा

'यही तो किया।"

"कभी कभी सच बोलना भी जान लेवा होता है। दुनिया में सच बोलने पर अधिक मौतें होती हैं" मही पाल ने बात जारी रखी "तुम दोनों इसी कमरे में आराम करो, मैं बैठक में जा सोता हूँ, दिन निकले इस को इसके घर पहुंचा दूंगा।"

"भाभी जी अगर माई साहब वहां न पहुँचते तो न जाने मेरा क्या होता?"

"भगवान सब की रक्षा करता है। अच्छा होना था बुरा क्यों होता, किरन अब तो बच गईं।" जानकी ने मज़ाक किया।

"मज़ाक़ मत करो मुझे ऐसी बातों से डर लगता है" अपने हाथों से जानकी का मुंह बन्द करते हुए कहा। दोनों बातें करते करते सो गयीं। यह घटना मही पाल के लिए वरदान साबित हुई।

धीरे धीरे यह बात सारी बस्ती में फैल गई। कुछ ही दिनों में वे सब में शराफ़त के लिए प्रसिद्ध हो गये। अब तक वह नशाबन्दी आन्दोलन में काम करते थे। अब उन्होंने इस ख्याति से लाभ उठाने की कोशिश की। एम० एल० ए० का टिकिट ले आये और जनता पार्टी की रौ में शरीक होकर सफल भी हो गये। अब तो

उनकी पाँचों उंगलियां घी में थीं। उनके चारों तरफ़ लोगों का मेला लगा रहता था। लक्ष्मी धन) देहलीज़ चूमती रहती थी मगर वह चांदी की चमक में चौंधियाये नहीं। पहले से स्थापित हो चुकी उनकी सामाजिक प्रतिष्ठा ने उनकी अन्तरात्मा को अशोभनीय काम से बांध रखा। लेकिन वह विधायक होकर नशाबन्दी आन्दोलन का कोई भी कार्य अच्छी तरह नहीं कर पाते थे। आये दिन लखनऊ के चक्कर दूसरे कामों का समय ही कब छोड़ते थे? उनकी ईमानदार आत्मा ने नशाबन्दी के प्रधान पद की जिम्मेदारी अब किसी दूसरे को सोंप देने को बाध्य किया।

बहुत सोच विचार के बाद उन्होंने एक सभा बुलाई और अपना पद श्रीमती खन्ना को, जो अब तक उप प्रधान चली आ रही थीं, सोंप दिया और ईमानदारी से अपनी असमर्थता प्रकट कर दी। आम लोग भी सहमत हो गये और तालियों की गड़गड़ाहट के बीच श्रीमती खन्ना की गर्दन में प्रधान पद की फूल माला डाल दी गई। टी० पार्टी हुई, सब लोग खा पी कर अपने अपने घर चले गये।

"मिसेज़ खन्ना! अब न जाने कब मिलना हो एक तरह से हमारी तुम्हारी यह आख़िरी मुलाकात समझो। आज शाम का खाना हमारे साथ घर चल कर ही क्यों न खालो" मही पाल ने विनती सी की।

"बस इतनी सी बात है; चलिये। घर आज न गई कल चली जाऊँगी। इस बहाने भाभी जी से भी भेंट हो जायेगी।" श्रीमती खन्ना ने मुस्कराते हुये कहा।

"क्यों नहीं" उन्होंने कहा, दोनों खुश खुश घर पहुंचे।

"आज घर सूना सूना क्यों लग रहा है। भाभी जी कहां हैं?" वह बोलीं।

"आप समझती हैं, नारी इतनी फ़ारवर्ड हो गई है कि वह हर काम नर ही से पूछ कर नहीं करती है। चली गई होंगीं पिक्चर देखने। उन्होंने सोचा होगा कि जब तक मैं लौट कर आऊँगा तब तक यहां बैठी बैठी बोर होने से भी क्या लाभ? बैठिये आती ही होंगीं। तीन से छः देखी होगी।" मही पाल ने कपड़े उतारते हुए पलंग पर बैठने का संकेत करते हुए कहा। श्री मती जी ने भी पर्स मेज़ पर रख दिया और एक तरफ़ रखे सोफ़े पर बैठ गयीं।

"ऐसा मालूम होता है कि दूसरी पिक्चर देखने बैठ गयीं हैं शायद। दस हो रहे हैं। तीन से छः देखी होती तो अब तक आ न जातीं" घड़ी देखते हुये वह बोलीं।

"आज उन्हें पूर्ण स्वतन्त्रता मिल गई है। वह जानती हैं कि मैं नशाबन्दी ही तो करता हूँ फिल्म बन्दी थोड़े ही करता हूँ। कपड़े उतार कर आप भी आराम कीजिए। यह नाइट सूट रखा है पहन लीजिए।"

"यह तो आपकी पत्नी का है।"

"इस पर किसी का नाम थोड़े ही लिखा है। इस समय आप मेरे घर में हैं। आप पहन लीजिए वह आयेंगी तो कुछ और पहन लेंगी। कपड़ों की कोई कमी थोड़े ही हैं" बिना संकोच अपने कपड़े उतार कर हेंगर पर टांगते हुये मही पाल ने कहा।

"मेरी साड़ी इतनी मंहगी थोड़े ही है जो इस को उतार कर सोऊँ। इसी को पहने रहूँगी।"

"जी हां आपका कहना सही है। अब तो आप प्रधान हैं और प्रधान के लिए ऐसी साड़ियों की अहमियत ही क्या?"

"यह सब है तो आप ही की बदौलत।"

"मेरी बदौलत क्या है? जो जिस योग्य होता है भगवान उसे वह चीज़ दे देता है।" पलंग पर बिस्तर बिछाते हुये उन्होंने आगे कहा "आप इस पलंग पर आराम कीजिए में अपने लिए दूसरे पर बिछा लूंगा।"

"नेता जी यह आपने क्या किया। अगर मुझे ऐसा मालूम होता कि आप यह पलंग मेरे लिये ठीक कर रहे हैं तो मैं ऐसा नहीं करने देती। अब आप इसी पर आराम कीजिए मैं दूसरे पर आराम कर लूंगी।"

"आप तकल्लुफ़ क्यों करती हैं। यह पुरानी बातें हैं। आप को तो मोडरनाइज़ हो जाना चाहिए" हाथ पकड़ कर पलंग पर बिठाते हुये मही पाल ने कहा। अपना पलंग बिछाया और अलमारी में से स्काच की बोतल निकाली। श्री मती खन्ना यह पानी देख कर ऐसे चौंकी जैसे पानी से भरा बरतन देखते ही पागल कुत्ता चौक जाता है।

"यह क्या है?" जानते हुए भी प्रश्न किया।

"बात यह है जी मैं रोज़ शाम को सोते समय च्यूंटी भर पी लेता हूँ। दिन भर की थकान उतर जाती है। सुख से सो जाता हूँ।"

"कब से शुरू कर दिया है यह शौक?"

"सब कुछ पूछ कर क्या करोगी। तुम भी थोड़ी सी ले लो शरीर हल्का हो जायेगा।"

"धन्यवाद। मैं थकती ही नहीं हूँ।"

"उम्र का तकाज़ा है जी, तुम जवान हो मैं अधेड़ हूँ" कहते कहते उन्होंने बोतल मुंह से लगा ली लगभग और दो छटाँक एक सांस में डकार गये।

"नेता जी आप की च्यूँटी बहुत बड़ी होती है।"

"तुम भी बाल की खाल निकालती हो, लो !" नमकीन और मीठे की प्लेट श्री मती खन्ना के आगे सरकाते हुए बोले।

'मेरा तो पार्टी ही में पेट भर गया है। अब कुछ भी नहीं खा सकूँगी आप खाइए।" साड़ी का पल्ला सम्भालते हुए बोली।

"आपका पेट बहुत छोटा है।"

"जी हां मेरा पेट छोटा है। बड़े तो एम० एल० ए० के पेट होते हैं।"

"खूब कही तुमने भी। मज़ाक करना आ गया" कहते कहते मही पाल ने पूरी प्लेट साफ़ कर दी। हाथ झाड़े और उठे, अन्दर से किवाड़ें वन्द करनी शुरू कर दीं। श्री मती खन्ना चौंकी और बोलीं—

"आप यह क्या कर रहे हैं। भाभी जी आती होंगी। दोनों को एक कमरे में बन्द देख कर तूफ़ान खड़ा कर देंगी। ऐसा मज़ाक़ ठीक नहीं होता है।

"श्री मती जी आज वह यहाँ हैं ही कब ? परसों अपने भाई की शादी में गई हैं, कल शाम तक आ पायेंगी। आज रात तो हम तुम दोनों को किसी बात का खतरा नहीं है।" किवाड़ें वन्द करके कन्धे पर हाथ फेरते हुये मही पाल ने कहा। वह सपेरे के पिटारे में क़ैद नागिन की तरह सहम गई। अब समझ में आई वास्तविकता। अब खुलीं उनकी आखें और डाक्टर की सुई देख कर घबराये हुये रोगी की भांति परेशान श्री मती खन्ना बोलीं—

"आप दुनिया को शराब पीने से रोकते हैं और खुद पीते हैं। यह तो बहुत बुरी बात है।"

"श्री मती जी शराब यदि दवा के रूप में किवाड़े वन्द करके पी जाये तो कोई ऐब नहीं होता है। शरारत की नजर से पीना ऐब है। कौन सा रोगी डा० की दवा नहीं पीता ? हर दवा में अलकोहल होता है। आयुर्वेदिक दवाओं में आसव शराब ही का एक रूप है।"

"अपने ऐब को छुपाने के लाख बहाने बनाइए मगर ऐब ऐब ही रहता है। यदि

"मुझे ऐसा पता होता तो यहाँ क़दम भी नहीं रखती।"

"अब तो मेरे घर में हो,क़दम रखने की क्या बात करती हो ?"एक ही पलंग पर सट कर बैठते हुये मही पाल ने कहा। वह राजा के हाथ में चिड़िया की भांति कसमसाई और रस्मी अन्दाज़ में बोली "ठीक है आप अपने पलंग पर जा लेटें और वहीं से जो चाहें कहते रहें।"

श्री मती जी आज तो हम तुम दोनों एक ही पलंग पर सोयेंगे। आदमी की व्यक्तिगत जो कमी होती है वह तुम खूब समझती हो। इस दुबलंता को इन्सान दूर नहीं कर सकता" आकाश बेल की तरह सिमटते हुये स्वयं को समर्पित करके बोले।

"यानी मैं आप को अपनी आबरू दे दूँ ?"

"मैंने अपना प्रधान पद देकर तुम्हारी आबरू बढ़ाई है और तुम मुझ को आबरू का लुटेरा बताती हो ?"

"तो आप इस बदले में मेरे शरीर से खेलना चाहते हैं।"

"यह अप्रासंगिक बातें हैं। तुम समय को पहचान कर बात करो। रूढ़िवादिता को ठोकर मारो। और सहर्ष......... " कहते कहते बाहुओं में भींच कर सिसकी भरी, जैसे कुकर से भाप निकलती है। इस समय श्रीमती खन्ना ने कोई भी प्रतिक्रिया नहीं दिखाई। वह सोच रही थीं नेता जी इस समय नशे में धुत और वासना में अन्धे हैं और बचाव की कोई भी युक्ति सफल नहीं होगी। वह चुप चाप बैठी रहीं। नेता जी ने साड़ी झटकी।

"यह क्या ?" साड़ी पकड़ते हुए वे बोलीं।

"मैं इसे खराब करना नहीं चाहता।"

"तुम्हारी नज़र में यह मेरी इज्ज़त से ज्यादा क़ीमती है ?" श्रीमती खन्ना ने कहा परन्तु वह शिथिल बनी रहीं और हालात से समझौता करके मौन हो गईं। इसके अलावा उनके पास चारा भी क्या था ? वह जानती थीं कि प्रतिक्रिया निष्फल होगी। नेता जी के हाथ चलते रहे।

रात के तीन बज रहे थे। नेता जी बेसुध पड़े थे। श्रीमती खन्ना को नींद नहीं आ रही थी। वह उठीं, कपड़े पहने, संभलीं और दूसरे पलंग पर जा सोईं। पांच

बजे के करीब नेता जी की आँख खुली। इधर उधर देखा वह दूसरे पलंग पर सो रही थीं। अब वाक़ई उस को नींद आ गई थी मगर वह उसके पलंग पर बैठ गये और उसके गौर वर्ण मांसल शरीर पर धीरे धीरे हाथ फेरते रहे। वह सो रही थी उसने कुछ हरकत नहीं की। वह धीरे धीरे कहने लगे "कितनी सुन्दर काया है जी चाहता है कि दिल के अन्दर बिठा लूँ" यह सुनते ही श्री मती खन्ना धीरे से बोलीं "मगर ऐसा सम्भव नहीं है।"

"मैं तो समझ रहा था कि तुम सो रही हो" भयभीत कछुये की भांति सिकुड़ कर नेता जी ने झेंपते हुए कहा।

"आप सोने देंगे मुझे।" बैठ कर श्रीमती खन्ना ने कहा।

"आज की रात जागने में भी एक आनन्द है डार्लिंग"

"सही कह रहे हैं आप" विचारमग्न अवस्था में श्री मती खन्ना ने कहा।

"आप सोच क्या रही हैं?"

"तस्वीर के दो रुख होते हैं यह सुना था आज अनुभव कर लिया। एक व्यक्ति मन्दिर मस्जिद के लिए चन्दा इकट्ठा करता है, गुन्डों से अबलाओं की रक्षा करता है, समाज में शरीफ़ कहा जाता है, शराबबन्दी का ढिंढोरा पीटता है दूसरी तरफ़ वही आदमी भोली भाली स्त्रियों को अपने घर में बुलाकर बलात्कार करता है, शराब पीता है। आज मैंने अनुभव कर लिया है कि ज़ितने लोग शरीफ़ दिखाई देते हैं उनमें से अधिकांश ढोंगी हैं, पाखण्डी हैं।" ब्रीफ़ केस और पर्स उठाते हुये श्री मती खन्ना ने कहा। दिन निकले बोलने वाली चिड़ियों की चहचहाहट होने लगी थी। पूर्व में उषा की लाली उभरने लगी थी।

"श्रीमती खन्ना मैं तुम से एक विनती करता हूँ वह यह कि तुम जो कहती हो ठीक कहती हो। वास्तव में मैं चरित्र से गिर गया, डिग गया, मगर मुझे क्षमा कर दो। यदि आज मेरी पत्नी होती तो मैं आज भी तुम्हारे साथ वही व्यवहार करता जो कुमारी किरन के साथ किया था। तुम जैसीं रूपसी और यह सुन्दर एकान्त सच मानो देवताओं को भी डिगा सकता है।"

"इस का यह मतलब हुआ कि तुम्हारी इतनी बड़ी ख्याति और मान प्रतिष्ठा केवल एक औरत की वजह से थी?"

"जी हाँ" हाथ जोड़ कर नेता जी ने स्वीकारा ।

"तो याद रखो एक औरत ही कल को तुम पर, बरसरे अदालत, तुम्हारी बात को खाक में मिलाने के लिये, धोखे से घर ले जाकर उसका शील भंग करने का मुकदमा दायर करेगी ।"

"श्रीमती जी" पैर पकड़ कर "मेरी आबरू के साथ तुम्हारी आबरू भी तो चली जायेगी । ऐसा मत सोचो ।"

"मेरी आबरू और एक एम० एल० ए० की आबरू में बहुत बड़ा अन्तर है नेता जी" स्वर में दृढ़ता लाते हुए बोली–

"श्रीमती जी गुस्से को थूक दो" हाथ जोड़ कर "ऐसी बातें सुन कर तुम को खन्ना जी घर से निकाल देंगे । मेरी पत्नी भी मुझे घर से तो क्या निकाल पायेगी मगर एक जी होकर न रह सकेगी और बुरा भला कहेगी । तुम्हारे ऐसा करने से दोनों परिवारों में कलह व्याप्त हो जायेगी । मैं कामांध था । नशे में था । भूल कर गया, भटक गया, तुम तो बुद्धिमती हो ऐसी भूल क्यों करती हो ? मैंने जो कुछ किया तुम्हारी अनिच्छा से किया । मैं बलात्कारी हूँ, पापी हूँ, दोषी हूँ । ऐसी स्थिति में स्त्री दोषी या कलंकित नहीं होती है । मेरी बात का ध्यान करो और भूल जाओ ।"

"सब सुन रही हूँ । कहते रहो ।"

"मुझे आगे कुछ और कहना नहीं है । इसी विनती को स्वीकार कर लो" हाथ जोड़ कर गिड़गिड़ाते हुये नेता जी बोले—

"नेता जी बुद्धिमान लोगों को ऐसी भूलें कभी नहीं करनी चाहिये, जिससे इतना प्रायश्चित करना पड़े" वह खड़ी होकर बोलीं ।

"कोई बुद्धिमान हो भी"

'अच्छा ऐसी ग़लती आयन्दा तो नहीं करोगे" मुस्कुराते हुए शपथ दिलाई ।

'जीवन भर के लिए इस घटना को सबक़ समझूँगा ।"

"अच्छाऽऽ" कह कर श्रीमती खन्ना बाहर सड़क पर निकल गयीं । मही पाल भी धीरे धीरे हाथ जोड़ते उसी के पीछे पीछे सड़क तक आ गये ।

''किसी से कुछ कह न देना। माफ़ कर देना।''

"मैं तो कह दूंगी" कहते हुये वह रिक्शे की तरफ बढ़ीं। पल भर को मुस्कराकर पीछे देखा और फिर बोलीं "अच्छा जाइए क्षमा कर दिया।"

"बस भूल ही जाना"

"मैं तो कह दूंगी" मुस्कुराते हुये उसने फिर वही शब्द दुहराये।

नेता जी ऊँचे हाथ उठाये, जब तक वह आंखों से ओझल न हो गई, खड़े ही रहे। उसकी हँसी आशाजनित आश्वासन का प्रतीक थी। जब भी कभी वह मिलतीं उसी बात को दुहरातीं और नेता जी हाथ जोड़ लेते।

* * *

“ मसोसा हुआ मन ”

“क्यों वेटा क्या लेगा ?” हाथ के संकेत से हलवाई ने दुकान के सामने खड़े एक निर्धन किशोर से पूछा ।

“रोटी ।” हाथ मलते हुए उसने कहा ।

“यह कोई होटल है ? यहां तो मिठाई मिलती है। जो जी में आये तुलवा ले ।” विकृत आकृति बना कर हलवाई बोला ।

“इसे तो पेट भरे लोग खाते हैं, भूखे नहीं ” किशोर ने कहा ।

“जा भाग यहां से, फ़िजूल की बातें मत कर । देखो भिखारियों के ढोंग । ज़रा ज़रा से वालकों को कैसी चालाकी आती है । डाड़ी है इनके पेट में डाड़ी ।” मुझे सम्बोधित करते हुए हलवाई ने कहा । वालक आगे वढ़ गया था । मैं हलवाई के शब्दों पर भी गौर कर रहा था और उस बालक की दयनीय दशा पर भी । मैंने आगे झुक कर देखा तो वह बालक दीवार से सिर टेके हुए कुछ सोच रहा था । मुझसे यह दृश्य देखा न गया और हलवाई से कहने लगा—

“लाला जी लड़का रो रहा है । शायद यह मुसीबत का मारा हुआ है और भूखा भी है । कभी कभी ऐसों का शाप भी लग जाता है । एक रोटी घर में से मंगा कर दे देते तो क्या हो जाता ? आख़िर खाना तो सभी खाते हैं । पैसे मांगने वाले मस्त होते हैं मगर रोटी मांगने वाले अवश्य भूखे होते हैं । भिखारी को रोटी देना वुरा नहीं होता है ।”

“हूँ” मेरी बात पर गहरी सांस लेते हुये लाला ने हुँकार भरी और आगे वोले “किधर खड़ा है ।” ढीली धोती को संभालते हुये वह आगे झुके और दुकान से वाहर झांकने लगे लेकिन गेंडे जैसी काया का संतुलन विगड़ गया और हाथ दही के कूंड़े में

छप्प से जा टिका, वरना पेड़ों के थाल में मुंह के बल गिरते । दही की छींटे मेरे कपड़ों पर भी आईं । मुझे हंसी आने को भी थी मगर मैने रूमाल से मुंह पोंछने के बहाने हंसी को छुपा लिया और उनके गिरने पर सहानुभूति दिखाता रहा ।

बालक आंसू पोंछ रहा था । लाला फिर अपनी गद्दी पर बैठ गये थे । उन्होंने अपनी आकृति ऐसी बना ली थी जैसे कि कोई बात ही नहीं हुई थी मगर मन में नुकसान की खीज उबल रही थी । मैंने लड़के को प्यार से इधर बुलाया । उसकी आंखें रोते रोते लाल टूल हो चुकी थीं और उनमें छलकते हुए बेजुबान आँसू कुछ कहते दिखाई दे रहे थे । जाड़े में वह नाकाफ़ी कपड़े होने के कारण कांप रहा था । मैंने उसे पत्थर की अंगीठी के पास बिठा दिया । अगर मैं म्यूनिसिपेलिटी का मेम्बर न होता तो वह लाला इतनी बात पर मुझे फटकार भी सकता था ।

उसने शीत से ठिठुरे हुये चन्दा सूरज जैसे हाथ आगे बढ़ा दिये थे । कालर और आस्तीनों पर चढ़ी मैंल की पर्तें यह ज़ाहिर कर रही थीं कि वह महीनों से नहाया धोया नहीं है और न ही उसके पास बदलने को कपड़े हैं ।

लाला ने नीचे से ऊपर तक फिर एक बार उस को देखा । लकड़ी की अलमारी के पीछे बैठी काग़ज़ की थैलियें बनाती हुई लालन ने भी उसे देखा ।

जब मेरी लालन पर नज़र पड़ी तो मैंने दोनों की आयु का मिलान किया तो बहुत बड़ा अन्तर दिखाई दिया, लालन एक दम जवान थी और लाला बूढ़ा सा था । मेरे मन ने एकदम मुझे टोका 'तू क्या लेता है इन बखेड़ों में' और मैंने कहा "क्यूँ बेटे तुम वास्तव में भूखे हो ?"

"जी हां मैं भूखा हूँ" वह बोला ।

"सुन ली लाला, अब तो कोई रोटी मँगा दो ।" यह सुन कर लाला को शर्म आई और पीछे मुड़ कर पत्नी को कुछ संकेत किया तभी लड़के ने कहा—

"मैं ऐसे कुछ नहीं खाऊँगा" यह शब्द कानों में उतरते ही हम तीनों चौंक पड़े । मैंने ही उस की सिफ़ारिश की थी इस लिए सब से पहले मैंने ही उससे कहा—

"और कैसे खायेगा ?"

"कुछ काम करने के बाद ।"

"कुछ काम करने के बाद ? हर शब्द पर लाला ने ज़ोर देते हुए कहा । वह

आगे बात जारी रखते हुये बोले "यानी तू हरामखोर भिखारी नहीं है ?"

'जी मैं हराम खोर भिखारी नहीं हूँ ।"

"क्या काम करेगा मेरे यहाँ ?" लाला ने सहानुभूतिपूर्ण नहीं बल्कि व्यंगपूर्ण लहज़े में पूछा ।

"मैं अपने काबू से भी अधिक काम कर सकता हूँ अगर कोई—" कहते कहरे वह ठिठक गया ।

"अगर कोई क्या, बात पूरी कर ।" लाला ने फटे बाँस की तरह बेसुरे ढंग से कहा ।

"अगर कोई बाप का प्यार दे सके तो ।"

कह कर वह चुप गया। मैं उसकी बात सुन कर एक उलझन में पड़ गया । अजीब लड़का था । मैं उस की बातों में दिलचस्पी लेने लगा । लाला ने नये ग्राहक को बताशे तोलने के लिए तराजू उठाई और बताशों की तरफ़ हाथ बढ़ाया । लाखों मक्खियां एक साथ भिनभिना कर उड़ीं, बताशे साफ़ दिखाई देने लगे । ऐसा मालूम होता है कि कोई देवता इधर आता ही नहीं है वरना मीठे से खुश न होता । पल भर को मेरे मन में ऐसा विचार आया और मैं कुछ मुस्कुराया तभी वातावरण अनुकूल न देख कर गम्भीर हो गया । कुछ देर लाला बताशों की मक्खियां उड़ाता रहा और फिर बताशे तोलने लगा । मैं इस बीच बालक का वाक्य मन ही मन दुहराता रहा'अगर कोई बाप का प्यार दे दे तो ।" लालन ने भी उसकी बात ग़ौर से सुनी थी। वह थैलियें बनाने से रुक गई थी । ग्राहक गया । लाला ने मफ़लर कसा और बालक की बातों में फिर रस लेने लगा । मैंने लड़के से पूछा "बेटा तेरे बाप का क्या नाम है ? कहां रहता है ? जब तक तू किसी को अता पता नहीं बतायेगा तब तक तुझे कौन काम पर रख लेगा ।"

"और क्या नहीं ।" लाला ने कहा "इतने पर भी जमानत चलती है ।"

"शायद उसे मेरी बात ठीक लगी थी । उसने दोनों दिये से हाथों को आगे बढ़ाया और तापते हुये कहा "जब मैं तीन साल का था तब मेरे पिता बिजली का फिटिंग करते थे । दो आदमियों ने बदमाशों से अपनी अपनी मांगें पूरी कराने के लिये रक़म तै की । एक आदमी सन्तानहीन था और धनी था दूसरे के घर में औरत नहीं थी । सुन रहे हो लाला जी ।"

"सुन रहा हूं" लाला ने भवों पर बल डालते हुये कहा ।

“दोनों बदमाश आपस में मिल गये, एक ने मेरी मां को और दूसरे ने मुझे उड़ाने की जुगत लगाई। एक मेरे पिता को बिजली के फ़िटिंग के बहाने ले गया और वहीं उनका वध कर दिया। उनकी लाश का आज तक पता नहीं चला। इसके बाद उन्होंने मेरी माँ को घर से बाहर बुलाने की चाल चली” कहते कहते लड़का सुस्त हो गया। मैं ने पूछा—

“क्या चाल चली?”

“वह मेरी माँ को एक पड़ोसन के घर एक निश्चित स्त्री द्वारा ले गये बहाना यह था कि बच्चा हो रहा है जब तक दाई न आ जाये तब तक वह उस के पास बैठी रहे। प्रसव के दर्द हो रहे हैं। माँ सीधी साधी थी चली गई। एक आदमी उसके पीछे मुझे भी यह कह कर लिवाले गया कि तेरी मां चौक में कुयें पर तुझे बुला रही है। अगर माँ मुझे छोड़ कर न गई होती तो मैं अपनी माँ से जुदा न होता मगर उसने वहां ले जाना मुनासिब न समझा, सोचा होगा ज़रा देर के लिए वहां क्या ले जाये? उस व्यक्ति के हाथ में एक कटा हुआ मुर्गा था और उससे ख़ून टपक रहा था यह मुझे अभी तक याद है। उसका ख़ून फर्श पर ही नहीं मेरे पलंग पर भी टपक रहा था। उसने मुझे रास्ते में कुछ खिलाया। मुझे नींद आ गई और जब आँख खुली तो मैंने खुद को एक शर्राफ के शानदार मकान में पाया।

जब माँ आई और उसने ख़ून की बूदें देखीं तो वह समझ गई कि मुझे भेड़िया ले गया है। वह ज़ोर ज़ोर से चिल्लाई और बाहर कहती हुई भागी मेरे लाल को भेड़िया ले गया। मेरे लाल को भेड़िया ले गया’ यह चीख़ पुकार सुन कर पड़ोसी इकट्ठे हो गये मगर जंगल की तरफ भय के मारे कोई भी साथ जाने को तैयार न हुआ। उसी भीड़ में से एक व्यक्ति लाठी लेकर आगे बढ़ा और उसने माँ का साहस बढ़ाया, ढारस बन्धाया तथा जंगल तक जहां जहां खून की बूँदे पड़ी दिखाई देती गईं उधर ही को वह चलता चला गया। माँ भी उसके पीछे पीछे चली गई। जंगल में जाकर वही व्यक्ति मेरी माँ का भी भेड़िया बन गथा, आज तक वह घर वापस न आ सकी। अब वह कहां है? है भी कि मेरे ग़म में और पिता जी के वियोग में अपनी जान दे चुकी है ईश्वर जाने। अब मेरा कोई भी नहीं है। कोई मेरा मकान नहीं हैं।

जिस निःसन्तान ने मुझे उठवाया था और मेरी माँ की गोद सूनी की थी उसने भी मुझे प्यार नहीं दिया चूँकि कुछ सालों बाद उसकी पचास साल की बहू ने एक लड़के को जनम दे दिया और मुझे हारे हुए प्रधान मन्त्री की तरह राज महल से बाहर निकाल दिया गया। अब मैं काम करके रोटी खाऊँगा, भीख मांग कर नहीं। मैं भिखारी बन कर अपने माँ बाप के नाम को बट्टा नहीं लगाऊँगा।

"अरे लालन तुम कांप क्यों रही हो, अरे रो भी रही हो, ऐसा भी क्या पर्दा ? बाहर आकर ताप लो, बेकार जाड़े में सीज रही हो । ठन्ड तो सभी को लगती है, थैलियें तो धूप में बैठ कर भी बना सकती हो ।" कहते हुए लड़के ने गर्म गर्म हाथ चेहरे पर फेरे । मैं ने उस से पूजा —

"जव तुम तीन साल के थे तो यह तमाम बातें कैसे याद रह गई ?"

"बस्ती के लोगों ने सब कुछ वता दिया है बाबू जी । जिन बच्चों को गोद लिया जाता है उनको भी तो अपने असली मां बाप का नाम मालूम हो जाता है जब कि वह बिलकुल ही अबोध होते हैं । सत्य कहीं नही छुपता है ।" दामन को घुटनों तक खींचते हुए उसने फिर आगे कहा—

"अब में कितना बदनसीब हूँ न माँ की ममता न बाप का प्यार प्राप्त हुआ । न कोई यार न मददगार" कहते कहते वह आँखों में आंसू भर लाया । लाला जी गम्भीर मुद्रा में ऐसे सोच रहे थे जैसे इस घटना से उन्हें हार्दिक ग्लानि हुई है । लालन उठी और उसे सी ने से चिपटाते हुये कहने लगी—

"बेटा खून के प्यासे दानवों ने तेरे पिता को मौत के घाट उतार दिया । वास्तव में तुझे उनका प्यार नहीं मिला । मगर मैं तुझ को माँ का प्यार देने को तैयार हूँ । मेरे तपते हुये जीवन में तू स्वांति का बादल बन कर आया है । मेरी अन्तिम इ री हो गई ।"

बालक लालन की बातों को दिखावटी सहानुभूति और बनावटी सौहार्द समझ कर मुंह ताकता रहा । उसी समय दो छोटे छोटे बच्चे लालन की मैली धोती से आकर चिपट गये ।

मैंने लाला का चेहरा देखा तो ऐसा मालूम होता था जैसे लाला ही सर्राफ़ का दूसरा रूप थे । उनका चेहरा विकृत था । उन का मन भय, क्रोध और शंकाओं का केन्द्र बना हुआ था । वह सन्देहास्पद बालक इस व्रणित वातावरण से नैराश्य की घुटन सीने में छुपाये आगे चला गया । उसने चलती बार नमस्ते की परन्तु लाला मन्दिर की मौन प्रस्तार मूर्ति की भांति कुछ न बोले । हां लालन की सुबकियां बन्द नहीं थीं । क्यों ? इसका जवाब मुझे नहीं मिला था । मुझे कभी कभी ऐसा लगता है कि लालन अब भी रो रही है और वह बच्चा मुड़ मुड़ के देखता आगे बढ़ता चला जा रहा है ।

●

“ मुँह की निकली ”

“यह कौन बदतमीज़ है जो ज़न्जीर खटखटाये जा रहा है ? किसी के द्वार पर आवाज़ देकर या ज़न्जीर खटखटा कर जवाब का इन्तिज़ार तो करना चाहिए” कहता हुआ रघुवर बीमार रूपा की चारपाई से उठा और किवाड़ें खोलीं “अरे लल्लू तुम थे। राम राम” स्वर में विनम्रता लाते हुये बोला” क्या ड्यूटी का समय हो गया ?”

“देखते नहीं पौने सात हो रहे हैं” घड़ी आगे करते हुये मित्र ने उत्तर दिया और द्वार वार के नाई की तरह जल्दी जल्दी रघुवर अन्दर गया। लल्लू वहीं खड़ा रहा और बीड़ी पीता रहा।

“क्या बात है ?” जानते हुए भी पत्नी ने प्रश्न उछाला। खामोशी के साथ उसने आंखों से ऐसा इशारा किया कि वास्तविकता को समझने में देर न लगी। दोनों ड्यूटी पर जाने की बात रूपा से छुपाना चाहते थे।

“बेटी मैं तेरे लिए दूध ले आऊँ। घरबाना मत मैं बहुत ही जल्दी आऊँगा” बुखार से तपते हुये शरीर पर हाथ फेरते हुये, रघुवर ने ममता से कहा।

“पिता जी तुम झूठ बोल रहे हो। तुम नहीं आओगे। रात भर कोयले की खान में काम करोगे और रोज़ की तरह दिन निकले ही आओगे।”

“नहीं मेरी बेटी मैंने छुट्टी ले रखी है। मैं ड्यूटी पर नहीं जाऊँगा। अपनी बेटी रूपा के पास ही रहूँगा।”

“तो पिता जी आज के पैसे नहीं मिलेंगे” बुखार की तेज़ी में चारपाई की पट्टियों पर हाथ पैर पटकते हुए उसने कहा।

"मिलेंगे क्यों नहीं वेटी ?"

"विना काम किये पैसे कैसे मिल जायेंगे" कह कर रूपा ने ख़ुश्क होंठों पर जुवान फेरी।

"नहीं रूपा, ऐसा है……" रघुवर की पूरी वात सुने बिना ही उसने कहना शुरू कर दिया। "अम्मा मेरी टांगें दवा दो बड़ा दर्द हो रहा है।" अवाक खड़ा रघुवर देख रहा था और कुछ सोच रहा था। दम भर में कुछ सोचा विचारा और वेटी को पीठ देकर चल दिया। उसकी बातें छाया की भांति पीछा करती रहीं। रघुवर के पैर मन मन भर के हो रहे थे। रूपा जाते हुए रघुवर को दरवाज़े तक टकटकी वांधे देखती रही। उसका चहरा बुखार से तमतमा रहा आ। आंखें लाल हो रहीं थीं। माँ भी वेटी को टुकुर टुकुर देख रही थी। रघुवर आंखों से ओझल हो गया।

"पेट पालने के लिए हम लोगों को कितनी महनत करनी पड़ती है। वीमार वच्चों की देख भाल भी नहीं कर सकते। वाप को वेटी से झूठ बोलना पड़ा। आज काम पर क्या मन लगेगा, दिल तो यहां पड़ा रहेगा" मन ही मन माँ सोच रही थी कि रूपा फिर बोली—

"अम्मां एक दिन तुम ने कहा था कि दूध वीमार पीते हैं। अच्छे रोटी खाते हैं। लो आज तो मैं वीमार हूँ। दूध पिला दो मुझे। वड़ी भूख लगी है।" रूपा ने मौन भंग किया और पेट पर हाथ फेरती रही।

"अच्छा मेरी लाड़ली मैं अभी लाती हूँ" कह कर माँ ने उसके सिर पर हाथ फेरा और कुछ सोचा। इसी बीच मजबूरी और वेवसी की स्थिति में दो आंसू टपक कर उसके होंठों पर गिर पड़े। रूपा ने जुबान होंठों पर घुमाई। उसका मुंह वजाय मीठा होंने के नमकीन हो गया। भगवान आदमी की चाह के खिलाफ़ ही करता है।

वह उठी मगर दो पैर रख कर ही ठिठक गई जैसे कि निर्धनता का नाग उसके सामने पड़ा था। उसके ध्यान में आया कि घर में पांच ही रुपये थे उनको रघुवर दूध लाने के लिए साथ ले गया था। इस ज़माने में आता ही क्या है नोट का सिर फूटा और खर्च हुए। कल को दवा दारू कहां से आयेगी ? इस तरह सोचते सोचते उसका सिर चकराया। अव रूपा के सामने क्या मुंह लेकर लौटे। दूध ले जाने की वात तो समाप्त हो गई। तभी पीछे से आवाज़ आई—

"अम्मा तुम मेरे पास से उठेकर कहीं भी मत जाओ। तुम्हारे जाने से मुझे परेशानी होती है। मेरा दुख और वढ़ता है। मैं भूखी ही पड़ी रहूँगी, यों ही रात

कट जायेगी। भूखे रह कर या आधे पेट खाना खा कर पहले भी तो हम तुमने अनेकों रातें काटी हैं। और रात ही रात में बुखार उतर गया तो सुबह को पिता जी के साथ खाना खाऊँगी। फिर तुम मुझे दूध नहीं पिलाओगी कहोगी अच्छे आदमी तो रोटीं खाते हैं।" यह सुन कर वह लौट आई और इस तरह उसकी विनती ने माँ की विवशता की लाज रखली। उसने माँ की गर्दन में हाथ डाल दिये। बुखार से गर्म हाथ जेठ की लुओं की भांति गले से लिपट गये।

"हां बेटी भगवान मालिक है। ईश्वर करे कि तुम सुबह तक ठीक हो जाओ। मैं तुम्हें दूध भी पिलाऊँगी और खाना भी खिलाऊँगी।"

"अम्मा तुम्हें दूध मोल लेना पड़ता है तुम गाय या भैंस पाल क्यों नहीं लेतीं ?"

"बेटी मैं अकेली हूं जब तुम बड़ी हो जाओगी तब भैंस ले लूँगी। उसके बड़े काम हैं। खोलना, बांधना, खिलाना, पिलाना, दूध दुहना, मथना आदि। तुम्हारे बड़े होने पर यह काम हल्के हो जायेंगे" अपनी निर्धनता वश भैंस न लेने की मजबूरी को गुप्त रखते हुये माँ ने कहा और अपनी लाचारी तथा लड़की के भोलेपन पर आंसू भर लाई। उसको रोते देख कर रूपा ने कहा–

"अरे तुम तो रो रही हो। रोना तो मुझे चाहिये तुम क्यों रो रही हो ?" यों कह कर उसने फिर हाथों पैरों को चारपाई पर पटका।

"मुझे भी एक दुख है।" आंचल से आंसू पूंछते हुये माँ ने कहा और उसकी टांगें दबाने लगी। आंसू फिर भी आये चले जा रहे थे। रूपा उस का मुंह देख रही थी और सोच रही थी कि मां को क्या दुख है जो रो रही है। वह बेचारी मां के दुख का कोई अनुमान नहीं लगा सकती थी। निर्धनता, साधनहीनता, इकलौती लड़की का बीमार पड़ना। यह भी महान दुख थे जिन की कोई दवा उसके पास नहीं थी। रूपा ने कुछ देर रुक कर माँ से कहा–

'अम्मा उस रोज़ जब रावन का मेला होने वाला था पिता जी डबल ड्यूटी करके बीमार पड़ गये थे तो मैं उनके पास खड़ी खड़ी यह सोच कर रो रही थी कि मेला कौन दिखायेगा। मगर तुमने मुझे डाटा था कि बीमार की चारपाई के पास रोना नहीं चाहिए। यह असगुन होता है। आज वही काम मेरी चारपाई के पास क्यों कर रही हो ? क्या तुम मुझे पिता जी के बराबर नहीं चाहतीं ? अरे ठीक है। मुझे याद आया। सचमुच तुम मेरा मरना ही चाहती हो। जब मैं कोई शरारत करती थी तो पिता जी कहा करते थे, रूपा। मैं तुझे गला काट कर गडढे में दबा दूँगा। बहुत शोर करती है। जब वह ऐसी बातें करते थे तो तुम हंस दिया करती

थीं इसका यह मतलब हुआ कि तुम भी मेरा मरना चाहती थीं नहीं तो उनको डाँट न देतीं। बस मैं जान गई तुम यों ही रो रही हो। तुम दोनों मेरा मरना चाहती हो। वस अव मैं मर जाऊंगी। मुझे गड्ढ़े में दवा देना। देखो गला मत-" रूपा इतना ही कह पाई थी कि मां ने उसका रूपये सा मुंह हाथ से बन्द करके प्यार से समझाया—

'वेटी अभी तू वच्ची है। जानती नहीं है। लड़कियों से प्यार में ऐसे ही कह दिया करते हैं। कोई अपनी औलाद को मारना चाहता होगा ?"

"क्या प्यार में ऐसी वुरी वातें भी कही जाती हैं ?" वुखार की तेज़ी में कांपते हुये रूपा ने कहा।

"यदि तुझे प्यार न करते तो देखती नहीं वह तेरे बिना खाना भी नहीं खाते। कहते हैं रूपा को साथ बिठाये वग़ैर पेट नहीं भरता। कभी कभी तू रुठ जाती है तो कहते हैं रूपा नहीं खायेगी तो मैं भी नहीं खाऊँगा।"

"अम्मां अगर मैं मर गई तो वह खाना खाना छोड़ देंगे ?"

"चुप। ऐसी वातें नहीं करते हैं।" माँ ने सख्त होकर कहा। कुछ देर को दोनों चुप हो गयीं और अपनी अपनी जगह कुछ सोचती रहीं जैसे रनवे पर जाने से पहले जहाज़ चुप खड़े होते हैं। रूपा की भोली भाली वातें दिल हिला रहीं थीं। माँ को उसका चुप भी अप्रिय लग रहा था। माँ उस का चहरा देख रही थी कि वह वुरा तो नहीं मान गई है। रूपा ने भी मां का चहरा उसी तरह देखा कि कहीं वह और डांटने वाली तो नहीं है। माँ मुस्करा दी "क्यों वेटी पानी पियेगी ?"

"नहीं माँ" पेट पर हाथ फेरते हुये रूपा ने कहा। मां ने सोचा कि डांट के भय से वह अपनी हार्दिक व्यथा प्रकट करना नहीं चाहती है परन्तु भूखी है। वह उठी जैसे कि भूख को शांत करने के लिए उसको कुछ याद आ गया था। रघुवर की चाय से वचा हुआ गुड़ जिसके चारों तरफ़ चींटे इकट्ठे हो गये थे और मिल मिल कर उसे खाये जा रहे थे, उठा कर साफ़ करके ले आई और रूपा को दे दिया "ले रूपा इसे खाके पानी पीले फिर तेरे पिता जी दूध ले आयेंगे। दूध तो मैं भी ले आती मगर रात है और तू अकेली है" आकाश को झांकते हुए उसने वात वनाई।

"अम्मा अव मेरा काम हो गया। तुम कहीं मत जाओ। रात भर भूख नहीं लगेगी। मैं इसी तरह रात बिता दूंगी" गुड़ देख कर रूपा खुश हो गई जैसे रईस की कुतिया दूध जलेवी देख कर खुश हो जाती है। वह खा पी कर लेट गई और सो गई। माँ तेज वुखार में सिर दवाती रही और उसके ठीक होने की भगवान से दुआ करती

रही। हर बेवस भगवान ही को याद किया करता है। कुछ देर को न जाने क्या क्या सोच विचार में लीन हो गई थी कि रूपा ने करवट बदली। मां फिर विचार विमुक्त हो कर उसको देखने लगी। उसने सोचा कि विचारों में लीन होने के कारण हाथ ढीले हो गये हैं शायद इसी लिए वह करवट बदलने लगी है। यह सोच कर उसने फिर ज़ोर ज़ोर से दबाना शुरू कर दिया। कभी कभी वह सोचती थी कि यदि उसको अपनी जान देकर भी बेटी की जान बचाई जा सके तो वह बाबर की तरह उसके पलंग पर लेट जाए मगर आत्मा की गहराई से कोई कहता पगली मत बन। गरीब की तो भगवान भी नहीं सुनता है।"

कुछ दूर जा कर रघुवर को याद आया कि वह घर से उस पांच रुपये के नोट को भी साथ ले आया है जिसको रूपा के दूध और चीनी के लिए घर छोड़ आना चाहिए था। वह रात भर भूखी ही पड़ी रहेगी। बहू के पास कानी कौड़ी भी नहीं है। बच्ची के लिए कैसे कुछ लायेगी ? यह सोच कर उसके क़दम भारी हो गये, धीमे पड़ गये जैसे हज करने जाते समय किसी प्रिय जन की याद आने पर जिससे वह मिल न पाया हो। लल्लू ने इसका कारण पूछा तो उसने सब कुछ सुना दिया।"यार तेरी बहू बड़ी होशियार है वह कुछ न कुछ जुगाड़ ज़रूर कर लेगी तू बेकार चिन्ता करता है" लल्लू बोला "जल्दी चल, देर हो गई ग़ैर हाज़िरी हो जायेगी। टाइम कीपर बड़ा सख़्त है।"

"सब कुछ सही है, लेकिन दोस्त ग़रीबी में सारी होशियारी रखी रह जाती है।" यों कह कर रघुवर कुछ तेज क़दमों से चल पड़ा जैसे तूफ़ान की सम्भावना होने पर भी मल्लाह भगवान के सहारे पर साहिल से कश्ती ले चलता है।

"रघुबर हमारे देश में ग़रीबी बहुत ही अधिक है।"

"लल्लू हमारे देश की ग़रीबी आसानी से दूर भी नहीं हो सकती, हालांकि सरकार इसको दूर करने के लिए प्रयत्नशील है। लेकिन वह आसानी से सफल नहीं हो सकेगी।"

"क्यों ? सरकार चाहे तो सब कुछ हो सकता है।"

"निरे सरकार के चाहे से ही सब कुछ नहीं होता है लल्लू। जहां तक देश की ग़रीबी दूर करने का सवाल है इसके लिए कई चीजों का उन्मूलन करना होगा जैसे आपसी फूट, भाषा विवाद, अराष्ट्रीय तत्व, राष्ट्रीय भावना की न्यूनता, जातीय झगड़े, घुसपैठियों के षड्यन्त्र–पूंजीपतियों और जमाखोरों तथा मुनाफ़ाख़ोरों पर अनियन्त्रण आदि। इन सबकी समाप्ति पर देश की ग़रीबी मिट सकेगी। अनेकों समस्यायें देश

की खुशहाली में बाधक बनी हुई हैं। कोई भी समस्या हो कश्मीर की समस्या बन जाती है।"

अरे यार छोड़ो तुम ने तो नेताओं की तरह व्याख्यान शुरू कर दिया, एफ० ए० पास ही जो ठहरे। मैं तो अनपढ़ हूँ और इतना ही जानता हूँ कि यहां की ग़रीबी कभी खत्म नहीं होगी। कुछ लोग कोशिश भी करें तो कहीं एक चने से भाड़ फूटता होगा। हमें तो तीन सौ फुट गहरी खान में काम करना है सो करते चलें, राजनीति से हमें क्या मतलब ? हमें तो पेट भरने की बात सोचनी चाहिए। इसके अलावा कुछ सोचा तो दीन के रहेंगे न दुनिया के, समझे।" इस प्रकार दोनों बातें करते करते काम तक पहुंच गये। नम्बर उठाये और अजदहे की भांति मुँह फैलाये खान के अन्दर सरक गये।

रात के बारह बजे रूपा की आंखें खुलीं। उसने हड़बड़ा कर कहा—

"अम्मा पिता जी दूध ले आये हैं, ला पिला दे।"

"बेटी अभी तेरे पिता जी नहीं आये हैं तूने सपना देखा होगा।"

"सपना ऽऽ। क्या यह सपना पूरा नहीं होगा ?"

"बेटी सपने तो सपने ही होते हैं। यह पूरा होना कहां जानते हैं, मगर तुझे दूध मिलेगा।"

"जब सपने पूरे नहीं होते तो दूध कैसे मिलेगा ?"

"अरी पगली वह दूध लेने तो गये ही हैं। आते ही होंगे" ड्यूटी की बात छुपाते हुए रूपा की मां ने कहा। वह लोरियां देने लगी ताकि सुबह तक के लिए वह सो जाये। मगर जरा देर को अच्छा कह कर फिर उठी और बोली—।"

"अम्माँ तुम झूठ बोलती हो। पिता जी रोज़ की तरह ड्यूटी पर गये हैं। वह सुबह को आयेंगे। दूध लेने जाते तो अब तक आ न जाते। अगर मैं रात में मर गई तो वह मझे नहीं मिल पायेंगे। चलो कोई बात नहीं वह दूध तुम दोनों बांट कर पी लेना। क्यों अम्मा वह मेरे मरने के बाद किस के साथ खायेंगे ?" रूपा ने बड़ी शीघ्रता से वाक्य पूरा किया।

"बेटी तू ऐसी बातें क्यों करती है। भला बुखार किसको नहीं आता है। सब ठीक हो जाते हैं। तू भी ठीक हो जायेगी।"

"अम्मा सब का इलाज होता है। दवा खाते हैं। तभी तो ठीक हो जाते हैं तुम ने मुझे दवा कहां खिलाई है ?

"रूपा तू बोले ही चली जायेगी ? मैं कहती हूँ सो जा। मुझे तेरा बोलना बुरा लगता है। दिन निकलेगा तो दवा भी ला दूँगी।"

"अम्मां तुझे मेरा बोलना बुरा लगता है तो ले मैं बोलूँगी ही नहीं।" रूपा करवट ले कर ऐसे लेट गई जैसे बोलना न बोलना सब उसके काबू में है। वह बेचारी यह तो जानती ही नहीं थी कि मां ने झुंझला कर ऐसा कहा है। अब की बार मां भी बेटी की बात का मतलब नहीं समझ पाई।

माँ अपने नीरस निष्ठुर वाक्य पर पछताती रही और सोचती रही कि यदि वह तनिक भी बोलने लगे तो वह सब से पहले उस के दिमाग़ से नाराज़गी की भावना निकाल दे। प्यार से बेटी बेटी कहे। मगर वह सो गई थी। बिलकुल नहीं बोली। पांच बजे तक उसने आंख नहीं खोलीं। कभी कभी बड़बड़ा तो देती थी।

मां अपनी आंखों को मलती हुई ऊँच नीच सोचती रही। दिन निकलने के आसार नज़र आने लगे। चिड़ियों की चींचीं, अज़ानों का शोर, शंखों की गूंज, रिक्शों तांगों की खड़ खड़ भोर होने का ढिंढोरा पीट रहे थे। मगर उसकी चिड़िया अभी मौन पड़ी थी। उसी समय दरवाज़े पर एक कार आकर रुकी। माँ चौंक गई और धड़कता हुआ दिल लिए हुए यह सोचती हुई दरवाज़े की तरफ़ बढ़ी कि उसके दरवाज़े के सामने आज तक कभी कार नहीं रुकी, यह अनहोनी कैसे हुई ?

कार की आवाज़ से रूपा की आंखें खुल गईं थीं। इस समय उसकी आधी सासें आ रही थीं जो मरने वाले को आती हैं। बुख़ार बजाय कम होने के और भी बढ़ गया था। उसने द्वार की तरफ़ भागती हुई मां से कहा—

"अम्मां मैं जाग रही हूँ तुम मुझ को छोड़ कर कहीं मत जाओ। तुम्हारे जाने से मेरा दुख बढ़ता है। तुम मुझ से नाराज़ हो या मेरे बोलने से।"

रूपा के यह शब्द मां के कानों में उतरते चले जा रहे थे और क़दम आगे बढ़ रहे थे। मां की बढ़ती हुई बेचैनी और घबराहट सीमा पार कर रही थी रूपा ने घर में स्वयं को अकेली देख कर भय के मारे कपड़े से मुंह ढक लिया। मां ने दरवाजा खोला तो चीख़ निकल गई। रूपा ने फिर मुंह उघाड़ा, अन्धेरा कम था। सूरज निकलने ही वाला था। उसे मां की चींख तो सुनाई दी मगर दिखाई कुछ नहीं दिया उसने ज़ोर से कहा—

हाय मेरी मां को डाकू पकड़ कर ले जा रहे हैं। कोई छुड़ाने वाला भी नहीं है। पिता जी होते तो यह कुछ नहीं होता। मैं ठीक होती तो चीमटे से खाल उधेड़ देती। हाय मैं क्या करूँ? अब तो मैं मर जाऊँगी, ज़रूर ही मर जाऊँगी।" कहते कहते रूपा चुप हो गई। रघुवर की लाश लाकर आंगन में रख दी गई। किसी घुसपैठिये ने गोला रख कर खान को उड़ा दिया था। तीन सौ सत्तर मज़्दूरों में से अधिकांश मर चुके थे। कुछ घायल थे जो मौत की गोद में तड़प रहे थे।

इतनी चीख़ पुकार शोरोगुल में भी रूपा चुप थी। मां उसके पास गई और उसे झंझोड़ते हुए बोली "रूपा देख ले कमबख़्त तू नहीं मरी, तेरे पिता जी दुनिया से चले गये। तेरे मुंह की निकली सच हो गई।"

"काफ़ी हिलाने पर भी वह कुछ न बोली। उसकी जुबान तो नहीं उसकी आत्मा कह रही थी कि रूपा भी अपने पिता के साथ ही साथ दुनिया से चली गई है। मां रोती जाती थी और रघुवर की जेब में पांच का नोट तलाश करती जा रही थी।

* * *

" इन्सानियत का खून "

"क्या गाना पसन्द आ रहा है जो इतनी तनमयता से सुन रहे हो ?" बीना ने कहा ।

"यह गाना ही ऐसा है" बलराम ने अपनी पत्नी को उत्तर दिया ।

"इस में क्या खास बात है ?" भोले पन से पूछा ।

"तुम अभी तक यही नहीं समझीं ? ज़रा सुनो।" रेडियो बन्द करके वह बोला "घर में हों दो सुन्दर फूल । इस से आगे करें न भूल ।" गीत की दो पंक्तियां सुना कर उसका हाथ पकड़ के चूमा "ठीक है ना ?"

"ठीक है" मुस्कराते हुये बीना ने कहा और हाथ अपनी तरफ़ खींचा ।

"हाथों से हाथ छुड़ाने वाला दिल से छुड़ा कर नहीं जा सकता ।"

"आप तो ऐसी ही बातें करते रहते हैं, यह नहीं सोचते कि पाँच वर्ष का टीटू घर में घूमता फिर रहा है । वह देख लेगा तो क्या कहेगा" बीना ने इधर आते हुये टीटू की तरफ संकेत करते हुए कहा । बलराम कुछ कहने ही को था कि टीटू ने प्रश्न किया ।

'क्या बिजली चली गई पापा जी ?"

"बिजली चली जाती तो बत्ती कैसे जलती बेटा" बल्ब की तरफ़ संकेत करके बलराम ने कहा ।

'रेडियो क्यों बन्द कर दिया ?"

"बिजली कम खर्च करने की बजह से" यों ही बिना सोचे समझे टीटू से कहा। वीना दोनों की बातों में रस ले रही थी। टीटू मां की तरफ़ बढ़ा और मां के घुटने पर साड़ी की सलवटें ठीक करते हुए बोला– "मम्मी यह रेडियो कहां से आया है ?"

"तुम्हारे पिता जी की ससुराल से।"

"उस समय मैं कहां था ?" मां की ठोड़ी पकड़ते हुये कहा।

"उस समय तुम डैडी के पास थे। टीटू तुम जानते हो रेडियो में कौन बोलता है ?" बच्चे का ध्यान पेचीदगी की तरफ़ से हटाते हुए कहा—

"आप ने कभी बताया ही नहीं।"

"यह आदमियों की आवाज़ है ना ? इस में आदमी बोलते हैं।"

"इस छोटे से बक्से में आदमी कैसे आ जाते हैं ?"

"मशीन से छोटा कर दिया जाता है उन्हें।"

"यह जीते कैसे हैं आप तो कभी इन्हें खिलाती पिलाती भी नहीं।"

"यह लोग बिजली से पेट भर लेते हैं। देखो नीटू भूखा है उसका निपल और शीशी ले आओ" सही बात न समझा सकने की विवशता के कारण वीना ने टीटू का ध्यान फिर दूसरी तरफ़ मोड़ा। उसके चले जाने पर बलराम ने कहा–

"यह बड़ा होनहार होगा। अभी से ऐसी बातें करता है कि हम लोग उत्तर भी नहीं दे पाते।"

"मुंह बन्द करो ऐसी बातें नहीं करते हैं। बच्चे को टोक लग जायेगी।"

"ठीक है। हां वीना तो क्या खयाल है इस बारे में ?"

"काहे के बारे में ?"

"वही बात। तुम्हारे घर में दो सुन्दर फूल हैं आगे ऐसी भूल मत करना।"

"यह मुझ से क्या कह रहे हो ? इस खता में तो हम और आप दोनों ही बराबर के साजीदार हैं। अकेली मुझ ही को दोषी क्यों ठहराते हैं।" वीना ने इतना ही कहा था कि टीटू निपल ले आया और मेज़ पर रखते हुए बोला—

"पापा जी कल की बात याद है। आप ने बाज़ार से गाजर का हलुआ लाने को कहा था। आज लाओगे क्या ?"

"हां बेटा कल कहा तो था मगर मैं भूल गया, लो अभी लाता हूं। ज़रा झोला देना। जहां एक आदमी को पत्नी के लिए अच्छा पति, बाप के लिये अच्छा बेटा बहिन के लिए अच्छा भाई होना आवश्यक होता है वहीं औलाद के लिये उसे अच्छा बाप भी होना जरूरी है" वह बोला। बीना ने थैला लाकर दे दिया। वह बाज़ार चला गया। इधर टीटू दो प्लेटें दो चम्मचें लेकर तरतीब से रखने लगा।

" यह क्या कर रहे हो टीटू" मां ने प्यार से कहा।

"पापा जी हलुआ ला रहे हैं ना, इसलिये पहले से ही मैं अपने और नीटू के लिए प्लेटें और चम्मचें लाकर रखे लेता हूँ।"

"मेरी और अपने पापा की प्लेट चम्मचें क्यों नहीं लाये ?'

"ओ हो यह तो भूल ही गया। अभी लाता हूँ मम्मी" यों कह कर टीटू अन्दर चला गया और बर्तनों की टोकरी में प्लेटें चम्मचें ढूढ़ने लगा। इसी बीच एक रिक्शे वाले को सड़क पर यों कहते हुये बीना ने सुना—

"हिन्दू मुस्लिम फिसाद हो गया हिन्दू मुस्लिम ?"

जैसे ही बीना को भनक पड़ी वह बाहर भागी और रिक्शे वाले को रोका।

"ओऽऽ रिक्शे वाले ठहरिये" सवारी समझ कर वह पीछे को मुड़ा—

'कहां चलना है बहिन जी ?"

"ज़रा यह तो बताओ कैसा फ़िसाद हो गया ? कहां हुआ ? क्या हुआ ?"

"बहिन जी मेरी देखी हुई बात है। मैं एक मुसलमान हलवाई की दुकान पर खड़ा खड़ा बीड़ी सुलगा रहा था। उसी समय एक बाबू जी उधर से गुजरे। ईश्वर जाने उस हलवाई ने जान कर या अनजाने में कढ़ाई में ऐसी पूड़ी डाली कि खौलते हुये तेल की छीटें उन पर जा पड़ी। उन्होंने बिगड़ कर कहा—

"आज ही काम करने बैठे हो क्या ? ज़रा होश सम्भाल कर काम किया करो।" बेचारे बाबू ने बुरा भी क्या कहा था मगर उसने यह कहते हुए उसके ऊपर कर्छली से तेल और उछाल दिया "होश सम्भाल कर काम नहीं करते हैं तो और ले।"

बाबू जी बुरी तरह जल गये और लगे कछुँली छीनने। दोनों गुत्थम गुत्था हो गये। आसपास के मुसलमानों ने पूछा गछा तो कुछ नहीं इस्लाम खतरे में है के नारे लगा दिये और सब एक पर टूट पड़े। बेचारे को सब ने पकड़ कर सिर की तरफ़ से धधकती हुई भट्टी में झौंक दिया। मैं बीड़ीं फेंक फांक इधर भाग आया। किस की मजदूरी? कैसी सवारी?" रिक्शे की सीट पर बैठते हुए उसने कहा।

"उस की शर्ट पेन्ट किस रंग की थी?"

"खाकी, सफ़ेद" रिक्शा चलाते हुए उसने बहुत संक्षेप में कहा।

"यह सुनते ही बीना का माथा ठनक गया। उसके जिस्म में काटे खून नहीं रहा। वह पल भर को कुछ सोच कर रुकी और दरवाजे की तरफ़ बढ़ी। आगे से कुन्डी लगा दी और घटना स्थल की तरफ़ भागी। अभी कुछ हीं दूर चली थी कि एक तंग गली में दो मुस्टन्डों ने उसे हाथों हाथ उठा लिया और एक मकान में अन्दर ले गये। अबला की चीख़ पुकार सुनकर वहीं एक मकान में रह रहे हाजी जी बाहर निकल आये। जब उन्होंने यह अशोभनीय कुक्रत्य देखा तो पीछे से हाथ उठाये हुये कहने लगे।

"अरे कमबख़्तों इसे छोड़ दो। खुदा के वास्ते छोड़ दो। देखो एक औरत पर उठने वाले हाथ दस्ते ग़ाज़ी नहीं कहलाते हैं। क्यों पैगम्बरे दीन को बदनाम करते हो? क्यों अज्मते इस्लाम के माथे पर कलंक लगाते हो? यह किसी इन्सान का ख़ून नहीं कर रहे हो बल्कि इन्सानियत का ख़ून है। रुहानियत का खून है। वहदानियत का ख़ून है।" 'पीछे पीछे हाजी चीखते चले गये मगर किसी ने इस बूढ़े की न सुनी। बीना कमरे मैं बन्द कर ली गई। हाजी जी अपनी बिनती अस्वीकार होने पर भी बाहर खड़े खड़े कह रहे थे।

"अल्लाह तौबा। अल्लाह तौबा। एक इन्सान एक इन्सान के साथ सिर्फ़ मज़हबो मिल्लत की आड़ लेकर इस तरह जुल्मो तशद्दुद करेगा तो यह दुनिया रहने के क़ाबिल ही न रहेगी।" इसीं बीच हाज़ी जी को बीना की चीख़ सुनाई दी, उन्होंने चुप होकर सुना–

"तुम्हारे हाथों में छुरे हैं। मार डालो दुष्टो। मैं जानती हूँ तुम जीवन नहीं दे सकते, बोटी बोटी क्यों करते हो? एक दम गला ही क्यों नहीं काट देते। हाय भगवान।

हाजी जी से यह हृदय विदारक शब्द न सुने गये। वह दरवाजे से हट गये और अपने मकान की तरफ़ चले आये। वह बुदबुदाते चले जा रहे थे।

'बेटी मैं तुझे इन दरिन्दों के हाथ से निजात न दिला सका। या अल्लाह ताला जिस चीख़ पुकार को सुनकर दरोदीवार लरज़ते हैं उस का असर इस इन्सान पर क्यों नहीं पड़ता ?" हर शब्द बोलने पर उनकी सफेद दाढ़ी हिल हिल जाती थी। वह अजीब परेशानी के आलम में घर के अन्दर चले गये।

सारे शहर में कर्फ्यू लग गया। हर जगह पुलिस ही पुलिस हो गई। एक दस्ता इधर से भी गुजरा जिधर बीना मुंह बन्द किये जाने पर भी बुरी तरह चीख़ रही थी। शंकालु सिपाहियों ने द्वार पर रुक कर टोह ली। वह भांप गये। किवाड़ें खटखटायीं। मगर नहीं खुलीं,इस पर शंका और पक्की हो गई। उन्होंने मिल कर किवाड़ें तोड़ दीं।

छुरों सहित रंगे हाथों क़ातिल पकड़ लिये गये और बीना को सम्भाल कर बाहर लाये मगर वह इतनी घायल हो चुकी थी कि अस्पताल ले जाना भी बेकार था। अन्तिम हिचकी सिपाहियों के सामने ली और उसकी आत्मा बलराम की आत्मा से जा मिली। लाश को बलराम की लाश के पास बाहर खड़े ट्रक में डाल दिया गया।

"तेल वाले"

जिस समय दो सिपाहियों के साथ दरोगा जी बैठक में दाखिल हुये, उस समय लखमी चन्द कुछ प्रियजनों से बात चीत कर रहे थे। पुलिस वालों को देखते ही सब लोग सकपका से गये और खड़े हो गये। "दरोग़ा जी नमस्ते।" लखमी चन्द के साथ साथ सभी के मुंह से निकला।

"ज़रा अपने योगेश को बुलाइये" छूटते ही दरोग़ा जी ने कहा।

"जो कुछ पूछना है, मुझ ही से पूछ लीजिए सरकार" घबरा के बोले।

'लाला जी, मैं जो कुछ कह रहा हूँ वह कीजिए। सारी ही बातों का जवाब आप नहीं दे पायेंगे। घबराइये नहीं; आप से पूछने की बातें भी हैं।" दरोग़ा जी की बात पूरी भी नहीं हो पाई थी कि योगेश अन्दर से निकल आया जैसे कछार से शेर।

"दरोग़ा जी नमस्कार।"

"नमस्कार बेटे। बैठो।" पास पड़ी कुर्सी पर बैठने का संकेत करते हुये उन्होंने आगे कहना शुरू किया– "देखो योगेश तुम से जो पूछा जाये वह सच सच बताना, झूट बोलना हानिकारक सिद्ध होगा।"

"बिलकुल सच सच बताऊँगा साहब। आप पूछिये जो पूछना है।"

"सरकार इस का दिमाग़ अभी ठीक नहीं है, कुछ ग़लत सलत भी कह सकता है।" लखमी चन्द ने बीच में टांग अड़ाई।

"इस का दिमाग़ तो ठीक है। मुझे दिमाग़ आप का ग़लत मालूम पड़ रहा है" आंखें तरेर कर दरोग़ा जी बोले। यह सुनते ही लाला जी मुर्झाई हुई मूली की तरह सिकुड़ गये। इसके बाद दरोग़ा जी ने फिर कहा "हाँ बेटे। बोलो तुम ने खुदकशी का इरादा क्यों किया ?"

"दरोग़ा जी मेरी आत्महत्या की कहानी यों शुरू होती है। मैं परसों टहलने को घर से निकला तो मैं ने टैक्सी स्टेण्ड पर लोगों की भीड़ देखी। इस भीड़ का कारण जानने के लिये उधर को मुड़ गया। पास जाकर देखा तो एक लाश टेक्सी से उतारी जा रही थी।" इतना कहते हुये योगेश को कुछ आहट हुई उसने पीछे भुड़ कर देखा तो माता जी पीछे खड़ी थीं। उसने उन्हें डांटते हुये कहा—"

"जाओ; अन्दर बैठो। यहां आने की कोई ज़रूरत नहीं हैं।"

यह सुनते ही बेचारी माँ अन्दर चली गई। योगेश ने बातों की जन्ज़ीर आगे बढ़ाई। दरोग़ा जी ने टेपरिकार्डर की सेंस्टिविटी ठीक की—

"लाश को नीम के पेड़ की जड़ में चबूतरे पर रख दिया गया। मैंने शम्मू को रोते हुए देखा।"

"यह कौन था ?" दरोग़ा जी ने पूछा।

"यह लाश उसके छोटे भाई प्रदीप ही की तो थी। यह मेरा सहपाठी था। मैं फिर टहलने न जाकर इस के अन्तिम संस्कार में शरीक हुआ। वहां जा कर पता चला कि प्रदीप की साइकिल में किसी ट्रक वाले ने पीछे से टक्कर मार दी थी; जिसके फलस्वरूप वह नीचे गिर गया और एक लोकल डाक्टर ने उसको गम्भीर हालत बता कर सिविल अस्पताल मुरादाबाद भेज दिया। उसका बड़ा भाई शम्भू एक टेक्सी स्टेण्ड गया वहां एक टेक्सी मिली भी तो उसके ड्राईवर ने केवल तीन मील का तेल बताकर जाने से इन्कार कर दिया। शम्भू ने इस विवशता को अधिक किराया मांगने का बहाना समझा, लेकिन बहस का समय नहीं था। वह हमारे पेट्रोल पम्प पर गया। वहाँ पिता जी ने 'पेट्रोल आउट आफ़ स्टाक' की तख्ती लगा रक्खी थी।

पास गांव में वह एक प्रधान के पास ट्रेक्टर लेने गया। प्रधान ने ट्रेक्टर फ़ौरन दे दिया परन्तु गांव तक जाने में भी कुछ देर लगी और यह धीमी चलने वाली मशीन है। अस्पताल पहुँचते २ उसकी हालत इतनी अधिक बिगड़ गई कि डाक्टर ने कहा—

"अगर एक घन्टे पहले आ जाता तो मैं इस को मरने नहीं देता लेकिन अब बचने की कोई उम्मीद नहीं है, कोशिश तो पूरी की जाएगी मगर बेकार ही जायेगी।"

डाक्टर के यह शब्द सबके दिलों के पार निकल गये। प्रदीप की जीभ कट गई थी। नाक से ख़ून निकल रहा था, पसीने में तर था। सांसें झटके से चल रहीं थीं। डाक्टरों ने अपना काम चालू कर दिया था मगर मौत भी अपना काम चालू कर चुकी थी। ग्लूकोज, ख़ून तथा आक्सीजन चढ़ते चढ़ते ही उसके प्राण पखेरू उड़ गये।

लाश का पोस्टमार्टम हुआ और एक टैक्सी से वापस घर ले आई गई। नसीब की बात है। जीवित को टैक्सी न मिली, मृत को टैक्सी मिल गई। यदि जीवित अवस्था में समय पर टैक्सी मिल जाती तो शायद वह बच सकता था। भगवान भी इन्सान की तरह अमल करता है। मुर्दे को जिस शान से लोग ले जाते हैं उस शान से जीवन में एक दिन भी रहने को नहीं मिलता।"

"फिर क्या हुआ योगेश ?" दरोगा जी ने अपने आशय की तह तक पहुँचने के लिये उससे कहा।

"यह बातें सुन कर मैं अपने घर चला आया और उसकी जान जाने का ज़िम्मेदार पिता जी की तेल चोरी से ब्लैक में बेचने की प्रवृत्ति को समझने लगा।" पास बैठे पिता जी की तरफ़ घृणित भाव से संकेत कर के कहा।

उन्होंने मुन्शियों को समझा रखा था कि वह इस भेद को प्रकट न होने दें। पेट्रोल का सौदा पिता जी स्वयं करते थे। इन्हें लाज़िम तो यह था कि यह किसी को अमरजेन्सी में पेट्रोल देने का आदेश तो मुन्शियों को दे ही देते। जब मैंने उनसे इस बारे में पूछा कि आपने ऐसा हुक्म क्यों नहीं दिया था, तो बोले तू बड़ा धर्मात्मा बनता है। तेरी तरह हम भी दयालु बन जायें तो रोटियों के भी लाले पड़ जायेंगे। उस की मौत आनी थी आ गई। कोई मरता है तो किसी से रुकता नहीं है। पेट्रोल न मिलने का तो एक बहाना है। डाक्टरों के पास कितनी दवायें होती हैं, जब मौत आती है तो वह भी मर जाते हैं।"

यह सुन कर मेरे दिल पर बड़ी चोट लगी और मैंने यह सोच लिया कि जिस तरह प्रदीप की मौत से उसके घर वालों को सदमा पहुँचा है उसी तरह इनको भी सदमा पहुँचना चाहिये, तभी यह पत्थर पिघलेंगे। मगर मैं तो बड़ा बदनसीब निकला कि इनको मुनाफ़ाख़ोरी ब्लैक मार्केटिंग और जमाख़ोरी की सज़ा न दे सका।"

"बिलकुल ठीक कहते हो योगेश" बयान से सन्तुष्ट हो कर दरोग़ा जी ने आगे कहा "तुम से युवकों की इस युग में बड़ी आवश्यकता है। तुम से ईमानदार लोग ही देश की काया पलट सकते हैं। मैं तुम्हारी शराफ़त, दयालुता, ईमानदारी, भलमनसाहत

और वीरता की क़द्र करता हूँ । लेकिन तुमने मां बाप के ग़लत कामों की अदालत को खबर न देकर आत्म हत्या की कोशिश की जो कानून की नज़र में एक जुर्म है, और इस जुर्म की सज़ा तुम्हें भुगतनी होगी'' कहते हुये उन्होंने हथकड़ियाँ आगे बढ़ा दीं । योगेश ने सहर्ष हाथ आगे बढ़ा दिये । यह देख कर लखमी चन्द ने तत्काल पांच हज़ार रुपये उनको पेश किए, परन्तु योगेश की मुक्ति की यह युक्ति फेल हो गयी । जब दरोग़ा जी ने यह कहा ''हथकड़ी देखते ही पांच हज़ार मिल रहे हैं तो हथकड़ी हाथों में डालने पर शायद यह रक़म दूनी हो जायेगी ।''

"सच्ची अदालत"

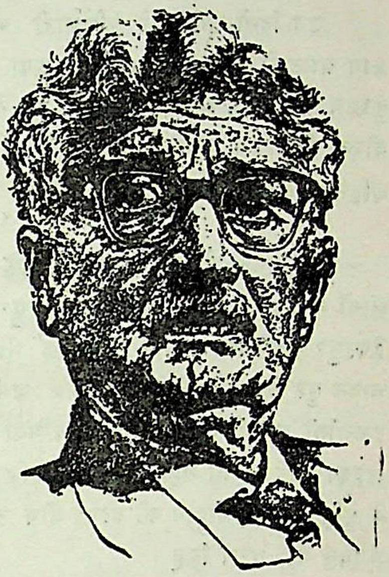

१८५७ के ग़दर (स्वतन्त्रता संग्राम) में अपनी जान पर खेल कर जमींदार हैदर बख्श खां ने कई अंग्रेजों की जानें बचाई थीं, जिस के उपलक्ष में उन को एक गांव इनाम में मिला था। कुछ दिनों बाद उन्होंने उस गांव का नाम अपने नाम पर रख दिया और इस तरह ग्राम तन सुखिया पुर हैदरपुर हो गया।"

इसी हैदरपुर में १९०२ में चन्दन नाम के एक धींवर ने रात के चार बजे अकेले ही ग्यारह डकैतों को मार डाला। डकैती डाल कर आये हुये डकैत रेलवे लाइन के किनारे एक खड्ड में छुपे पड़े थे। क्यों कि रेल गाड़ी आ रही थी उसके प्रकाश से बचने के लिए उन्होंने ऐसा किया था। रेलगाड़ी पास होते ही वे सब अपनी अपनी राह पर हो लेते।

चन्दन रेलवे चौकी पर फाटक खोलने बन्द करने पर मुलाज़िम था। हरी और लाल झण्डी दिखाया करता था। जब वह हरी लाइट दिखाने कोठरी से बाहर निकला तो उसने खड्ड में से धीरे धीरे आवाजें सुनी "बहादुर डकैत कायर चोरों की भांति छुपे पड़े हैं।"

इस पर दूसरे ने उत्तर दिया "वक़्त वक्त की बात है। गाड़ी न आती तो यहां क्यों छुपते।" यह बातें चन्दन ने खूब सुन लीं लेकिन छुपे पड़े डकैत यह न समझ सके कि उन की आवाज़ कोई ऊपर भी सुन रहा है। वैसे भी ऊपर वाले (राम) का ध्यान नहीं रहता है। यह सुनते ही चन्दन ने मन ही मन उन पर आक्रमण करने की योजना बना ली। जैसे ही गाड़ी पास हुई उसने पहले से सम्भाल कर रखा हुआ

भाला लेकर खड्डु में एकत्रित डकैतों के झुण्ड पर ऊपर ही से वार पर वार करने शुरू कर दिये। जो उठा उसी को गिरा दिया जो संभला उसी को पछाड़ दिया। अन्तत: सभी खेत रहे। जाड़े की रात थी फिर भी चन्दन को पसीना आ रहा था। अब उसने लैम्प उठाया और यह सोच कर रोशनी डाली कि कहीं कोई जीवित न रह गया हो जो इस समय छुप गया हो और फिर अवसर देख कर वार करदे। मगर देखने से पता चला कि उस क़ब्र में पूर्ण शान्ति थी जिसमें ग्यारह मुर्दे थे।

उन दिनों छोटे छोटे अधिकारी भी अंग्रेज होते थे। पी० डब्लू० आई० मिस्टर जान ब्रान्ट ने मौके का मुआइना किया। हर शव के पास से घातक हथियार और कुछ न कुछ माल बरामद किया। एक ने ग्यारह डकैतों को मार दिया। कमाल की वीरता दिखाई। अंग्रेज अधिकारी चकित हो गया। उसकी कमर ठोकी और इस अद्वितीय वीरता पर दो हज़ार पच्चीस रुपये चन्दन को पुरस्कार स्वरूप दिये गये।

इस घटना के बाद चन्दन इलाके का प्रसिद्ध व्यक्ति हो गया। यही नहीं गांव के लोगों ने मिल कर हैदरपुर का चन्दनपुर नाम रख दिया और इसको चन्दनपुर उर्फ़ हैदरपुर कहने लगे। होते होते उर्फ़ भी खत्म हो गया और सरकारी कागज़ों में भी चन्दन पुर लिखा जाने लगा। अब ज़मीदारी भी खत्म हो गई थी। उसी चन्दन की इकलौती लड़की थी देवनिया। देवनिया के दो ही लड़कियां हुई थीं नीता और अनीता। लड़का कोई था ही नहीं; दोनों लड़कियां अलग अलग गांव में ब्याही गईं थीं। नीता के पति के पास गोहान की बारह बीघे ज़मीन थी और चार बच्चों में केवल एक लड़का जीवित था, धरम सिंह।

अनीता के पास तेईस बीघे ज़मीन थी और चौदह बच्चों में उसके भी कुन्बे का नाम चलाने को एक ही लड़का जीवित बचा था, दुर्जन सिंह। दुर्जन सिंह का वातावरण ऐसा था कि वह शिक्षा नहीं पा सका लेकिन नीता एक ज़मीदार के घर बर्तन मांजने जाया करती थी। उसने वहां के माहौल से प्रभावित होकर अपने लड़के को पढ़ाया था। होते होते धर्मसिंह ने बी० ए० कर लिया। रईसों के रहने सहने के ढंग भीं उसमें आ गये थे। वह सुसंस्कृत और सभ्य हो गया था। ज़मीदार ने अपने प्रभाव से उस को बैंक में नौकर करा दिया था तथा एक शिक्षित माली की शिक्षिता लड़की से शादी भी करा दी थी, ख़ूब दान दहेज मिला और सुन्दर दुल्हन भी। उसकी सम्पन्नता रात दिन बढ़ने लगी।

दुर्जन एक ठेठ किसान और मछेरा बन कर ही रह गया था। उसमें सब बातें देहाती थीं। उसकी मां अनीता अपनी स्थिति से असन्तुष्ट थी और नीता की ख़ुशहाली से जलने लगी थी। वह मन ही मन कुढ़ती रहती थी। कभी क़भी अपने मन से

कहती 'मेरे पास तेईस बीघे ज़मीन है उसके पास केवल बारह बीघे ज़मीन है फिर भी उसकी हालत मुझ से अच्छी है। उसके लड़के की शादी भी सुन्दर वहू से हो गई और ढेर सारा दहेज़ भी मिल गया। लड़का बैंक में नौकर हो गया। भगवान हर तरह से उसके पौ बारह कर रहा है। चार आदमियों में इज्ज़त भी है।' इस प्रकार सोचते जब उसका जी दुखी हो जाता तो ख़ुद ही यह सोच कर शान्ति प्राप्त कर लेती कि 'ऐसी दौलत, इज्जत और तरक़्क़ी से भी क्या फ़ायदा जो आबरू देकर प्राप्त हो। जब कोई बात नहीं है तो ज़मींदार ने शादी क्यों कराई, शादी में अपनी कार क्यों भेजी, नौकरी क्यों लगवाई? इस ज़माने में कौन बे मतलब किसी का काम करता है। बरतन तो मलती ही है टांगें भी मलती होगी, खाक पड़े ऐसी तरक़्क़ी पर। लेकिन इतने पर भी उसका अन्तर बेचैन रहता शान्ति नहीं मिलती। इस घुटन और कुढ़न ने उसके चहरे पर बारह बजा दिये थे। फांसी का हुक्म सुनाने के बाद मुजरिम के उतरे हुये चहरे की भांति उसका चहरा दिखाई देने लगा था।

कुछ दिनों तक तो दुर्जन ने कुछ नहीं कहा, लेकिन बराबर बढ़ती हुई उदासी और सुस्ती उससे न देखी गई और एक दिन मछलियों में से छोटी बड़ी अलग करते हुये उसने मां से पूछ ही लिया "माता जी तुम को कोई तकलीफ़ रहती है क्या?"

"कोई तकलीफ नहीं है बेटा" असफल विद्यार्थी की भांति दुख छुपाते हुये बोली।

'माता जी गम्भीर लोग यों ही उत्तर दिया करते हैं मगर वास्तविकता छुपाने से नही छुपती है। आग लगती है तो धुआं अवश्य उठता है। तुम्हारी उदासी प्रकट करती है कि तुम को कोई न कोई तकलीफ़ ज़रूर है। पिता जी को माता के रोग से मरे हुए सालों बीत गये तब से अब तक तुम में कोई चिन्ताजनक परिवर्तन नहीं हुआ जो कुछ दिनों से देखने में आ रहा है।"

"तेरे व्याह न होने की चिन्ता है" भेद छुपाते हुये बोली।

:"इस चिन्ता में तो मेरी सेहत गिरनी चाहिए।"

"पगले" कहते हुए आन्तरिक भावों के सांपों को एक एक करके उसने बाहर निकालना शुरु किया "बेटा मैं रात दिन इस चिन्ता में रहती हूँ कि धर्मा (घृणा के कारण धरम सिंह का नाम बिगाड़ कर लेती है) से तेरी हालत कैसे अच्छी हो?"

यह कैसे हो सकता है माता जी। जो आगे निकल गया सो निकल गया।"

"अगर खरगोश को होश रहे तभी तो। तरक़्क़ी की मन्ज़िल पर पहुँच कर लोग अक्सर ग़ाफ़िल हो जाते हैं।"

"माता जी हसीन औरत का साथ, जमीदार का हाथ, बैंक की तन्ख्वाह गोहान की ज़मीन, बी० ए० की तालीम इन सब के होते हुये मैं उसकी बराबरी कैसे कर सकता हूँ।"

"यह मैं सब समझती हूँ फिर भी माली हालत में उससे आगे निकालूंगी।"

"क्या अला उद्दीन का चिराग़ हाथ लग गया है?"

"ननिहाल की सारी ज़मीन तेरे नाम कराऊँगी।"

"वह साठ वीघे ज़मीन मेरे नाम पर आकर मेरे पास तिरासी वीघे ज़मीन हो जायेगी यानी मैं तिरासी हज़ार रुपये की सम्पत्ति का मालिक हो जाऊँगा मगर यह होगा कैसे? नानी जी के होते हुए यह इकतरफ़ा फैसला कैसे हो जायेगा? वह दोतों नवासों को बराबर बरावर न बांटेंगी?" दुर्जन ने शंका व्यक्त की।

"इसी उधेड़ बुन में तो मैं दुबली हो रही हूँ। यह होगा और उसके जीते जी होगा। कुछ काम धन से होते हैं, कुछ बल से होते हैं और कुछ काम ऐसे होते हैं जो दोनों से नहीं होते वह अक़ल से होते हैं।"

"ज़रा मुझे भी तो सुनाओ कैसे होगा यह कश्मीर का मसला हल?"

"तहसील में तुम्हारी नानी को मुर्दा दिखा कर उसकी जायदाद तुम्हारे नाम चढ़वा दूंगी।"

"उसको मृत साबित कैसे कर दोगी" सड़ी हुई मछली को कुत्ते की तरफ़ फेंकते हुये दुर्जन ने कहा—

"प्रधान की जेब गरम करके उसकी मृत्यु का सार्टिफिकेट बनवा लूंगी। उसकी बिना पर पटवारी लिख देगा। पटवारी के लिखे पर कानूनगो लिख देगा और उसके आधार पर नाइब तहसीलदार लिख देंगे। इसके आधार पर तहसीलदार तो लिख ही देंगे। बस फिर क्या है। पांचों उंगली घी में समझो।"

"तुम्हारी युक्ति तो ठीक है परन्तु कोई शिकायत करके अदालत में देवनिया को खड़ा कर दे तो क्या होगा?" मछली को सिवार से अलग करते हुए कहा।

"इस का जवाब यह है, मैं अदालत को बताऊँगी कि मेरे पिता की रखैल है जो उन्होंने देवनिया के मरने के बाद रखली थी धर्मा रखैल का लड़का है। इस लिये इस को कोई हक़ नहीं पहुँचता।"

"तुम अपनी मां को अदालत के सामते ऐसे किस तरह कह पाओगी ?"

"लोग औलाद के भले के लिये न जाने कितने ग़लत काम करते हैं मैंने भी एक ग़लत काम कर लिया तो क्या हो गया ? एक झूट सौ बार बोलने पर सच हो जाता है।"

"सोच लो माता जी। काम जोखम का है। ग़लत काम को अदालत में सही सिद्ध करना मामूली बात नहीं है। इसके लिए दो गवाह भी दरकार होंगे, वह कहां से लाओगी ?"

"रुपये में बड़ी ताकत है। यही दो गवाह तैयार करेगा जो विरोधियों के मुंह पर चप्पन ढक देंगे। साठ हज़ार की जायदाद मिल रहीं है लग जाएँ दस पांच हज़ार तो क्या बात है ? मैं अदालत के तमाम लोगों को खरीद लूंगा। कोई काम मुश्किल वहां होता है जहां लोग रिश्वत नहीं लेते। घूसख़ोर अधिकारियों से काम होना मुश्किल नहीं होता है। नोटों से जेबें भरो और जो चाहों सो करो।

यह सुन कर दुर्जन को मां की स्कीम पर पूरा भरोसा हो गया कि ज़रूर वह कुछ कर के रहेगी। वह समझ गया कि उसके कथन में सत्यता है। लोग एक सिग्रेट, एक पान और एक चाय के प्याले में बिक जाते हैं। समय का स्पूतनिक आगे बढ़ता गया। दुर्जन ने भी खामोशी साध ली थी। अनीता ने जो सोच लिया था वही किया ओर ज़मीन दुर्जन सिंह के नाम चढ़वा दी। मुश्तहरी के नोटिस तक तामील नहीं होने दिये। सारा काम चुप चाप हो गया।

एक दिन देवनिया को गाय ने लात मारी और वह पीछे खूंटे पर गिर गई जिस से उसकी कमर की हड्डी टूट गई और उसको उठना बैठना मुश्किल हो गया। वह पड़ोसियों की कृपा पर जीने लगी। अब उसे जीवन से निराशा हो गई थी। सब पन हार कर उसने गांव के प्रधान को बुलाया। वह आ गया, बोला—

"चाची क्या बात है ?" (ग्रामीण सभ्यता में शहरी सभ्यता से बड़ा अन्तर होता है। यहां प्रत्येक से कुछ न कुछ रिश्ता नाता होता है। मेल मुहब्बत होती है। गांव के रिश्ते से उसने सम्बोधित किया।

"बेटा एक वकील को बुला दे। अब मेरा अन्तिम समय है। मैं अधिक नहीं जी सकूंगी।"

"तुम घबराती क्यों हो चाची ? तुम्हारे दो लड़कियां हैं। दो नवासे हैं। खूब सेवा करेंगे, इलाज करायेंगे। ठीक हो जाओगी हारी थकी बातें क्यों करती हो ?"

"नहीं बेटा अब के मैं बच नहीं सकती। इस लिए मैं चाहती हूँ कि अपनी जायदाद उन दोनों के नाम बराबर बांट दूँ ताकि मेरे बाद कोई झगड़ा न हो। ऐसा करने में मेरी आत्मा को शान्ति भी मिलेगी। तुम जानते हो जायदाद के पीछे बड़े ख़ून ख़राबे होते हैं। घर के घर तबाह हो जाते हैं।"

"ठीक कहती हो चाची मगर वकील को क्यों बुला रही हो।"

"वसीयत के लिए।"

"काहे की वसीयत करोगी चाची।" कहते हुये प्रधान ने गले में पड़े चांदी के खलाल से दांत में उलझी हुई छाली की किरच को निकालते हुये सारी कहानी सुना दी।

"यह सच है या मजाक़ कर रहे हो?"

"चाची मैं तुम से मजाक करूँगा। यह सच है बिलकुल सच है। तुम्हारी सारी जायदाद दुर्जन सिंह के नाम पर चढ़ गई है। तुम्हारे हाथ कट चुके हैं अब तुम कुछ नहीं कर सकतीं।"

"हे भगवान यह क्या हुआ? मेरे जीवित होते हुये अनीता ने मुझे मृत सिद्ध कर दिया और सारी जायदाद हड़प ली। मुझे हवा तक नहीं आने दी। यह कैसा इन्साफ़ है? कैसा कानून है? कैसी अदालत है? सब झूठे हो गये क्या? भगवान की अदालत भी झूठी हो गई? अब इन्साफ़ को कहां जाऊँ। यह सब रिश्वत का करिश्मा है। कोई बात नहीं। मेरी आत्मा को सताने वाला भी सुख नहीं पा सकेगा। दुर्जन को यह जायदाद लेनी नहीं होगी। अन्याय अन्याय ही होता है। यह कभी फलता नहीं है। अब तुम नीता और धरम सिंह को बुलवा दो" आंखों से आँसू पूंछते हुए देवनिया ने कहा।

"बहुत अच्छा चाची। अभी लो" कहते हुये प्रधान चले गये और एक नाई को भेज कर उनको खबर कर दी। जमींदार की कार में बैठ कर नीता, धरम सिंह और उसकी दुल्हन आ गये। जिस समय वे तीनों वहां पहुंचे देवनिया की आंखें रोते रोते सुर्ख हो गई थीं और सूज गई थीं। सब ने देवनिया के पैर छुये। उसने आशीर्वाद दिया।

"अम्मा जी तुम कब से बीमार हो? क्या हो गया? हमें ख़बर तक नहीं की" नीता ने कहा।

'बेटी मेरी कमर टूट गई है।"

"कैसे ?" सिर पर हाथ फेरते हुये नीता ने पूछा ।

"भगवान की बेइन्साफ़ी से ।"

"भगवान की बेइन्साफ़ी से और तुम्हारी कमर टूट गई ? मैं समझी नहीं" नीता ने चकित होकर कहा, मां ने रहस्य अन्धेरे में रखा। नाई ने भी वहां जाकर कुछ नहीं कहा था। देवनिया चुपचाप लेटी रही। नीता ने फिर कहा "तुम को तकलीफ़ हो गई थी तो मेरे यहां चली आतीं, यहीं क्यों पड़ी रहीं। हमारे होते हुये तुम इतना कष्ट उठाओ तो धिक्कार है हमारे जीवन को। तुमने ऐसा करके लोगों को यह कहने का मौक़ा दे दिया कि मां बाप की सेवा लड़के के अलावा कोई नहीं कर सकता।"

"नहीं बेटी तुझ पर तो कोई उंगली भी नहीं उठा सकता, तू तो मेरा ख़याल हमेशा से रखती आई है। कई बार पहले भी अपने घर ले जाने को कहा था। मैं ही नहीं गई थी। तेरी क्या कमी है। तेरे घर मेरा रहना कोई अच्छा लगता है ? तू धी मैं मां। दामाद के घर सास का रहना पाप में डूबना है बेटी।"

अम्मा जी दुनिया बहुत आगे निकल गई है। अब पुरानी बातों को मानना ठीक नहीं समझा जाता।"

"दुनिया कितनी ही आगे निकल जाये बेटी लेकिन कुछ बातें ऐसी हैं जिन को हर ज़माना अपनायेगा। अच्छे जीवन का आधार कुछ पुरानी बातें ही हैं। पुराने सन्तों के बनाये हुए सामाजिक नियम अनमोल रत्न हैं और रत्नों की सब क़दर करते हैं। तुम लोग नये युग में क़दम रख रहे हो, नवीनता अपनाओ। हम तो पुराने आदमी हैं पुरानी बातों को नहीं छोड़ सकते।" कमर की असाध्य पीड़ा को सहन करते हुए देवनिया ने कहा।"

"नहीं माता जी। पुरानी बातों की हम भी इज़्ज़त करते हैं और उनको अपनाते भी हैं।"

"अच्छा है बेटी। देखो मेरे पास बैठो और जिस लिये तुम्हें यहां बुलाया है सुनो" कहते हुए देवनिया ने अनीता की अनीति की पूरी राम कहानी तीनों को सुनाई और फिर अन्त में बोली "मेरे बाप मरते समय मुझे चांदी के दो हज़ार पच्चीस रुपये दे गये हैं। बड़े सम्भाल के रखे हैं। एक भी खर्च नहीं किया है। दूध की बड़ोसी के नीचे दबे हुए हैं खोद कर निकाल लो। मैं चाहती थी कि दोनों को बराबर बराबर बांट दूंगी मगर अब उससे मेरा मन फट गया है अब उसे एक भी नहीं दूंगी।"

"माता जी यह अच्छा नहीं होगा तुम दुर्जन और अनीता को भी बुला लो और आधा आधा हम दोनों को बांट दो; उनकी चालाकी और मक्कारी उनके आगे आयेगी तुम बदले की भावना का त्याग कर दो भगवान की अदालत पर विश्वास करो वह सब का इन्साफ़ करता है।

"उसने सारी जायदाद ले ली तुम को सारी दौलत दे रही हूँ बुरा क्या कर रही हूँ।"

"उसने बेईमानी से ज़मीन ली है मैं बेईमानी से रुपया ले लूँ कानून की निगाह में हम तुम दोनों ग़लत हुये।" यह सुनकर देवनिया कुछ सोचती रही और अन्त में बोली—

'तेरी ही बात बड़ी सही। उन दोनों को भी बुलाती हूँ।" सामने खड़े कल्लू नाई के हाथ दोनों को बुलावा भेजा। मगर अनीता नहीं आई क्यों कि वह सब के सामने आने लायक ही नहीं थी। वह यहां कैसे मुंह दिखाती? जिस मां को रखैल बता चुकी थी उसके सामने जाती भी कैसे? दुर्जन को और उसकी रक्षा के लिए एक बदमाश को साथ भेज दिया जिसने मुक़द्दमे के दिनों में उनकी मदद की थी। दुर्जन और धरम को पास बिठा कर देवनिया ने कहा—

"यह रुपये तुम दोनों के हैं, यही मेरे जीवन भर की जमा पूँजी है। दोनों आधी आधी बांट लो।" अनीता की काली कर्तूत पर कोई भी संकेत किये बिना देवनिया ने कहा—

"गिनने का काम दुर्जन करेगा मैं नहीं!" धरम सिंह ने कहा

"नहीं। यह काम मैं भी नहीं करूँगा" दुर्जन ने शिष्टता से कहा

"तुम दोनों नहीं करोगे। अच्छा! कल्लू तू मोहम्मदी भटियारन को बुला ला। वह इस गांव में सबसे अधिक गरीब है। इस काम को वही ठीक करेगी।"

"बैंक का काम भटियारन को दे रही हो" कल्लू ने व्यंग किया।

"हां बेटा" गम्भीरता से बुढ़िया ने आगे कहा "ईमान और धर्म ग़रीब ही के पास रहता है।" यह सुन कर सभी चुप हो गये जैसे अंग्रेजी बोलने वाले के सामने हिन्दी भाषी। भटियारन अ.ई, रुपये गिनने लगी। उसने बीस बीस रुपयों की ढेरियां तरतीब से लगानीं शुरू कर दीं। दो हज़ार पच्चीस गिन दिये।

"धर्म सिंह" देवनिया ने आवाज़ दी।

'हां नानी जी।"

"इस में से पच्चीस रुपये उठा कर मुझे दे दे" यह सुन कर नाई, भटियारन और पास खड़ा बदमाश तीनों ही चौंके। उसने इशारे से बहू को बुलाया उसके सिर पर घुमा कर निछावर करके भटियारन को दे दिये। " ले बेटी मेरे हंसों के इस छोड़े को दुआ देती हुई घर को जाना।"

भटियारन ने खुश खुश दामन फैला कर रुपये ले लिये और यों कहती हुई चली गई।" बिस्मिल्लाह रहमानुरंहीम। सुहाग बना रहे। दूधों नहाओ पूतों फलो इज़्ज़त बढ़े, रुतवा बढ़े। आमीन।"

"नानी जी दुर्जन का व्याह नहीं हुआ है तो इन में से आधे रुहये दुर्जन के ऊपर निछावर करती आधे बहू के ऊपर। तुम ने एक ही के ऊपर निछावर करके बेइन्साफी की है। पक्षपात बरता है" धरम सिंह ने कहा—

"वेटे दुर्जन और उसकी मां को जायदाद चाहिए, रुपये चाहिए, दुआ नहीं" कहते कहते वुढ़िया को ज़ोर का फन्दा लगा। वह ज़ोर २ से खांसने लगी। दुर्जन बहुत गम्भीर मुद्रा में कुछ चिन्तन कर रहा था। "दुर्जन आधे रुपये उठा और जा रात होने को है।" यह सुनते ही वह चौंका और झोले में दस सेर चांदी (एक हज़ार रुपये) भर ली और साथी के साथ चला गया। इसके बाद नानी ने फिर कहा–

"इस कमीज में एक नोट है निकाल दे" सुनते ही धरम सिंह ने खूंटी पर टंगी कमीज की जेब से पचास का नोट निकाल कर वुढ़िया की तरफ़ बढ़ाया—

"क्या करोगी इस का ?"

"इस नाई ने मेरी बड़ी सेवा की है इस को खाली हाथ थोड़े ही जाने देना है।" यह सुनते ही धरम सिंह ने नोट पीछे खींच लिया और उसी जेब में डाल दिया एवं अपनी ढेरी में से पच्चीस रुपये उठा कर नानी की निछावर कर नाई को दे दिये। वह बहुतेरी कहती रही। "यह क्या कर रहा है। यह क्या कर रहा है।" धरम सिंह कहता रहा "ऐसी नानी किसी को भी नसीव नहीं होगी। उस की निछावर कर रहा हूँ, ताकि इसकी दुआओं से तुम ठीक हो जाओ।"

नाई ने रुपये रूमाल में बांधते हुये सिर झुकाया और कहा "महाराजा हो या नवाब नाई के आगे सब ने सिर झुकाया है। ऐसे भी लोग हुये हैं जिन्होंने खुदा के आगे भी सिर नहीं झुकाया, मगर नाई के आगे सिर नहीं झुकाया हो ऐसा कोई नहीं हुआ। आज वह हस्ती आप सब के आगे अदब से सिर झुका कर बड़प्पन को दुआ

देती है। अल्लाह करे आप लोग खुशहाल रहें" नाई की बात सुनते ही सब हंस पड़े। वह चला गया एक अजीब खुशी के साथ।

"नानी जी अब आप को हम अपने साथ ले चलेंगे और आप का इलाज करायेंगे।"

"किस का इलाज करायेगा बेटा। मेरी कमर की हड्डी टूट गई है, गाय ने लात मार दी थी। लोग कहते हैं रीढ़ की हड्डी टूटने पर उस का कोई इलाज नहीं होता है।" यह सुनते ही नीता रोने लगी उसकी समझ में अब आया कि ईश्वर की बेइन्साफी से कैसे कमर टूटी थी।

धरम सिह ने बहू से रुपये उठाने का संकेत किया और बोला—

"इस बारे में गांव के लोगों की राय क्यों सही मानती हो डाक्टर कहें तो ठीक है।" यों कह कर धरम सिंह जमीदार की बाहर खड़ी हुई कार के ड्राइवर को बुलाने चला गया। सब ने मिल कर कार तक ले चलने को देवनिया की चारपाई उठाई। उसी समय हांपता हुआ नाई आया और बोला "बाबू जी गज़ब हो गया। दुर्जन के साथी ने उसका वध कर दिया और रुपये लेकर भाग गया।"

"तू उलटा कह रहा है ठीक तो अब हुआ है। गजब उस रोज़ हुआ था जिस दिन उसकी मां ने काग़ज की धरती पे मेरा क़तल किया था।"

* * *

" चोट "

रिटायर्ड जज श्री पी० एल० मलहोत्रा की पत्नी उनसे कह रही थीं-

"क्यों जी, पब्लिक लाठी चलाये तो फ़ौजदारी कहलाती है और सिपाही लाठी चलाये तो लाठी चार्ज। एक ही काम है मगर एक मुर्जरिम बना एक मुन्तज़िम । ऐसा क्यों होता है ?"

सिपाही हिन्सक लोगों को तित्तर वित्तर करने की नियत से लाठी चलाता है। वह किसी के ऐसी जगह लाठी नहीं मारता जो उस की मृत्यु हो जाए या घातक चोट लग जाये जब कि पब्लिकमैंन लाठी चलाता ही इस लिए है कि ऐसी लाठी लगे जो प्रतिद्वन्द्वी का दम निकल जाये । इसी लिये एक मुजरिम और दूसरा मुन्ताज़िम है ।"

'इस का मतलब यह है कि आप का क़ानून शान्ति स्थापित करने के लिये लाठी का ग़लत उपयोग भी सही क़रार देकर उसे उपयुक्त ठहराता है । अर्थात् शान्ति के लिये हथियार यानी बल की आवश्यकता है ।"

"बिलकुल ज़रूरत है, विना वल के शान्ति स्थापित ही नहीं हो सकती ।"

"महाराजा अशोक ने तो हथियार ताक़ पर रख़ कर भी शानदार राज्य किया और पूर्ण शान्ति रखी थी । उस से वड़ा राजा तो आज तक भारत में कोई नहीं हुआ है ।"

"तुम्हारे कहने का मतलव क्या है ?"

"मेरा मतलब पूछते हैं आप । मेरा बस चलता तो लाठी बनाने वाले को फांसी और लाठी चलाने वाले को आजीवन कारावास की सजा देती ।"

महरोत्रा जी ने यह सुन कर सिग्रेट हाथ से ऐश ट्रे पर रख़ दी और कुछ सोचने लगे । उनके चुप पर पत्नी ने फिर कहा-

"क्या मेरी बात ग़लत है, क़नून के ख़िलाफ़ है, मानव और जगत-शान्ति के लिये घातक है ?"

"नहीं श्रीमती जी, तुम बिलकुल सही कह रही हो, मैं सोच यह रहा था कि यदि सारी दुनिया एक झण्डे के नीचे आ जाये और तुम जैसी स्त्री इस झण्डे की मलिका हो जाये तो सन्सार में इन्सान के ख़ून की एक बूँद भी न बहे। मगर पता नहीं कि ईश्वर ऐसे आदमियों को ऐसे सुन्दर भावों से परिपूर्ण करता है तो उनको अमल में लाने की शक्ति क्यों नहीं देता।" यह कहते ही बिजली चली गई और दोनों कमरे से बाहर छज्जे पर निकल आये। पत्नी की नज़र बाहर गेट पर गई। वहां कोई स्त्री थमले पर कुछ कर रही थी वह बोली—

"मसीत देखना यह कौन औरत है जो गैट पर रोड़ें से खुरच रही है।"

मसीत जो उनके चमन का मुलाजिम था गेट पर गया, देखा, वह स्त्री अभी तक लिखे ही चली जा रही थी। "क्या लिख रही है ?" सोचते हुये उसने उधर झाँका। थमले पर ऊपर से नीचे तक राजीव ही राजीव लिखा हुआ था।

"यह तो हमारे मालिक के लड़के का नाम है। और यह एक पागल औरत है, यह उस का नाम कैसे जानती है फिर यह उसी का मकान है इसका उसको इल्म कैसे हो गया, मसीत यह सोचने में व्यस्त था कि बहू जी ने ऊपर से फिर आवाज दी-

"कौन है ? क्या कर रही है ?"

"मालकिन पागल है और ईट से गाढ़ गाढ़ कर आपके लड़के का नाम लिखे जा रही है।"

'मालकिन पागल है, सुना क्या कहा मसीत ने। कहना चाहिए था पागल है मालकिन" जज साहब ने धीरे से बहू के कान में कहा।

"अनपढ़ है, वह शब्दों के सही प्रयोग को क्या जाने, लेकिन उसका भाव वही है जो आपके सन्शोधित शब्द का है। "भगा दे इसे" बहू जी ने ज़ोर से कहा अब उसने स्वतः ही लिखना बन्द कर दिया था। वही रोड़ा मसीत पर मारने को बढ़ी; पल भर की देर भी उसके लिये घातक सिद्ध हो सकती थी मसीत बड़ी फुर्ती से सिर झुका कर बच गया जैसे नर्म पौदे तूफ़ान में सिर झुका झुका कर सलामत बच जाते हैं। मसीत ने खुद को बचा कर हाथ में लगी लाठी कस के पीछे से मारी। वह चीख़ती हुई भाग गई। उस की चीख़ सुनकर रात की चौकीदारी की ड्यूटी पर जाने की तैयारी करता हुआ भौपत अन्दर से बाहर निकल आया। "क्या हुआ" उसके मुंह से निकला और नज़र बाहर सड़क पर चोट खायी हुई भागती पगली पर पड़ी। पल

भर को हिक़ारत से होट विचूरे, तभी उसका मूड बदला और उसने मसीत से पूछा "क्यों भई तुम ने उसके लाठी मार दी ?"

"और क्या उसको प्यार करता। देखता नहीं खुरच खुरच कर थमले का नाश मार दिया। मना किया तो रोड़ा लेकर मुझ पर झपटी। लाठी नहीं मारता तो मेरा सिर फोड़ देती।"

"अपना सिर बचाने के लिए उस बेचारी के लाठी मारना ही जरूरी था क्या ? तू कोई पुलिसमैंन है जो तुझे लाठी चार्ज करने का हक है। उसे भगाने का दूसरा तरीक़ा भी तो हो सकता था बेवकूफ़।"

"क्या तेरी कुछ लगती है जो उसकी इतनी तरफ़दारी कर रहा है ?

'एक यही क्या दुनिया का हर इन्सान हर इसान का कुछ न कुछ लगता है मसीत।" कहते हुए भोपत ने दस्ताने बिना उतारे ही मसीत के हाथ से डन्डा छीन लिया जिस पर पीतल की साम और खूमर मंढ़ी हुई थी और खूमर पर मसीत का नाम भी खुदा हुआ था। वह डन्डा लेकर उस पगली के पीछे भागा। सब लोग जहां के तहां खड़े उसे देखते रहे। मसीत अभी तक यही सोच रहा था कि जिस औरत को पीटने पर मुझे डांट रहा था उसे मारने खुद क्यों भागा जा रहा है ? भोपत ने पीछे से उसको अंक में भर कर रिक्शे पर बिटा लिया।

"कहां ले जा रहा है इसे ?" रेलिंग पकड़े हुये छज्जे पर से बहू जी ने पूछा

"उसकी हालत पर तरस आ गया मालूम होता है या तो कहीं दूर छोड़ के आयेगा या बरेली पागलखाने में भरती करने गया है" मसीत ने उत्तर दिया।

"जाने दो। आ जायगा। तुम थमले पर लिखा साफ़ कर दो।" यह सुन कर वह कुछ सोचने लगा। उसके सुस्त होने पर बहू जी ने फिर कहा—

"क्या सोच रहे हो ? मिटा क्यों नहीं देते ?"

"मालकिन मैं सोच यह रहा हूँ कि इस कोठी के मालिक का नाम उसके गेट पर से कैसे मिटा दूँ। आपका हुक्म मानूँ या दिल की बात रखूं।"

"मसीत उसने हमारे लड़के का नाम कैसे लिख दिया ? क्या जवान थी या बूढ़ी ?" गहराई तक सोचते हुए पूछा।

"अधेड़ थी।" मसीत उसके सवाल की तह को पहुँचते हुए बोला। वह चुप

चाप खड़ी थी। विचारमग्न। मसीत ने उसकी विचारशील मुद्रा को छिन्न भिन्न करते हुए पूछा "हां या ना कुछ तो कहिए। मिटा दूं।"

"लिखा रहने दो।"

"बहुत अच्छा" मसीत ने हथेलियां मलते हुये उत्तर दिया। वह ऐसे खड़ा था जैसे वह पगली को मार कर पछता रहा था एक क्रोधी मां की तरह।

भौपत उसको लेकर घर पहुँचा तो उस का दस साल का राजीव लड़का तख्ती लिख रहा था। वह इसको देखते ही घबरा कर खड़ा हो गया और बोला–

"पापा जिस मम्मी ने तुम पर कुल्हाड़ी तान ली थी और तुम बाल बाल बच गये थे, आज उसी को फिर क्यों ले आये। इसको घर से बाहर निकाल दिया था। तो फिर यहां लाने की क्या ज़रूरत थी? पहले की तरह यह फिर मेरा गला घोंट सकती है। अरहर की दाल में गोबर मिला सकती है। तकिये में जलती हुई छेपट सरका सकती है। बकरी के मुंह में कोयले ठूंस सकती हैं।"

"बेटा अब मैं तेरी मम्मी का इलाज कराऊँगा। यह ठीक हो जायेगी। मुझे उन बातों का कोई मलाल नहीं हैं, कोई ख़याल नहीं हैं, कोई ख़याल नहीं है। जब इस का दिमाग अच्छा था तो यह मेरे लिये जान देती थी। जरा सिर में दर्द हो जाता था तो सारी रात सिरहाने बैंठी बैंठी सिर दबाती रहती थी। मेरे कहने पर भी नहीं सोती थी। यदि पागल होने पर कुल्हाड़ी तान ली या कुछ और ग़लत काम कर दिया तो उसकी खता ही क्या है।" उसे कमरे में अन्दर करके आगे से कुन्डी लगाते हुये भौपत ने कहा।

"इलाज तो पहले भी करा सकते थे पापा जी।"

"उस समय मेरे पास रुपये नहीं थे बेटा।"

"अब कहां से आ गये?"

"कई महीने का वेतन एक साथ मिल गया है।" दोनों हाथों के दस्ताने ठीक करते हुए मसीत की लाठी कसके पकड़ते हुए भौपत ने कहा "जब तक मैं नहीं आऊँ तुम इस की कुन्डी मत खोलना।"

"नहीं खोलूंगा। मगर आप रात में कहां जा रहे हैं?"

"मन्दिर में। भगवान से इसको ठीक करने की प्रार्थना करने।"

"क्या भगवान मन्दिर ही में की गई प्रार्थना को मानता है ?"

"हां बेटा" कहता हुआ वह चला गया। लड़के ने आज उस की बातचीत में कुछ रूखापन देख कर अधिक बहस नहीं की। उसकी आकृति भयानक थी, वह तरह तरह की बातें सोचता रहा। तरह तरह के सवाल ढालता रहा। मगर उसके मन ने सब शंकाओं का एक ही जवाब दे दिया "पगली मम्मी से दुखी हैं।"

भौपत श्री बसन्त लाल बन्सल के पेट्रोल पम्प के पास एक नाले के किनारे जा बैठा और चिलम भरने के लिए कूड़ा इकट्ठा करके आग सुलगाने लगा। यह उसके समय बिताने का एक खासा बहाना था। इसी रास्ते से बन्सल जी पूरे दिन की बिक्री घर ले जाया करते थे। उनका मकान पम्प के पास ही था। इसी लिये आज तक कोई घटना नहीं घटी थी और निश्चिन्तता से बिना किसी प्रबन्ध के वे चले जाते थे। आज भी जैसे ही वह कैश लेकर इधर से गुज़रे भौपत ने पीछे से लाठी मारी। वह कैश लूटना तो चाहता था लेकिन उनका वध कर के नहीं बल्कि चोट पहुँचा कर। इस भाव ने उसके लाठी उठाते ही चौंकाया और उसके हाथ कांप गये इस लिए लाठी सिर पर न पड़ कर कन्धे पर पड़ी और वह नीचे गिर गये। हड्डी टूट गई, खून की धार बह निकली। वह लाठी वहीं डाल कर और नौ हजार दो सौ ग्यारह रुपये लेकर नौ दो ग्यारह हो गया।

जान बचाने की भावना ने यह रंग दिखाया कि उन्होंने होश में आकर भौपत की नामज़द रिपोर्ट दर्ज करा दी। अगर यही चोट सिर में लगी होती तो इसका सवाल ही नहीं उठता और दम निकल जाता।

भोपत घर आया। लड़का उसकी बाट जोह रहा था। तीनों यहाँ से चल कर शाम की गाड़ी से बरेली मेन्टल अस्पताल पहुँच गये। अब भौपत के पास इलाज के लिए काफ़ी रुपया था। उसने बिलकुल ही ठीक कराके घर जाने का संकल्प कर लिया था।

मल्होत्रा जी के यहां लगातार कई दिन तक इसकी गैरहाज़िरी से सब की परेशानी बढ़ गई थी। मसीत दिन का काम भी करता था और रात की चौकीदारी भी। जब भौपत का कोई पता नहीं चला तो बहू जी ने मसीत को उसके घर पूछ-ताछ के लिये भेजा।

मसीत जब घर पहुँचा तो आगे ताला लगा पाया और बाहर दीवार पर राजीव ही राजीव लिखा हुआ था। बिलकुल उसी तरह जैसे जज साहब के थमले पर लिखा था। सब कुछ देख भाल कर मसीत घर लौट गया।

इधर भौपत की नामज़द रिपोर्ट दर्ज होने के कारण थाने वाले ढूंढने में लग गये थे मगर लाठी की खूमर पर मसीत का नाम अंकित था इस लिये मसीत की खोज बीन शुरू हो गई। भौपत था नहीं इस लिये उसकी तरफ से पुलिस कुछ सुस्त हो गई। खोजते खोजते पता चला कि भौपत और मसीत दोनों ही जज साहब की कोठी में मुलाजिम हैं। पुलिस बहां जाकर मसीत को पकड़ लाई और लाठी पर अंकित उंगलियों के निशान मसीत की उंगलियों से मिल गये। अब दो सुबूत ऐसे पक्के पुलिस को मिल गये कि मसीत की गिरफ़्तारी करने में कोई हिचक नहीं रही। जज साहब ने उसको ज़मानत पर रिहा करा लिया और मुक़ददमा चालू हो गया। नामज़द रिपोर्ट गलत सिद्ध हुई और भौपत का पीछा छूट गया।

इलाज कराके भौपत पन्द्रह दिन में बरेली से घर लौटा। जज साहब सहन में बैठे सबसे बातें कर रहे थे। सुबह का समय था। एक दम गेट पर किसी ने घन्टी बजाई, रिक्शा रुकी और भौपत, उसकी पत्नी तथा लड़का नीचे उतरे। मसीत देखते ही उछल पड़ा।

"भौपत आ गया।"

जज साहब की पीठ गेट की तरफ़ थी इस लिए वह पहले न देख सके "कहां से आ रहे हो भाई जान। कहीं जाया करो तो कह तो दिया करो। यहां सब तुम्हारी चिन्ता कर रहे थे। यह कौन है?"

"वही जिसके तुमने लाठी मारी थी।"

"यह···तुम्हारी···बहू···है।"

"जी यह मेरी बहू है।"

"मुबारक हो। मैंने बहुत बड़ा गुनाह किया। ख़ुदा मुझको मुआफ़ कर दे। वैसे ख़ुदा ने मुझे इस बेगुनाह औरत पर हाथ उठाने की सज़ा दे भी दी है। अब तक तो मैं बेगुनाही में फंसा समझ रहा था लेकिन खयाल आया कि ठीक फंसा हूं। वह इन्साफ करता है। क्या यह तुम्हारा लड़का है?"

"यह तो ज़ाहिर है।"

"मुबारक हो। क्या नाम है बेटे तुम्हारा।"

"राजीव"

"राऽजीऽव, अरे वाह वेटे आज खुला उसका राज़" बहू जी की तरफ़ संकेत करते हुए मसीत ने कहा "यह पागल कव से थी ?"

"दोस्त यह मेरी ही वजह से पागल हुई थीं। मुझ में कुछ ऐब थे। चार आदमियों के सामने खोलने की वात नहीं है। यह टोका करती थी। झुंझलाया करती थी। मगर मैंने उन ऐवों को छोड़ा नहीं। यह नाज़ुक मिज़ाज औरत थी, दिन रात की घुटन ने इस के दिमाग़ पर ग़लत असर कर दिया और पागल हो गई।

तुम्हारी लाठी का शुक्रिया अदा करता हूँ, उसी के तुफ़ैल आज यह अच्छी खासी खड़ी है। अब मैं भगवान की कसम खाकर कहता हूं कि कोई भी ऐव नहीं करूँगा, यह जैसे कहेगी वैसे ही करूँगा। तुमने मेरा उजड़ा हुआ घर वसा दिया।"

"कैसे ?"

"बताने की ज़रूरत ही क्या है।"

"मगर तुमने मेरा वसा बसाया घर उजाड़ दिया।"

"कैसे ?"

"वताने की ज़रूरत ही क्या है ?"

■ ■